जनज्ञान [मासिक]

चैत्र २०४१ अप्रैल १९८४

प्रं

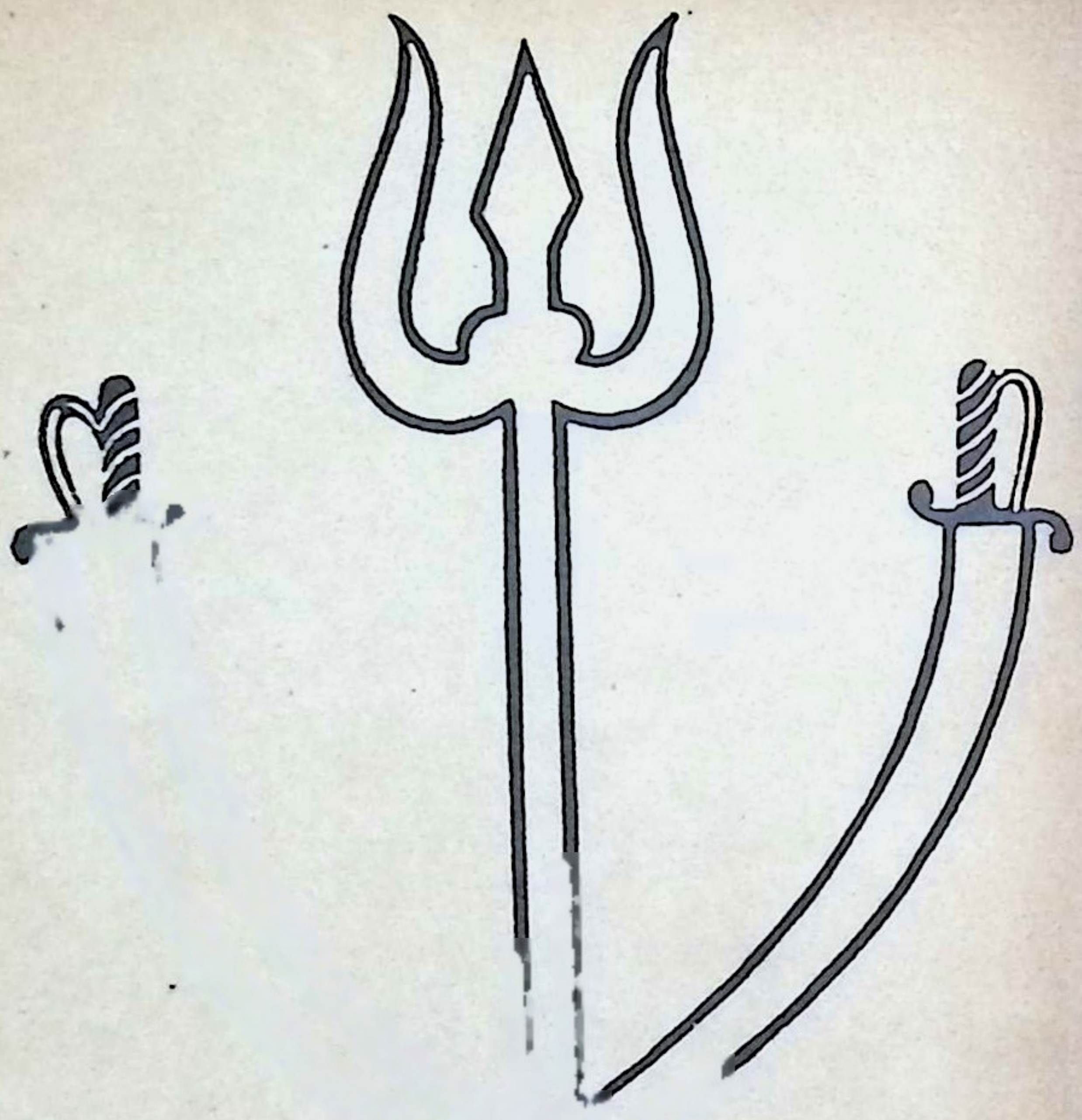

उत्तिष्ठ युद्धाय कृत निश्चय

—भगवान श्री कृष्ण

यह प्रतीक चिन्ह है हिन्दू रक्षा समिति का ।
इस में हमारा लक्ष्य बोलता है । इसे ही मोहर
के रूप में प्रयोग करें ।

वेदभिक्ष :

हिन्दू राज्य स्थापना हेतु संघर्ष करो ।

संस्थापक
स्वर्गीय महात्मा वेदभिक्षु:
सम्पादक : **राकेशरानी**

१५६७, हरध्यानसिंह मार्ग,
करौलबाग, नई दिल्ली-५
दूरभाष : ५६२६३९
५६४७४१
८०१२११

वार्षिक मूल्य : ३० रुपए
विदेश में : विमान से ४५ पौंड,
६५ डालर
समुद्री डाक से ४ पौंड, ६ डालर

आजीवन : ५०१ रुपए
विदेश में : १००१)
यह प्रति : तीन रुपये

चैत्र संवत् २०४१
अप्रैल १९८४ : वर्ष १६, अंक १

प्रभु से प्रार्थना

प्रभु, निरन्तर भटकते हुए प्रगाढ़ अन्धकार में तुम्हारी ज्योति को निरख अन्तस् आह्लाद पाता है। नित्य कर्म करते, सोचते हुए हम कुछ पाना चाहते हैं। पाकर, ऊंचे उठ कर, स्वप्न-सी भावनाओं को सत्यतः प्रत्यक्ष कर हम आनन्द सागर की लहरों से अठखेलियां करना चाहते हैं। हे अविनाशी ! सत-रूप विभो ! चिर अनन्त की प्रतीक्षा में विश्व-उदधि के तीर पर बैठकर नियमित चक्र की सीमा का अवगुंठन खोल प्रिय ! हम चाहते हैं, तेरी नित्य प्रवाहित शाश्वत मधुर वीणा की संकृतियों का श्रवण ।

व्याकुल, त्रस्त धरती के स्वामी ! तुम्हारी छटा प्रभासित हो, तुम्हारा उज्ज्वल अजस्र स्रोत दिग्-दिगन्त में फैले और शांति की मधुर मंदाकिनी बन कर पीड़ा की ये भावनाएं अतीत की वस्तु बनकर रह जाएं।

आप सर्वशक्तिनियन्ता दिव्य गुणों के धाम हैं ।। चराचर को भी कीजिए प्रदान अपनी सम्पूर्ण अनुभूतियां। हम संसृति की थिरकती स्वर लहरी से प्रिय ! आप से यही तो कह रहे हैं कि आप हमारे मनमन्दिर में पधारें। पधार कर हमारी सारी कालिमा धो दें। सारे पाप बहा दें, सारी पीड़ा हटा दें और प्रकृति की मधुर चितवन से हम प्रभु ! तुम्हें खोजते हुए, तुम्हीं में लीन होकर, तुम को पा लें। यही हमारी चाह है।

—राकेशरानी

इस अंक में पढ़िए

अलगाव की प्रवृत्तियों का विस्तार और हमारा संकल्प (सम्पादकीय)		३
जीने की बात करो (महात्मा वेदभिक्षु : की अमर वाणी)		६
वेदभिक्षु : जी का निधन मेरी व्यक्तिगत क्षति है—जगजीवनराम		११
महात्मा वेदभिक्षु : जी का जन्म दिवस : स्मृतिसभा		१३
शहीद लेखराम की वसीयत के उत्तराधिकारी	—स्वामी अग्निवेश	१७
तोड़ दिया विधि ने बन्धन अटूट धागे का	—वसुन्धरा	२०
आपही के पत्र		२३
अकालियों का आत्मघात !	—अनिल लोढा	२६
आर्यसमाज क्या चाहता है ? (भारतेन्द्रनाथजी का एक पुराना लेख)		३३
अल्पसंख्यक आयोग नहीं, मानवाधिकार आयोग	—क्षितीश वेदालंकार	३७
अरबवासी हिन्दुओं की सन्तान हैं	—आनन्द "सुमन"	४०
वेदभिक्षु : जी, जिनकी अब याद ही रह गई है	—ज्ञानेन्द्रसिंह सैनी	४३
भारतेन्द्रनाथ अमर हैं	—प्रो० सत्यकाम बर्मा	४६
महर्षि दयानन्द :	—दीनानाथ सिद्धान्तालंकार	४६
भारत में सक्रिय रूसी गुप्तचर	—डा. बी. डी. गुप्त	५८
नई आस्था (कविता)	—हरिमोहनसिंह कोठिया	६१
तैमूर की शिकस्त	—डा. मनोहरलाल चतुर्वेदी	६२
सवाल भाषा का नहीं, राष्ट्र की आत्मा का है	—रत्नसिंह शांडिल्य	६५
ऐसे थे मेरे जीजाजी !	—विजय शर्मा	६८
मुस्लिम साम्प्रदायिकता के खतरनाक इरादे	—प्रतापनारायण मिश्र	७१
विघटनकारी शक्तियों का एकीकरण	—क्षितीश वेदालंकार	
हिन्दू-सिख विभेद कैसे पनपा ?	—डॉ. सतीश मित्तल	८०
युग-युग का शत वन्दन	—राधेश्याम 'आर्य' विद्यावाचस्पति	६७
भारत की मिट्टी	—राजेन्द्रप्रसाद	६८
वे एक चलती-फिरती संस्था थे	—विशम्भर प्रसाद शर्मा	६६
'अयन्त इध्म आत्मा' के ज्वलन्त प्रतीक	—गजानन्द आर्य	१०१
श्री वेदभिक्षु : एक दिव्य विभूति	—डॉ. एल. पी. शास्त्री	१०३
लेखनी के धनी श्री भारतेन्द्रजी	—वेदव्रत शर्मा	१०४
वह जनून जिस पर हर दिल फिदा हो उठता था	—श्यामसुन्दर सेठ	१०८
भिण्डरांवाले से (कविता)	—अभिविनय भारथी विद्यावाचस्पति	११०
ऐतिहासिक स्थानों के गाइडों की गप्पें	—प्रह्लादराय पचेरिया	११५

सम्पादकीय

अलगाव की प्रवृत्तियों का विस्तार और हमारा संकल्प

देश में अलगाव और फूट की प्रवृत्तियां अपना खेल खेलने में पूरी शक्ति के साथ सक्रिय हैं। उग्रवादियों की गतिविधियों का विस्तार पंजाब से मणिपुर के सीमापवर्ती राज्यों तक होता जा रहा है। श्रीनगर से इम्फाल तक देश की एकता और अखण्डता को क्षति पहुंचाने वाले तत्त्व अपनी कारिस्तानी की बढ़ोत्तरी की कहानी कह रहे हैं। श्रीनगर में क्रिकेट मैच के अवसर पर पाकिस्तान के समर्थकों ने अपनी जो कारगुजारी दिखाई थी, उससे सम्वन्धित समाचारों की स्याही अभी सूख भी नहीं पाई थी कि पिछले महीने मणिपुर की राजधानी इंफाल में एक वॉलीवॉल मैच की समाप्ति पर उग्रवादियों द्वारा घात लगाकर किए गए हमले से खेली गयी रक्त की होली हर राष्ट्रभक्त के लिए चिन्ता का कारण वन गयी है।

पंजाब में आए दिन हिंसक गतिविधियों का दौर-दौरा जारी है और अव तो संविधान के पच्चीसवें अनुच्छेद को जलाने और फाड़ने वाले उग्रवादी तत्त्वों के खिलाफ कार्रवाई की मांग करने वालों के नाम अपनी "हिट लिस्ट" में जोड़ने वाले मुखर होकर पहले से भी ज्यादा जोरदार आवाज में वोल रहे हैं।

क्षुद्र राजनैतिक स्वार्थों के लिए अपने ही देश-बन्धुओं का रक्त बहाने को आतुर तत्त्वों को पंजाब में सारी व्यवस्थाओं के वावजूद अपने करतब दिखाने के अवसर प्राप्त हो रहे हैं।

आनन्दपुर साहब जैसे पावन और प्रेरक स्थान के नाम से जुड़े प्रस्तावों के माध्यम से केन्द्र को कमजोर बनाने को उतावले तत्त्वों से सरकार पर बातचीत करने के लिए दबाव डालने में चाहे जनता पार्टी हो या भारतीय जनता पार्टी—सभी एकमत हैं।

एक ही मां के वेटे आज एक-दूसरे के खून से अपने हाथ रंग रहे हैं। वोटों के लिए नित नई गोटें बिछाने वाले राजनैतिक बाजीगर दलगत स्वार्थों पर राष्ट्र-हित का वलिदान चढ़ाने में भी संकोच नहीं कर रहे। आज केशधारी और अन्य

हिन्दुओं के बीच दरार डालने के लिए इतिहास की तोड़-मरोड़ का सिल-सिला चल रहा है।

इस भयानक स्थिति से उबरने का कोई मार्ग खोजने के लिए गंभीरतापूर्वक विचार करना समय की मांग है। यह भी खोज करनी ही होगी कि वे कौन-सी ताकतें हैं, जो गुरु तेगबहादुर के "तिलक जंजु राखा" की यशोगाथा भुलाने पर आमादा हैं। वे कौन-से तत्त्व हैं, जो अजीत और जुझार जैसे कोमल बालकों के पवित्र बलिदान की गाथा के समक्ष श्रद्धा से माथा झुकाने वालों को अपना सहोदर मानने से इन्कार करने के लिए विशाल हिन्दू समाज के अभिन्न अंगों को भड़का रहे हैं और उन तत्त्वों (इस्लाम) के समीप जाने का यत्न कर रहे हैं, जिनकी सांप्रदायिक और क्षुद्र संकीर्ण प्रवृत्ति तथा मजहबी उन्माद पर लगाम लगाने के लिए महान् गुरुओं को अपना बलिदान देना पड़ा था।

इतिहास की यह विचित्र विडम्बना है कि वन्दे मातरम् कहने से जिन तत्त्वों का ईमान संकट में पड़ता है उन्हें मनाने और रिझाने के लिए राष्ट्रीयता और दाराशिकोह जैसे सत्यार्थी सपूतों की चर्चा भी न करना कुछ लोगों की दृष्टि में वक्त की मजबूरी बन गया है।

सम्प्रदायनिरपेक्षता भारत की पावन वैदिक संस्कृति का मूल मन्त्र है। लेकिन वोट की राजनीति की यह कैसी विडम्बना है कि इराक के सद्दाम हुसैन और ईरान के आयतुल्ला खोमैनी की तसवीरें अपने घरों में लटकाने पर गर्व करने वाले और मुहम्मदअली जिन्ना को अपना उद्धारक मानने वालों से न किसी को फिरकापरस्ती का शिकवा है न शिकायत।

लेकिन भारत के कण-कण से प्यार और राष्ट्र के मेरुदण्ड हिन्दू समाज की एकता और राष्ट्रद्रोही तत्त्वों से सजग और खबरदार रहने की बात कहने पर हमें साम्प्रदायिकता के प्रसारक मानकर २८ अभियोगों का उपहार अपने ही शासक प्रदान कर रहे हैं।

देश में मदर टेरेसा पुरस्कृत हो सकती हैं। हम किसी के सेवा भाव का सम्मान किया जाना बुरा भी नहीं मानते, किन्तु दुःख तो तब होता है जब मार्क्स और जॉर्ज वाशिंगटन तो इस देश में सम्मानित होने के अधिकारी हो जाते हैं, लेकिन इस देश की स्वतन्त्रता के लिए अपने रक्त का कण-कण और जीवन का हर क्षण समर्पित कर देने वाले हिन्दू संगठक स्वातंत्र्यवीर सावरकर जैसे उद्भट क्रांतिकारी की जन्म शताब्दी पर भी सरकार की ओर से उक्त अजेय सेनानी की स्मृति को सजीव रखने के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाया जाता। शायद उसका एक ही अपराध था कि वह खुद को गौरव के साथ हिन्दू कहता था, जबकि उसने जिस हिन्दुत्व का पृष्ठपोषण किया, वह शिखा-सूत्र तक सीमित हिन्दुत्व

नहीं था, अपितु उसने हिन्दुत्व को विस्तृत परिवेश प्रदान किया था, जिसके अन्तर्गत भारत को अपनी मातृभूमि, पितृभूमि और पुण्यभूमि मानना ही हिन्दू होने की एक मात्र परिभाषा बताया गया था। उसने हिन्दुत्व को मजहबी संकीर्णता की परिधि से निकालकर राष्ट्रीयता का बाना पहनाया था।

आज तथाकथित धर्मनिरपेक्षता और समाजवाद तथा साम्यवाद के प्रसारकों को अपनी विकृत मानसिकता के कारण सोवियत रूस को अपनी प्रेरणास्थली मानने वालों, माओ की विचारधारा व अनुगामी होने के दावेदारों और पाकिस्तान के प्रति अपनत्व दर्शाने वालों से कोई शिकायत नहीं है, किन्तु उन्हें भारत भूमि के प्रति पूर्ण समर्थन की बात कहने वालों से साम्प्रदायिकता की गंध आती है।

उन्हें देश के सभी वर्गों के लिए समान नागरिक संहिता की मांग करने वाले फिरकापरस्त प्रतीत होते हैं और अपने मजहबी अकीदों को राजनैतिक विचारधारा की तरह फैलाने वालों से कोई शिकायत नहीं है।

वास्तव में हिन्दुत्व का कोई भी अनुयायी किसी सम्प्रदाय या मजहब के अनुयायी से घृणा की भावना से कभी ग्रस्त रह ही नहीं सकता, क्योंकि वह तो "वसुधैव कुटुम्बकम्" के उदात्त विचार को साकार करना ही अपने जीवन का चरम लक्ष्य मानता है। साथ ही उसकी यह भी मान्यता है कि बलवान् और शक्तिशाली हिन्दू राष्ट्र ही इस मंजिल की दिशा में पहला कदम है।

स्वतन्त्र चिंतन जहां वैदिक धर्म का एक महान् गुण है, वहीं कुछ तत्त्व ऐसे भी हैं, जो स्वतन्त्र चिन्तन करना तो दूर स्वतन्त्र संवाद भी सहन करने को तैयार नहीं। ऐसे तत्त्वों से समाज को सचेत करना न संकीर्णता है न साम्प्रदायिकता, अपितु हम ऐसा करना राष्ट्र धर्म मानते हैं।

कोई हिन्दू नास्तिक होकर भी हिन्दू ही रहता है, क्योंकि यह धर्म ही नहीं, राष्ट्रीयता भी है और एक संस्कृति भी। समाजवाद और साम्यवाद भी यहां हिन्दू परिवेश में ही पनपेगा। यों भी परमपिता परमात्मा की अमर वाणी वेद और हमारे अन्य सभी प्रेरक ग्रन्थ भी समतामय समाज की ही प्रेरणा देते हैं।

हिन्दू नाम और हिन्दू गठन की चर्चा से ही साम्प्रदायिकता की गंध लेने वालों को यह तथ्य भी समझ लेना चाहिए कि भारत में हिन्दू का बहुसंख्यक रहना ही उन्हें अपने विचारों के प्रचार और प्रसार का पूर्ण अवसर प्रदान कर रहा है। यदि कभी इस देश में हिन्दू अल्पसंख्यक हुआ (परमात्मा न करे कि कभी ऐसा हो) तो फिर उन्हें विचारों की अभिव्यक्ति की यह छूट कभी भी नहीं रहेगी। उनका भी हित इसी में है कि वे हिन्दू संगठन के आन्दोलन को बल दें।

सामाजिक बिखराव से देश को बचाने का एकमात्र मार्ग प्रखर हिन्दुत्व ही है, जिसके उद्गाता स्वामी श्रद्धानन्द, देवतास्वरूप भाई परमानन्द, पंजाबकेसरी लाला लाजपतराय, महामना पंडित मदनमोहन मालवीय, स्वातन्त्र्यवीर सावरकर, लाला हरदयाल तथा महात्मा वेदभिक्षु: जैसे महान् देशभक्त और मनीषी रहे हैं। हिन्दू समाज को संगठित कर राष्ट्र को बलिष्ठ बनाने की आकांक्षा देव दयानन्द की महान् शिक्षाओं का अनुगमन करने से ही पूर्ण हो सकती है। राष्ट्र की सोई शक्ति को जागृत करने के लिए हमें उस पुण्यात्मा संन्यासी स्वामी विवेकानन्द के प्रेरक उद्घोष का भी स्मरण करना होगा, जिसने अनेक वर्ष पूर्व यह आह्वान किया था, जो आज की परिस्थिति में भी पूर्णत: सामायिक है—

"मेरी बात पर ध्यान दो। केवल तभी तुम वास्तव में हिन्दू कहलाने योग्य होगे, जब हिन्दू शब्द को सुनते ही तुम्हारे अन्दर बिजली दौड़ने लग जाएगी। जब तुम किसी भी प्रांत के कोई भी भाषा बोलने वाले प्रत्येक हिन्दू संज्ञक व्यक्ति को एकदम अपना सगा समझने लगोगे, तब किसी भी हिन्दू कहलाने वाले का दु:ख तुम्हारे हृदय में तीर की तरह चुभेगा, मानो तुम्हारा अपना लड़का ही विपत्ति में पड़ गया हो। केवल तभी तुम यथार्थत: हिन्दू कहलाने के योग्य होगे, जब तुम उनके लिए समस्त अत्याचार एवं उत्पीड़न सहन करने के लिए तैयार रहोगे। स्मरण रहे, हमारे सारे साम्प्रदायिक झगड़े तभी दूर होंगे।"

मेरा संकल्प : सहयोग देंगे आप ?

प्रत्येक विपदा को झेलते हुए मैं इसी पथ पर बढ़ रही हूं। इसी पर बढ़ने का आदेश महान् मनीषी महात्मा वेदभिक्षु जी ने हमें दिया था। मैं संघर्षों से विचलित नहीं हूं। अब तक २८ मुकद्दमों की माला हिन्दू हित अभियान के प्रतिदान स्वरूप मेरे गले में पड़ चुकी है।

मुझे इस स्थिति से कोई चिन्ता भी नहीं, क्योंकि मेरी मान्यता है कि सत्य का मार्ग सुहाना सफर नहीं होता।

हां, एक अपेक्षा अवश्य ही उन सभी से है, जिन्हें हिन्दुत्व पर अडिग आस्था है, जो मेरे पथ को सही मानते हैं। वे इन मुकद्दमों को लड़ने के लिए यथासंभव आर्थिक सहयोग का हाथ बढ़ाएं ताकि मैं अपना पक्ष निर्भीकतापूर्वक प्रस्तुत कर सकूं। यदि देश भर की दो-ढाई सौ आर्यसमाजें, विभिन्न हिन्दू संस्थाए सौ पचास-पच्चीस रुपए भी प्रतिमास इन अभियोगों की पैरवी के लिए भेजेंगी तो यह भी हिन्दू संगठन अभियान में उनका प्रशंसनीय योगदान तथा इस संकट की घड़ी में हमारा बहुत बड़ा संबल होगा। विश्वास है कि मेरे आह्वान पर जन-ज्ञान के सभी पाठक ध्यान देंगे और प्रेरणा पुरुष महात्मा वेदभिक्षु: की अनुपस्थिति में भी मुझे पूर्ववत् अधिक से अधिक अपना सहयोग प्रदान करेंगे, जिससे मैं उनके दिखाए इस कंटकाकीर्ण मार्ग पर आगे बढ़ती रहूं।

सांसदों-विधायकों के इण्टरव्यू

पिछले दिनों सत्तारूढ़ पार्टी इन्दिरा कांग्रेस ने अपने सभी सांसदों-विधायकों को दिल्ली बुलाकर उनके इन्टरव्यू लिए और उनसे उनके कार्यक्षेत्र और बैंक कार्यकलाप के सम्बन्ध में जवाब तलब किया।

चुने जाने के बाद जन-प्रतिनिधियों का अपने क्षेत्र की जनता के प्रति व्यवहार संतोषजनक नहीं रहता। अधिकतर नेता चुनाव में विजयी होकर मानो पांच वर्ष की अवधि के लिए लाइसेंस हासिल करते हैं। जिसका उपयोग वे कोटा, परमिट लाइसेंस आदि लेने और अपने रिश्तेदारों मित्रों के दिलाने में करते हैं। सत्तारुढ़ दल के प्रतिनिधि तो विशेष रूप से इस कार्य में आगे रहते हैं। वे जनता के प्रति अपना कर्त्तव्य भूल जाते हैं और निजी स्वार्थ पूर्ति हेतु हाई कमान से मधुर सम्बन्ध बनाये रखने की चिन्ता में लगे रहते हैं। अगला चुनाव आने तक उन्हें अपने कार्यक्षेत्र की सुध ही नहीं रहती।

जब प्रथम बार सत्तारूढ़ पार्टी के सांसदों और विधायकों को अपने-अपने क्षेत्र में दौरा करके रिपोर्ट भेजने के लिए निर्देश दिए गए तो इसे गम्भीरता से न लेकर अधिकतर नेताओं ने अपने स्वभावानुसार बनावटी रिपोर्ट भेज दी। लेकिन जब जवाब तलब किया गया और क्षेत्र की प्रगति की जानकारी हेतु प्रश्न पूछे गये तो अनेकों के पैरों तले से धरती खिसक गई। वैसे इन्दिरा कांग्रेस का वर्तमान विधायकों से साक्षात्कार अभियान आगामी चुनाव की तैयारी ही था फिर भी स्वतन्त्रता के बाद पहली बार लगा कि यदि सभी पार्टियां चुनाव टिकट देते समय इसी प्रकार के प्रश्न निर्धारित कर देश और समाज के प्रति कर्तव्य तथा आस्था रखने वालों को प्रमुखता दें तो सम्भवतः देश की राजनीति में एक बड़ा बदलाव आ जायेगा। देश की समस्याओं को हल करने के लिए सुखद वातावरण बनेगा। वैसे चाटुकारों की फौज तथा मित्रों, रिश्तेदारों का हित-चिन्तन और राजनैतिक दलों की अपनी विवशताएं होते हुए इतनी जल्दी बदलाव नहीं आ सकेगा। फिर भी ऐसा साक्षात्कार ज्ञान, अज्ञान स्वयं अपनी ही सेवा, भ्रष्टाचार आदि दोष प्रकट होने का भय जनप्रतिनिधियों के सुधार में एक कड़ी बन सकेगा और देश की बिगड़ी राजनीति में सुधार लाने का उपक्रम होगा।

श्रीराम नवमी : एक राष्ट्रीय पर्व

श्रीराम नवमी का पर्व भारतीय संस्कृति एवं हमारे गौरवपूर्ण इतिहास को व्यक्त करने वाला पर्व है। अपने चिरन्तन तथा शाश्वत इतिहास को व्यक्त करने वाला यह पर्व न केवल श्रीराम के भक्त हिन्दुओं का, वरन् समूचे राष्ट्र का पर्व है, राष्ट्रीय पर्व है। भारतीय संस्कृति के उदात्त आदर्शों की स्मृति कराने वाला यह पावन राष्ट्रीय पर्व आज भी सारे राष्ट्र का मार्ग-दर्शन कर रहा है। कि हमें व्यक्तिगत, पारिवारिक सामाजिक संकटों के अवसर पर भी उच्चादर्शों से च्युत नहीं होना चाहिए।

—राकेशरानी

प्रभावशाली धार्मिक साहित्य

१.	चारों वेदों का हिन्दी भाष्य	मूल्य ४४४)
२.	सामवेद : आध्यात्मिक भाष्य (पं० विश्वनाथ विद्यामार्तण्ड)	५०)
३.	वेद ज्योति	१५)
४.	वेदांजलि : ३६५ मंत्रों की प्रेरक व्याख्या	३०)
५.	सोमसरोवर : (सामवेद के पावमान पर्व की व्याख्या— पं० चमूपति)	१५)
६.	ईश्वर : वैज्ञानिकों की दृष्टि में : क्षितीश वेदालंकार	१५)
७.	संस्कारविधि: [सजिल्द]	१५)
८.	सरस्वतीन्द्र (जीवन-चरित्र महर्षि दयानन्द)	३०)
९.	अग्निहोत्र दर्पण (डा० रामनाथ वेदालंकार)	२०)
१०.	सत्यार्थ-प्रकाश (१० | १५ इंच) स्थूलाक्षर	१५१)
	,, ,, आर्ट पेपर पर	२५१)
११.	ज्योति स्तम्भ :	१०)
१२.	वैदिक सम्पत्ति	८१)
१३.	योगासन :	२)
१४.	योग और ब्रह्मचर्य :	३)
१५.	Concept of God	५०)
१६.	श्रीमद्दयानन्दप्रकाश :	२५)
१७.	LIGHT OF TRUTH	५०)
१८.	प्रकृति और सर्ग : आचार्य उदयवीर शास्त्री	६)
१९.	अथर्ववेद परिचय :	६)

बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाएं।

दयानन्द संस्थान, वेद मन्दिर, पो० ऑ० अलीपुर, दिल्ली-३६

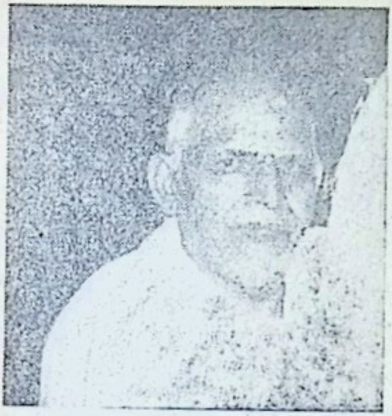

महात्मा वेदभिक्षु की अमर वाणी

जीने की बात करो !

भारत रहे का अर्थ है भारत की संस्कृति, आदर्श, इतिहास, परम्पराएं जीवित रहें। बड़े-बड़े काल के गाल में समा गए पर वेद-शास्त्र उपनिषद्-गीता के रूप में आज भी भारत के पास वह पूंजी है जिसकी तुलना में धरती के साम्राज्य का भी कोई महत्त्व नहीं।

आज भी हम उन्हीं के संरक्षण के लिए लड़ रहे हैं। हमारी सन्तान इन्हें भूल रही है। शासन इन्हें भुलवा रहा है। विदेशी शक्तियां इन्हें मिटाना चाह रही हैं और इनके रखवारे गहरी नींद में सो रहे हैं।

आज देश धधक रहा है। कोई भी राजनैतिक दल राष्ट्र की रक्षा करने में समर्थ नहीं है। समाज सेवा संस्थाओं का उद्देश्य भी धन बटोरना ही रह गया है। न किसी में साहस है न समस्या पर पकड़ है। ऐसे में देश मृत्यु की ओर न जाए तो कहां जाए ?

हमसे जो बन पड़ा किया और करेंगे, पर प्रश्न यह है कि क्या ६० करोड़ हिन्दू ६ व्यक्ति भी बलिदान के लिए नहीं दे सकते ?

यदि कुछ व्यक्ति भी बलि वेदी पर शीश कटाने के लिए नहीं आ सकते तो बात बातों से नहीं बनेगी। धन-साधन-भाषण समस्या का हल नहीं है। त्याग और बलिदान की भावना ही देश की रक्षा कर सकेगी, यह सत्य सब समझ लें।

शासन ने अभियोग आरम्भ किया। धन का अभाव, व्यक्तियों का अभाव, केवल भावना से हम कब तक लड़ें, जबकि साधन शून्य हैं।

समय के प्रवाह को बदलने के लिए प्रत्येक हिन्दू स्वयं सेनापति बने। जोश और होश से अपना कार्य करे। विजय की भावना उसमें व्याप्त हो और अपनी बुद्धि और साधना से एक ही नारा गूंजे—

वन्दे मातरम् गाना होगा या भारत से जाना होगा।

इस नारे में बड़ी शक्ति है। इसमें राष्ट्र की भक्ति का उमड़ता स्रोत है। इसलिए इस नारे को बल से गुंजाइए और देशभक्ति का वातावरण बनाइए।

हम मुसलमानों-ईसाइयों से द्वेष न करें, अपितु उन्हें भारत का भक्त बनाएं। भारत के सभी नागरिक चाहें जिसकी पूजा करें पर भारत की महिमा को हृदयंगम करें। उन्हें वेद-शास्त्र-उपनिषद्-दर्शन पर अभिमान हो। मुसलमान राम के भक्त क्यों नहीं बन सकते ? कोई बताए तो सही कि वे क्यों नहीं भारत की जन धारा में घुल सकते ? सभी की वेश-भूषा यदि एक हो जाए, सबकी भाषा एक हो तो फिर झगड़ा कैसा ?

अब एक बात सभी समझ लें कि औरंगजेब के गीत गाने वाला, तैमूरलंग को महापुरुष मानने वाला, मुहम्मद अली जिन्ना का भक्त भारतद्रोही हो सकता है, भारतभक्त नहीं और भारतद्रोही की नागरिकता हमें समाप्त करनी होगी, उसे भारत छोड़ना होगा। जिनके लिए भारत एक धरती का टुकड़ा है, वे इसके प्राणों का स्पंदन नहीं सुन सकते, पर जिनके लिए भारत माता है—वे मां के कष्टों की पीड़ा को अनुभव कर सकते हैं।

जिन नेताओं की राजनैतिक भूल से मां के टुकड़े हुए, उनका अनुगमन मां को हानि ही पहुंचाएगा, सशक्त नहीं बना सकता। कश्मीर, पूर्वांचल सभी कुछ कट रहे हैं। हिमाचल के अनेक भाग आज सुलग रहे हैं। क्या होगा परिणाम ? कौन कह सकता है। इसलिए हमारा आग्रह है कि प्राण और आत्मा को जाग्रत कर भारत मां की वन्दना करो।

वन्दना के रक्त कण में

एक शिर मेरा मिला लो।

(माघ संवत् २०३८ के जन-ज्ञान से उद्धृत)

वेदभिक्षु: जी का निधन मेरी व्यक्तिगत क्षति है

—जगजीवनराम
(भूतपूर्व उपप्रधानमंत्री, भारत सरकार)

जगत् परिवर्तनशील है। शरीर नश्वर है। आत्मा अमर है। ये ऐसे वाक्य हैं जिन्हें स्वयंसिद्ध मान लिया गया है। पर परिवर्तनशील जगत् में ही तो स्थायी काम किये जाते हैं।

आत्मा और शरीर के संयोग से ही कर्म सम्भव है। परिवर्तनशील जगत् में क्रियाशीलता के लिए जीवन आवश्यक है। आत्मा और शरीर का संयोग आवश्यक है। कुछ लोग हैं जिनकी क्रियाशीलता का क्षेत्र सीमित होता है। उस सीमा की परिधि व्यष्टि, परिज़न, परिवार, कुटुम्ब और स्वजाति तक ही रहती है। कुछ लोगों की क्रियाशीलता का क्षेत्र इससे कुछ अधिक व्यापक होता है पर होता है सीमित। उसकी परिधि सम्बन्धित समाज तक है जिससे अधिकतर लोग प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से परिचित होते हैं।

थोड़े-से मनीषी ऐसे होते हैं जिनका क्षेत्र देखने में तो सीमित ही प्रतीत होता है पर उस क्षेत्र को किसी परिधि में बांधा नहीं जा सकता। उनकी क्रियाशीलता उनकी उपलब्धियां अनगिनत व्यक्तियों को, निकट और सुदूर की संस्थाओं को, जनता को प्रभावित ही नहीं करतीं, उद्वेलित कर देती हैं।

कुछ ऐसे होते हैं जिनकी योग्यता की सूचना उनके ही प्रबन्ध से उनकी उपस्थिति के पहले पहुंचा दी जाती है, कुछ ऐसे होते हैं जो अपनी योग्यता का विज्ञापन अपने चेहरे से उद्भाषित करने का यत्न करते हैं, पर कुछ थोड़े ऐसे होते हैं जो अपनी प्रतिभा की ज्योति को प्रदर्शित नहीं करते; फिर भी प्रतिभा की ज्योति उनके काम के माध्यम से झांकती हैं, उनकी कलम से स्फुरित होती है, उनकी वाणी से प्रस्फुटित होती है। ऐसे व्यक्ति अधिकतर देखने मे सरल-साधारण प्रतीत होंगे पर होते हैं असाधारण।

वेदभिक्षु: जी हमारे बीच से उठ गये। उनकी अमर आत्मा नश्वर शरीर को छोड़ गई—सम्भवतः ईश्वरत्व को, अमरत्व को प्राप्त हो गई।

वेदभिक्षु: जी का कार्यक्षेत्र इतना विशाल, इतना व्यापक था कि उसकी

सीमा का निरूपण तो सम्भव है ही नहीं। उसके निदर्शन का प्रयास भी निरर्थक होगा। वह क्षेत्र सारा जगत्, सम्पूर्ण मानव समाज है। वेदभिक्षु: जी की प्रतिभा बहुमुखी थी, उनका व्यक्तित्व सम्यक् था। जितनी सशक्त उनकी लेखनी थी उतनी ही सबल उनकी वाणी थी। वे कलम के धनी थे, वाणी के बादशाह थे।

वेद के प्रचार के लिए, हिन्दू समाज की अक्षुण्णता के लिए, उनमें अपार क्षमता थी—एकनिष्ठता थी। वेद और हिन्दू धर्म के लिए एकनिष्ठ होते हुए भी उनमें विचारों की असाधारण उदारता थी। इस उदारता का परिचय स्वयं मुझे मिला जब विराट् हिन्दू सम्मेलन के अवसर पर उनके अनुरोध से लिखे मेरे लम्बे पत्र को उन्होंने 'जन-ज्ञान' में अविकल रूप में प्रकाशित किया। वेदभिक्षु: जी की दृष्टि अपने लक्ष्य पर ही केन्द्रित रहती थी। मन-प्राण से वे उसी के प्रति समर्पित थे। लगता है जैसे वे विदेह हो गए थे। शरीर की परवाह नहीं, काया से लगाव नहीं। ऐसी अवहेलना से शरीर और काया व्याधियों के आगार बन गये। दुर्बल हुए तो व्याधियां प्रबल हो गईं। अस्पताल के डाक्टरों ने अथक परिश्रम किया पर वे उन्हें बचा न सके। रोग-शोक से अनभिज्ञ अवस्था में वे चले गए—चले गए अनेक नेत्रों को अश्रुपूरित कर।

मेरा उनका सान्निध्य लम्बा नहीं था, पर उन्होंने मुझे बांध लिया था। वह बन्धन स्थायी है।

वे चले गए। उनकी कीर्ति है, और बाकी है उनके कार्यों की परम्परा। जिस परम्परा को जारी रखना ही उनके प्रति हमारी श्रद्धा का परिचायक होगा। उस कार्य को चलाने के लिए पण्डिता राकेशरानी जी की योग्यता और कुशलता असन्दिग्ध रूप से पर्याप्त है, पर सम्पूर्ण बोझ उन पर ही डाल देना उचित नहीं होगा। वेदभिक्षु: जी के सभी मित्रों, परिचितों और प्रशंसकों को हाथ बंटाना होगा।

वेदभिक्षु: जी का निधन मेरी व्यक्तिगत क्षति है। उनसे मैंने प्यार और आदर पाया था। अब उससे वंचित कर दिया गया हूं।

वैदिक सम्पत्ति

स्वर्गीय पंडित रघुनन्दन शर्मा की अमर कृति—भारतीयता के प्रत्येक उपासक के लिए पठनीय। कपड़े की पक्की जिल्द।

मूल्य ८१ रुपये

३० अप्रैल तक केवल ५१) में।

दयानन्द संस्थान

१५९७ हरध्यानसिंह मार्ग, करौलबाग, नई दिल्ली-५

यह रमणीय स्थली (वेद मंदिर) अस्तव्यस्त न हो : स्मृति सभा में स्वामी सत्यप्रकाश जी के उद्गार

(हमारे कार्यालय संवाददाता से)

दिल्ली । १४ मार्च को दयानन्द संस्थान और हिन्दू रक्षा समिति के संस्थापक स्वर्गीय महात्मा वेदभिक्षु: जी का ५५वां जन्मदिवस था। उनके जीवनकाल में तो हम उनका जन्म दिन चुपचाप ही मना लिया करते थे, क्योंकि वे सदा ही अपने काम में व्यस्त रहते थे। इस बार उनके प्रशंसक और परिचित-मित्र इब्राहीमपुर स्थित वेद मन्दिर में एकत्र हुए और उन्होंने अपने-अपने ढंग से महात्मा जी को स्मरण किया।

प्रातःकाल हवन-यज्ञ और श्रद्धेय स्वामी सत्यप्रकाश जी का प्रवचन हुआ। यह कार्यक्रम साढ़े ग्यारह बजे तक चला। सार्वजनिक स्मृति सभा (हिन्दू रक्षा समिति की ओर से आयोजन) का समय दोपहर बाद दो बजे था। बीच के समय में प्रीतिभोज और गोष्ठी के कार्यक्रम चलते रहे। तदनन्तर स्वामी सत्यप्रकाश जी के सभापतित्व में सभा प्रारम्भ हुई। सबसे पहले दयानन्द कालेज, अजमेर के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष प्रो० धर्मवीर ने प्रस्तावना के रूप में अपने विचार नपे-तुले शब्दों में प्रकट किए। उसके बाद वेदों के प्रसिद्ध विद्वान् पंडित अभिविनय भारथी ने असम, पंजाब, क्षेत्रीय पृथक्ता, विभिन्न राज्यों में हिन्दुओं की समस्या, आरक्षण का अभिशाप, अल्पसंख्यक आयोग की व्यर्थता, पण्डिता राकेशरानी पर २८ मुकद्दमों आदि की चर्चा करते हुए अपने विचार उत्साहपूर्ण भाषा में प्रकट किए। भारथी जी के बाद अजमेर के "आधुनिक राजस्थान" के सह-सम्पादक श्री सुरेन्द्र चतुर्वेदी ने महात्मा जी को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। वे महात्मा जी का मानवाकार रंगीन तैल चित्र भी बनाकर लाए थे, जो सभा-स्थल की शोभा बढ़ा रहा था। अब महात्मा जी के एक पुराने मित्र श्री नेत्रपाल सिंह शास्त्री माइक पर आए। महात्मा जी को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनका गला रुंध गया

और अश्रुपात होने लगा। दिल्ली विश्वविद्यालय में वेद विषय के रीडर डॉक्टर कृष्णलाल ने अपने उद्बोधक भाषण में हिन्दुओं की एकता पर जोर देते हुए कहा कि "हमें अपनी रक्षा स्वयं ही करनी होगी।"

भारतीय दलित वर्ग संघ के महासचिव श्री चिन्तामणि आर्य ने कहा कि महात्मा जी के निधन से एक ताजमहल भूमिसात् हो गया है। लेकिन हमें निराश नहीं होना चाहिए और महात्मा जी के कार्यों को श्रद्धापूर्वक जारी रखना चाहिए। चिन्तामणिजी ने एक बात पते की कही कि देश की हालत उतनी खराब नहीं, जितनी हवा खराब है। चिन्तामणि जी के बाद "आर्यजगत्" के यशस्वी सम्पादक श्री क्षितीश वेदालंकार को अपने विचार प्रकट करने के लिए आमन्त्रित किया गया। उन्होंने कहा कि वेदभिक्षु: जी के साथ मेरा सम्बन्ध दीर्घकालीन था। दीर्घकालीन परिचय से कई बार विरक्ति भी हो जाती है, लेकिन उनके प्रसंग में ऐसा नहीं हुआ। वेदभिक्षु: जी अभाव से भाव पैदा करना जानते थे। यह वेद मन्दिर इसका प्रमाण है। यह कोई सामान्य बात नहीं। उनका दिल ही नहीं, दिमाग भी धड़कता था। जिस काम को हाथ में लिया, उसके पीछे दीवाने हो गए। विचार को तुरन्त क्रियान्वित किया। "युगवार्ता" के प्रधान सम्पादक श्री बालेश्वर अग्रवाल ने कहा कि वेदभिक्षु: जी ५-६ व्यक्तियों का काम अकेले ही कर रहे थे। हमें बड़े पैमाने पर बैठक आयोजित कर विचार करना चाहिए कि उनके कार्य को कैसे जारी रखा जाए। जो लोग समय दे सकें, उनसे सहयोग लेना चाहिए। श्री सत्यदेव विद्यालंकार अभिभूत थे। वे इतना ही कह पाए कि "मैं इस पवित्र वेद मन्दिर में मत्था टेकने आया हूं। यह पवित्र स्थल है, यही सोचकर मैं यहां आया हूं।"

अन्त में स्वामी सत्यप्रकाश जी ने अपने विचार प्रकट किए। उन्होंने कहा कि "मेरी हार्दिक इच्छा है कि यह रमणीय स्थली अस्तव्यस्त न हो। मेरे मन में एक विचार यह भी उठ रहा है कि जब मैं दिल्ली में होऊं तब इस आश्रम में रहूं—कुछ लिखूं-पढ़ूं। भारतेन्द्र जी ने राकेशरानी जी के सहयोग से अपनी प्रतिष्ठा के अनुकूल अनेक कार्य किए। उनकी प्रतिष्ठा अक्षुण्ण रहनी चाहिए। स्वामी जी का मत था कि अवतारवाद, जन्म से जाति मानना, मठ, स्वर्ग की ठेकेदार, लॉटरी, जुआ, फलित ज्योतिष आदि हिन्दू समाज की अवनति के कारण हैं। हालत यह है कि हिन्दू कब्रों तक की पूजा करते हैं। स्वामी जी ने राजनीतिबाजों की खूब खबर ली। "राजनीति विघटन को जन्म दे रही है। विदेशी शक्तियां भी हमारे देश को विघटित करना चाहती हैं। हमें इनसे सावधान रहना चाहिए।"

अन्त में प्रो० धर्मवीर ने धन्यवाद ज्ञापन किया। आगन्तुकों को साहित्य भेंट

१४ मार्च को स्वर्गीय महात्मा वेदभिक्षु : जी के जन्मनिवस पर वेद मन्दिर में हवन-यज्ञ का एक दृश्य।
चित्र में पंडिता राकेशरानी और स्वामी सत्यप्रकाश जी दिखाई दे रहे हैं। छाया : राकेश भार्गव

किया गया। शांतिपाठ के बाद सबने मिलकर जलपान किया।

यह बात उल्लेखनीय है कि ६ मार्च अवकाश का दिन नहीं था और दिल्ली में स्कूटरों की हड़ताल थी, फिर भी दूर-दूर से लोग महात्मा जी के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करने के लिए जमा हुए।

दयानन्द संस्थान की अध्यक्ष पंडिता राकेशरानी जी सारा दिन वेदमंदिर में ही रहीं। सारा कार्यक्रम उनके सान्निध्य में हुआ।

कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए दयानन्द संस्थान के कार्यकर्त्ताओं ने रात-दिन एक कर दिया—विशेष रूप से श्री कैलाश सत्यार्थी, श्री अनिल और श्री राधेश्याम ने।

शाबास वासुदेव सिंह ! पीछे न हटना

उत्तर प्रदेश विधान सभा में गत दिनों जब उर्दू को दूसरी भाषा बनाने के सम्बन्ध में एक विधेयक प्रस्तुत किया गया तो आश्चर्यजनक रूप से एक मन्त्री वासुदेव सिंह ने सरकार का विरोध कर डाला।

श्री वासुदेव सिंह ने खुल्लमखुल्ला इस विधेयक का विरोध करते हुए इसे राष्ट्रविरोधी, धर्मनिरपेक्षता विरोधी और असंवैधानिक बताया।

वोटों के भिखारी राजनैतिक दलों की सरकारें जिस तरह राष्ट्र हितों को वोटों के पीछे राष्ट्र विरोधियों के हाथों गिरवी रख रही हैं, इसका प्रमाण इस उर्दू विधेयक से मिलता है परन्तु यह देखकर संतोष होता है कि अब भी वासुदेव सिंह जैसे लोग मौजूद हैं जो कुर्सी का मोह त्याग कर सच को सच कहना चाहते हैं।

हम इस विरोध के लिए वासुदेव सिंह को बधाई देते हुए उनसे अपील करते हैं कि वे इस उर्दू विरोधी मोर्चे पर डटे रहें चाहे उन्हें मंत्री का पद छोड़ना पड़े। यदि वे हिंदी के लिए राजसिंहासन छोड़ेंगे तो वे देश के विशाल हिन्दू समाज के हृदय सम्राट् बनकर जन सिंहासन पर बैठेंगे।

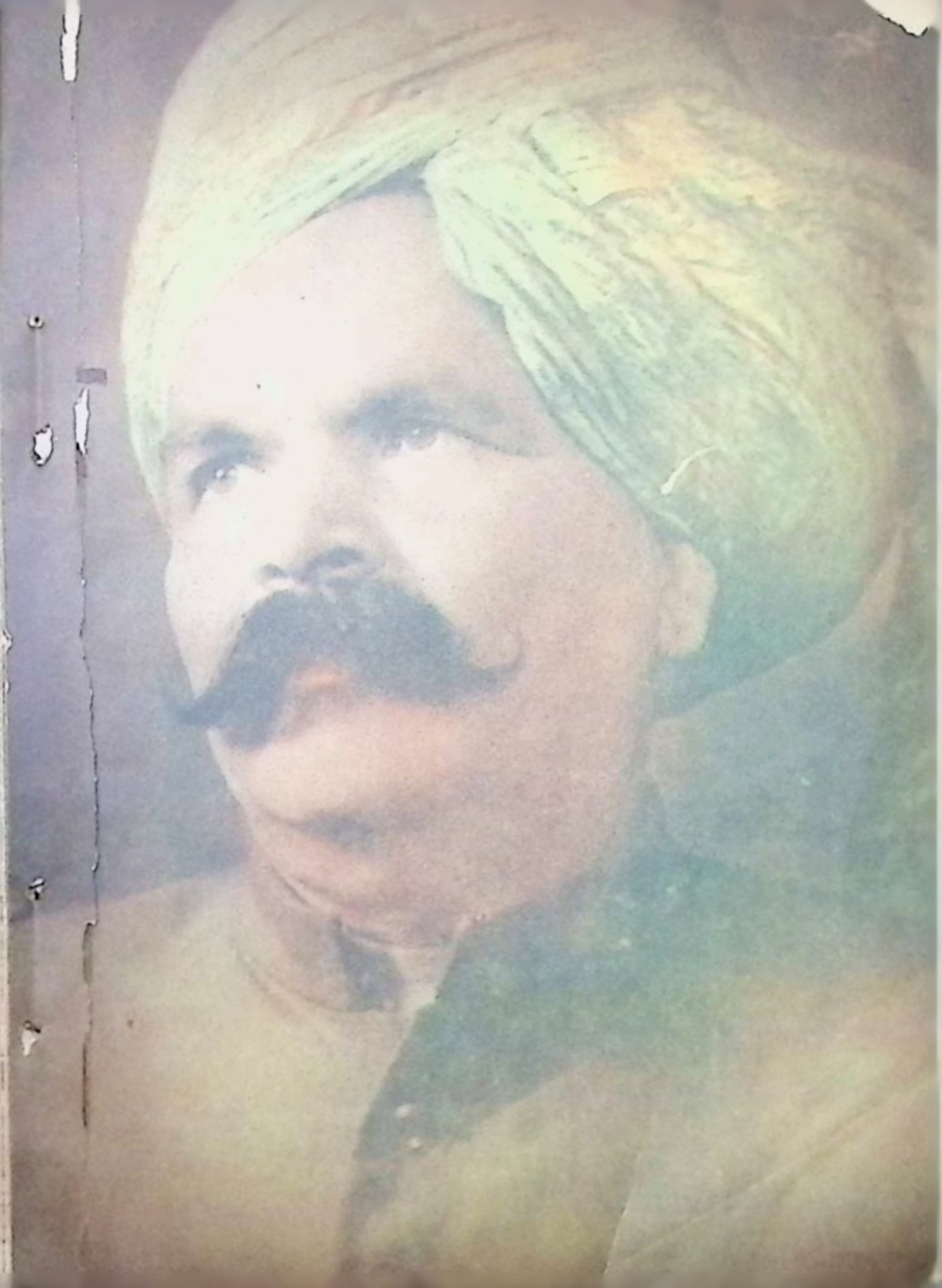

आर्यसमाज स्थापना दिवस (२ अप्रैल) के अवसर पर भारतेन्द्रनाथ जी का

ए कपुराना लेख

आर्यसमाज क्या चाहता है ?

संसार के इतिहास में बुराइयों और कष्टों को समाप्त करने के लिए जब भी क्रांतियां हुई हैं, उन सभी क्रांतियों का श्रेय जीवन की आहुतियां देकर, तिल-तिल जलने वाली, परदुःखकातर, त्यागी-तपस्वी आत्माओं को ही प्राप्त हुआ है।

लम्बी अवधि और चिर पीड़ा-यातना सहन करने के पश्चात् अवनि पर एक महान् संत, योगी और क्रांतिकारी विभूति का प्रादुर्भाव हुआ। साधना के अवि-राम पथ पर चलता हुआ बालक मूलशंकर महर्षि दयानन्द के रूप में धरती पर ज्ञान और प्रकाश का साधन बना।

महर्षि दयानन्द योगी थे, क्रांतिकारी थे, युग-निर्माता थे और थे भविष्य-द्रष्टा! वे सत्य के उपासक थे, और थे सत्य की राह के निर्माण के इच्छुक।

उन्होंने इसके लिये गालियों की, विष की मान-अपमान की और कष्टों की परवाह न की। बड़े-बड़े प्रलोभन उन्हें डिगा न सके; झुका न सके, भुला न सके। वे बढ़ते गए, बढ़ते रहे। अपनी धुन के पक्के एकाकी ही महर्षि सत्य का संबल और प्रभु का विश्वास साथ लिये अपनी बात कहते रहे।

संसार ने पहले उन्हें गालियां दीं, फिर उन्हें ढोंगी बताया और फिर नास्तिक और ईसाई। दुनिया के कहने को सुन महर्षि मुस्कराते रहे, दुनिया कहती रही और एक अवधि के बाद दुनिया ने हार मानी। सत्य के प्रकाश ने अंधकार की दीवारों को हिला दिया, मिटा दिया और सभी ने महर्षि के गौरव को जान उनके चरणों पर अपना मस्तक झुका दिया—और फिर ज्ञान की ज्योति दीप मालिका संसृति की भौतिक दीप पंक्तियों को निरखते-निरखते विदा हुई। धरती सूनी हो गई।

और ऐसे अवसर पर महर्षि दयानन्द के उत्तराधिकारी आर्यसमाज ने महर्षि दयानन्द के कार्य को संभाला।

आर्यसमाज अपने महान् गुरु के चरण चिह्नों पर चलता हुआ बढ़ता गया। संसार की रुकावटें उसके मार्ग में बाधा न बन सकीं और परिणामस्वरूप युग निर्माण के लिये आर्यसमाज ने जो कार्य किया है, वह इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों की कहानी है।

आर्यसमाज संसार की महान् संस्था है। वह विश्वबन्धुत्व की भावना का प्रसारक है। समता, न्याय, प्रेम, सत्य और ज्ञान उसकी भावना के मूल हैं। अज्ञान अन्याय और अभाव का, मूर्ति पूजा, गुरुडम, अंधविश्वास और भेदभावों का आर्यसमाज विरोधी है।

आर्यसमाज वर्तमान को सुधार भविष्य का निर्माण भूत के आधार पर करना चाहता है। संसार के समस्त जातिभेद, वर्गभेद, प्रांतभेद और राष्ट्रभेदों को समाप्त कर आर्यसमाज सोलह संस्कारों, चार आश्रमों द्वारा वैयक्तिक जीवन का, कर्म पर आधारित और वर्णाश्रमप्रणाली द्वारा समाज का सुगठित निर्माण करना चाहता है। आर्यसमाज जीवन का लक्ष्य भोग और भौतिकवाद से हटा कर त्याग और आध्यात्मिक आनन्द की प्राप्ति को मानव का लक्ष्य बनाना चाहता है। संक्षेप में आर्यसमाज एक महान् क्रांति का सूत्रपात करना चाहता है। यह क्रांति राज्यों की नहीं, अधिकारों की नहीं, अपितु विचारों की होगी।

यह निर्विवाद तथ्य है कि आर्यसमाज का कार्य महान् है। उसका लक्ष्य सही है और उसकी विचारधारा सर्वमान्य है।

किन्तु आज सभी के सामने प्रश्न यह है कि इतनी महान् विचारधारा, सत्य सिद्धान्तों और उन्नत आदर्शों का स्वामी होते हुए भी आर्यसमाज संसार के वर्तमान अज्ञान, अशांति और कष्टों को दूर करने में सफल क्यों नहीं हो पा रहा? संसार क्यों बड़ी तीव्रता के साथ भोगवादी विचारधारा और गुरुडम के जाल में फंसता चला जा रहा है? यह प्रश्न है, जिस का उत्तर आज हमने देना है। सोचना है।

उत्तर देने से पहले हमें एक बात बहुत ही निश्चित शब्दों में कहनी है और वह यह कि आर्यसमाज अपने लक्ष्य में सफल हो सकता है, उसकी भावनाएं और आदर्श साकार रूप धारण कर सकते हैं यदि हम चाहें तो?

और इस का सीधा-सा तात्पर्य यह है कि आज आर्यसमाज के मार्ग में रुकावट विरोधी नहीं, अपने हैं! जो आर्यसमाजी हैं वे ही नहीं चाहते कि आर्यसमाज का प्रचार हो! मैं यह बात कहना चाहता हूं। साथ ही मेरा सबल अनुरोध यह भी है कि आर्यसमाज के वर्त्तमान अधिकारी और नेता व शक्तिप्राप्त व्यक्ति ही आज आर्यसमाज के संदेश को न फैलने देने के लिए उत्तरदायी हैं।

महर्षि के निर्वाण के ७० वर्ष बाद (अब १०० वर्ष बीत चुके हैं—सम्पादक) आज क्या इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करने के लिये कोई तैयार है? विरोधी विचारधारा को रोकने के लिये क्या कोई जीवन की आहुति देने का संकल्प कर सकता है? महर्षि के अधूरे कार्य तुम को पुकार रहे हैं! ऋषि भक्तो! महान् साधना का पथ तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है। सिसकती मानवता तुम्हारी बाट देख रही है। बोलो, क्या तुम इन सभी की पुकार सुनोगे या गहरी निद्रा में पड़े असफलता के झोंकों में झूलते हुए ही अपनी सफलता के गीत गाते रहोगे?

आर्यसमाज को सफल बनाना है तो सबसे पहले आर्यसमाज के अन्दर ही क्रांति करनी होगी। वर्तमान कार्यक्रम और अयोग्य व्यक्तियों को बदलना होगा और आवश्यक रूप से अधिकारी ही कार्यकर्ता और कार्यकर्ता ही अधिकारी का पाठ क्रियात्मक रूप से पढ़ना होगा।

शक्ति उनके हाथ में आये, जो तपस्वी हों, वेद के विद्वान् हों, वेद पर आचरण करने वाले हों और जो कहते हों वही करते हों और जो करते हों वही कहते हों। जिनका मस्तिष्क दिन-रात वेद की विचारधारा के प्रचार के लिए ही कार्य कर रहा हो। फिर देखें, सफलता कैसे नहीं मिलती?

और आज तो निष्क्रिय वातावरण के कारण अच्छे कार्यकर्ता समाज में आ ही नहीं रहे और जो आ भी रहे हैं, उन्हें प्रोत्साहन देने के स्थान पर कुचलने का ही प्रयत्न किया जाता है। अपने अधिकारों और गद्दियों के अभिमान में महर्षि दयानन्द के महान् लक्ष्य को स्वयं ही समाप्त किया जा रहा है। अब स्थिति सीमा से परे और असह्य हो चुकी है।

क्या हम महर्षि दयानन्द के उत्तराधिकारी इस गम्भीर वेला में अपने विचारों में परिवर्तन करने का प्रण नहीं ले सकते? केवल ऋषि दयानन्द की जय बोलने के स्थान पर उनकी आज्ञाओं और मंतव्यों के पालन का निश्चय नहीं कर सकते? आज आवश्यकता है कि हम सच्चे अर्थों में स्वयं आर्य बनें और इसके पश्चात् धरती के हर मानव को "आर्य" बनाने का संकल्प लें।

आर्यसमाज महान् है, उसके विचार महान् हैं। आवश्यकता केवल यह है कि हम आर्यसमाज के संदेशवाहक भी महान् बन सच्ची महानता को संसृति में विस्तारित कर सकें।

परमात्मा करे कि आज ऋषि दयानन्द के चरणों में हम क्रियात्मक श्रद्धांजलि चढ़ाने की प्रेरणा पा ऋषि के अधूरे कार्यों को पूरा करने का संकल्प ले सकें।

आर्यसमाज संसार का भाग्य-निर्माता बने और संसार सुख-शांति और संतोष की छाया में रहता हुआ अपने चरम लक्ष्य को पा सके। वह पा सकेगा, हम अपना सुधार कर बढ़ सकेंगे। संसृति की छाया मधुमय गीतों का अभिसार कर वरद पुष्प छितरा सकेगी और मानवता की सिसकन थिरकन में परिवर्तित हो नूतन-अभिनव क्षणों का निर्माण कर सकेगी। ▭

हिन्दू धर्म रक्षक प्रचार साहित्य बांटिए

१.	चुनौती इस्लामी साम्राज्यवाद को	६० पैसे
२.	भारत के मुसलमानों का क्या करें ?—वेदभिक्षु :	५० पैसे
३.	क्या आप सारा भारत दारुल इस्लाम वनने देंगे ?	५० पैसे
४.	हिन्दुओं को चेतावनी—वेदभिक्षु :	५० पैसे
५.	मोपला (उपन्यास)—वीर सावरकर	५ रु०
६.	हम सव हिन्दू हैं—वीर सावरकर	५० पैसे
७.	पोस्टर दो प्रकार के	८० पैसे
८.	इस्लाम में क्या है ?—राकेशरानी	५० पैसे
९.	शुद्धि का मंत्र—कुंवर चांदकरण शारदा	८० पैसे
१०.	इस्लामिस्तान वनाने की तैयारियां—जहीर नियाजी	५० पैसे
११.	हिन्दू जागो ! देश वचाओ !	५० पैसे
१२.	इस्लाम—एक परिचय	५० पैसे
१३.	Bible in the Balance	६० पैसे
१४.	A Challenge to the Christian Faith	२५ पैसे
१५.	पोप की सेना का भारत पर हमला—वेदभिक्षु :	५० पैसे
१६.	पादरियों को चुनौती	५० पैसे
१७.	वाइविल को चुनौती—ओम्प्रकाश त्यागी	५० पैसे
१८.	क्या ईसा खुदा का बेटा था ?	५० पैसे
१९.	... और पादरी भाग गया	५० पैसे
२०.	Christianity Unmasked	१.०० पैसे
२१.	The Clarion Call	४० पैसे
२२.	जन-ज्ञान मासिक का जय हिन्दू विशेषांक	६ रु०
२३.	हमने इस्लाम क्यों छोड़ा ?	५० पैसे
२४.	क्या भारत का एक और विभाजन होगा ?	५० पैसे
२५.	तमिल ट्रैक्ट : क्या आप सारा भारत दारुल इस्लाम वनने देंगे ?	६० पैसे
२६.	जन-ज्ञान का महान् हिन्दू विशेषांक	६)
२७.	हिन्दू राष्ट्र के नाम मां का सन्देश	५० पैसे

१००० पुस्तकें मंगाने पर ५० प्रतिशत और

५०० पुस्तकें मंगाने पर २५ प्रतिशत कमीशन

प्रत्येक आदेश के साथ १/४ धन अगाऊ भेजें।

दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली-५

अल्पसंख्यक आयोग नहीं, मानवाधिकार आयोग

—क्षितीश वेदालंकार

भारतीय संविधान के निर्माताओं ने जब संविधान में सम्प्रदाय-निरपेक्षता, समाजवाद और लोकतन्त्र को राज्य का आधार बनाया था तब उनके मन में क्या स्वप्न थे, यह इस समय कल्पना करना कठिन है परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि उन संविधान निर्माताओं ने अपनी ओर से बहुत दूरदर्शिता का परिचय दिया था। आश्चर्य की बात यह है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् जितनी भी सरकारें आईं, वे चाहे किसी भी राजनैतिक दल की रही हों, उनमें से किसी ने भी संविधान की उन आकांक्षाओं को ईमानदारी से पूरा करने का प्रयत्न नहीं किया, बल्कि इसके विपरीत संविधान की भावनाओं का उल्लंघन करने वाले कायदे-कानून बनाने में भी संकोच नहीं किया। उदाहरण के लिये, लोकतन्त्र और सम्प्रदाय-निरपेक्षता की दृष्टि से भारत का प्रत्येक नागरिक चाहे वह किसी मत का मानने वाला हो तथा किसी भी वर्ण तथा वर्ग का हो, किसी भी प्रान्त का हो, किसी भी भाषा का बोलने वाला हो, उसके समान अधिकार हैं। मजहब, जाति, भाषा या प्रदेश के भेद से किसी भी नागरिक के साथ भेदभाव का बर्ताव करना संविधान की भावना के सर्वथा विपरीत है। राज्य सरकारों की बात छोड़ भी दें तो स्वयं केन्द्रीय सरकार ने निरन्तर संविधान की भावना के विपरीत आचरण के उदाहरण पेश किये हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि राजनैतिक दलों के सामने वोट प्राप्ति की ललक के पीछे अन्य सब बातें हेय बन जाती हैं।

अल्पसंख्यक की संकल्पना ही घातक

सभी विपक्षी राजनैतिक दल कांग्रेस (इं.) की सरकार पर यही आरोप लगाते हैं; परन्तु जब जनता पार्टी की सरकार आई थी, जिसमें समस्त विपक्षी दल ही शामिल थे, तब उसने अल्पसंख्यक आयोग के नाम से एक आयोग स्थापित करके ऐसा भयंकर पाप किया था जिसे देश का प्रबुद्ध नागरिक कभी क्षमा नहीं कर सकता। अनुसूचित और परिगणित जातियों के आरक्षण के पक्ष में शायद कुछ तर्क दिया भी जा सके, हालांकि वह भी संविधान की भावना के विरुद्ध है, परन्तु अल्पसंख्यक आयोग का निर्माण तो सरासर देश के विघटन के बीज बोना है। जब देश के प्रत्येक नागरिक को संविधान ने समानता का दर्जा दिया है, तब देश की समस्त जनता को अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक के नाम से बांटना कहां तक उचित है? अल्पसंख्यक आयोग के निर्माण के पीछे केवल राजनैतिक लाभ

की दृष्टि थी। उसमें अल्पसंख्यकों के हित की बात दिखाई नहीं देती। क्या बहुसंख्यक होना कोई अपराध है ? या अल्पसंख्यक होना कोई पुण्य का कार्य है ? परन्तु देश की जिस राजनीति ने सन् १९६५ से लेकर आज तक हमेशा बहुसंख्यक वर्ग की उपेक्षा की है, उसी राजनीति ने बहुसंख्यकों को चोर के रूप में कठघरे में खड़ा कर दिया और अल्पसंख्यकों को साहूकार बनाकर बगलें बजाने का अवसर दे दिया। ८५ प्रतिशत बहुसंख्यक हिन्दुओं का अस्तित्व १५ प्रतिशत अल्पसंख्यकों के सामने नगण्य हो गया। राजनैतिक नेता इन्हीं १५ प्रतिशत अल्पमतों को संतुष्ट करने के लिए बहुसंख्यकों की भावनाओं का लगातार निरादर करते रहे; इसीलिए अल्पसंख्यकों के तुष्टीकरण की नीति का निर्माण हुआ, क्योंकि राजनेताओं को अपनी कुर्सी उन्हीं अल्पसंख्यकों के वोटों के ऊपर टिकी हुई दिखाई देती थी।

राष्ट्रहित की उपेक्षा

आखिर राष्ट्र का अर्थ क्या होता है ? राष्ट्र केवल ईंट-पत्थरों से निर्मित या नदियों और पहाड़ों की सीमाओं से घिरे किसी भूखण्ड का ही नाम नहीं है। वह उसका केवल भौगोलिक और भौतिक रूप है। राष्ट्र की असली आत्मा तो उस भूखण्ड के निवासी ही होते हैं। राष्ट्र के उन निवासियों के कल्याण के लिए समाज शास्त्र के कुछ नियम हैं। महात्मा बुद्ध ने कभी 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय लोकानुकम्पायै" का उद्घोष किया था। महात्मा बुद्ध की उसी वाणी में से अब "बहुजन हिताय" के नारे को कांग्रेस (इं.) ने भी अपनाया है, परन्तु उसका आचरण "बहुजन हिताय" के बजाय "अल्पजन हिताय" ही है। राष्ट्रीयता का क्या अर्थ है ? यही न कि राष्ट्र के समस्त नागरिक एक राष्ट्र की विचारधारा से ओतप्रोत हों और अहर्निश राष्ट्र के अधिकतम लोगों के कल्याण के लिये प्रयत्नशील हों ! यदि कहीं अधिकतम कल्याण और अल्पतम कल्याण में परस्पर विरोध हो तो निःसंकोच रूप से अल्पतम लोगों को अधिकतर लोगों के कल्याण के लिये त्याग करना चाहिए। इसी का नाम राष्ट्रीयता है और इसके विपरीत साम्प्रदायिकता है। नीतिकारों ने स्पष्ट निर्देश दिया है—

त्यजेदेकं कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत्।
ग्रामं जनपदस्यार्थे स्वात्मार्थे पृथिवीं त्यजेत्॥

यदि किसी पूरे कुल का हित होता हो तो केवल एक व्यक्ति के हित का त्याग किया जा सकता है, क्योंकि तभी कुल या परिवार में सौमनस्य सम्भव है। यदि किसी ग्राम का हित होता हो तो एक परिवार के हित का त्याग किया जा सकता है। यदि किसी जनपद का हित होता हो तो ग्राम के हित की उपेक्षा की जा सकती है और यदि सारे राष्ट्र का हित हो तो जनपद के हित का भी त्याग किया जा सकता है। यह व्यावहारिक राजनीति है। आजकल राष्ट्र पर

प्रदेश हावी हो रहे हैं, प्रदेशों पर ग्राम हावी हो रहे हैं, गांवों पर चन्द परिवार हावी हो रहे हैं और परिवारों पर अंगुलियों पर गिने जाने वाले व्यक्ति हावी हो रहे हैं। गणित के हिसाब से इकाई के बाद दहाई, दहाई के बाद सैंकड़ा, सैंकड़ा के बाद हजार और हजार के बाद लाख तथा करोड़ आता है परन्तु यहां सारा क्रम एकदम उलट गया है। देश की वर्तमान राजनीति की यही सबसे बड़ी विडम्बना है।

विशेषाधिकार पाने की होड़

अल्पसंख्यक आयोग बनाने का परिणाम यह हुआ कि अल्पसंख्यकों को जो विशेषाधिकार दिये गये उन्हें पाने के लिये होड़ चल पड़ी और निरन्तर यह मांग की जाने लगी कि हमें भी अल्पसंख्यकों में शामिल किया जाय। यह ठीक वैसी ही बात है जैसे हरिजनों को आरक्षण देने पर अनेक स्थानों पर गैर-हरिजन भी अपने आपको हरिजन सिद्ध करने में लग गये। केरल के मुसलमानों ने यह शिकायत की है कि केवल मोपलाओं को ही पिछड़े वर्गों में क्यों शामिल किया गया? गैर—मोपला मुसलमानों को भी पिछड़े वर्गों में शामिल समझा जाय। वैसे तो मोपलाओं को पिछले वर्गों में शामिल करना सभी रीतियों से गलत है; फिर भी जब मुसलमान यह दावा करते हैं कि इस्लाम ग्रहण करते ही जातीय समानता प्राप्त हो जाती है तो ये अपने आपको पिछड़े वर्गों में शामिल करने की मांग किस मुंह से करते हैं? मुख्य बात वही है कि पिछड़े वर्गों क मिलने वाले विशेषाधिकारों का ये वैसा ही लाभ उठाना चाहते हैं जैसे अल्पसंख्यकों को मिलने वाले विशेषाधिकारों का लाभ पहले से उठा रहे हैं। पर इसमें भी किसी को सन्देह नहीं होना चाहिए कि अल्पसंख्यकों को ये विशेषाधिकार सदा बहुसंख्यकों की कीमत पर ही प्राप्त होते हैं।

मानवाधिकार आयोग ही उचित विकल्प

अन्तर्राष्ट्रीय कानून की दृष्टि से भी भारत में अल्पसंख्यक आयोग का निर्माण सरासर अवैधानिक है। अगर सरकार का कोई आयोग बनाना ही था तो वह मानवाधिकार बनाती। उस आयोग की भारत के संविधान के साथ पूरी संगति होती। अल्पसंख्यक आयोग तो अन्तर्राष्ट्रीय विधि संहिता और भारतीय संविधान दोनों दृष्टियों से गलत है। अल्संख्यक आयोग के रहते कभी अल्पसंख्यकों से आशा नहीं की जा सकती कि वे राष्ट्र की मुख्य धारा में सम्मिलित होने का प्रयत्न करेंगे। राष्ट्र की मुख्य धारा में शामिल होने के बजाय वे सारे राष्ट्र को ही अपनी अल्पसंख्यक धारा में निचोड़ना चाहेंगे। इस समय देश में यही हो रहा है। एक ओर भारतीय संविधान तथा भारतीय सिविल कोड है और दूसरी ओर अल्पसंख्यकों की अपनी अलग मान्यतायें हैं जिन पर वे आग्रहपूर्वक टिके रहना चाहते हैं। उदाहरण के लिये "मुस्लिम पर्सनल ला" ऐसा ही कानून है। भारतीय संविधान के विरुद्ध इस मुस्लिम "पर्सनल ला" को अब सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दी गई है और सुप्रीम कोर्ट ने भारत सरकार को नोटिस भी दे दिया है।

अरबवासी हिन्दुओं की सन्तान हैं

—आनन्द "सुमन"

विश्व में अनेकों सम्प्रदाय, अनेकों मत-मतान्तर हैं, किन्तु यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि वैदिक धर्म से प्राचीन कोई धर्म नहीं। आज विश्व में धर्म के नाम पर पाखण्ड को अधिक माना जाता है। कहीं मूर्तिपूजा पर झगड़े तो कहीं अंतिम रसूल होने के झगड़े, कहीं खुदा का बेटा होने का दावा। ये सारी बातें, सारी ही लड़ाई वास्तव में मानव-मस्तिष्क की उपजमात्र हैं। ईसा का काल दो हजार वर्ष से अधिक नहीं है। इस्लाम का काल केवल १५ सौ वर्षों का है। किन्तु इससे पूर्व क्या था ? जब इस विषय पर चिन्तन करते हैं तब मालूम होता है कि वैदिक धर्म सृष्टि की उत्पत्ति से ही सकल संसार को उचित, मानव मात्र ही नहीं प्राणिमात्र के लिए कल्याणकारक व सत्य मार्ग प्रदर्शित करता आ रहा है। विश्व के पुस्तकालय में एक पट्टिका लगी है जिस पर लिखा है 'ऋग्वेद' विश्व पुस्तकालय में सबसे पुराना ग्रन्थ है। ऋग्वेद संसार को ज्ञान-विज्ञान की सूझ देने वाला महानतम ग्रन्थ है।

वेद वास्तव में सनातन व प्राचीन है। वेद का प्रत्येक अक्षर सत्य व प्राणि मात्र के कल्याण का उपदेशक है ! वेद में किसी वस्तु, व्यक्ति या स्थान का वर्णन नहीं, अपितु प्राणियों में सद्भावना, एकता व ज्ञान प्राप्त कर आधुनिक तरकीब की शिक्षा का वर्णन है किन्तु आज की आधुनिक कहलाने वाली अन्धकारमय शिक्षा का नहीं। सत्य का सृष्टि के रचयिता परम पिता का यह भी एक शाश्वत सत्य है कि विश्व में शांति व प्राणियों में सद्भावना तभी सम्भव है, जब वेदों के पवित्र सन्देश को मानव जीवन में धारण कर वेदानुसार आचरण करना शुरू कर दिया जाये।

एक प्रश्न उठता है कि यदि वास्तव में वैदिक धर्म सबसे अधिक प्राचीन है, ईसाइयत व इस्लाम से पूर्व भी वैदिक धर्म ही था तब क्या अरबवासी भी आर्यों हिन्दुओं की ही सन्तान हैं ? वास्तव में इस प्रश्न का उत्तर हां ही होना चाहिए, किन्तु हमारे अरबी बन्धु इस बात को स्वीकारने को तैयार नहीं होंगे। भले ही न हों किन्तु निम्नलिखित प्रमाणों से स्पष्ट हो जाता है कि वास्तव में अरबवासी आर्यों की ही सन्तान हैं। स्मरण करें महाभारत का पांच हजार वर्ष से भी पुराना समय। महाभारत का युद्ध हुआ। कौरव और पांडव दोनों ही भाई-भाई थे, किन्तु युद्ध न्याय व अन्याय के मध्य था। युद्ध

आरम्भ हुआ। घमासान युद्ध ! विश्व के इतिहास में महाभारत से बड़ा शायद ही कोई युद्ध हुआ हो ! कौरव व पांडव दोनों ही एक वंश के थे। कुरुवंशी क्षत्रिय यह क्षत्रियों में एक वंश का नाम था। पांडव व कौरव दोनों ही कुरु वंशी क्षत्रिय थे। दोनों ही वेद के आधार पर चलते थे। अन्तर केवल इतना था कि कौरव लोभी अधिक थे। वेद की मान्यताओं को त्यागकर पाखण्ड में पड़कर घमण्डी हो गए थे। पांडव बेचारे संख्या में भी कम थे, प्रभु भक्त भी कुछ अधिक ही थे। महाभारत के युद्ध में जब पांडवों की सेना ने योगिराज कृष्ण के मार्गदर्शन से कौरवों की सेना को मार गिराया तब बचे-खुचे कौरव युद्ध स्थल पर रुकते तो अवश्य मारे जाते। वे भागे। भारत में रुकना उन्होंने उचित नहीं समझा। भागते रहे। जब समुद्र के तट पर एकान्त स्थान पर पहुंचे तो वहीं डेरा डाल दिया। रेत ही रेत, क्या खायेंगे—देखा खजूर के पेड़ ही हैं और कुछ नहीं—समुद्र का पानी भी खारा है। किन्तु जान बचाकर मुश्किल से तो एकांत स्थान मिला था। बेचारे वहीं रहने लगे। डर अब भी लगा रहता कि कहीं पांडवों को पता लग गया तो यहां भी नहीं छोड़ेंगे। तब उन्होंने सोचा कि क्यों न अपना नाम बदल लें। बस, जो कुरुवंशी क्षत्रिय थे वही कुरु के स्थान पर कुरेश व वंश के स्थान पर कबीला अर्थात् कुरेश कबीला कहलाने लगे। समुद्र के किनारे वाले खाली स्थान को उन्होंने अरब कहना आरम्भ कर दिया। कुरुवंशी क्षत्रियों ने स्वयं को कुरेश कबीला तो कहा किन्तु उनकी मान्यताएं वैदिक ही रहीं। वेद के पवित्र सन्देश का अनुवाद धीरे-धीरे वहां की मूल भाषा अरबी में भी किया गया। कुरुवंशियों ने जो सनातन धर्म के अनुयायी थे अपनी पूजा पद्धति के नियम नहीं बदले। दैनिक अग्निहोत्र व संध्या तो वे करते ही थे अब उन्होंने मूर्त्ति पूजा भी आरम्भ कर दी उन्होने शिवलिंग की स्थापना की व घर-घर में शंकर, पार्वती व गणेश की मूर्तियां पूजी जाने लगीं। नगर के मध्य स्थल में एक विशाल पत्थर को शिवलिंग बनाकर धरती में गाड़ दिया गया। वही आज संगे असवद कहलाता है। पुरानी सारी क्रियाओं के साथ उन्होंने कुछ नयी बातें अवश्य अपनाली थीं। केवल पांडवों के भय से कुरुवंशीय राजपूत कुरेश कबीलों के नाम से जाने-जाने लगे। यही कुरेश धीरे-धीरे फैलते गये। अरब एक गांव से देश बन गया। संस्कृत व अन्य स्थानीय भाषाओं का मिश्रण करके वहां कुरु वंश ने अरबी भाषा

बनायी। धीरे-धीरे ये कुरैश कहलाने लगे । पड़ोसी देशों से इनका व्यापार शुरू हुआ और इनका वंश पनपता गया। १५०० वर्ष पूर्व हजरत मुहम्मद आए। वास्तव में मुहम्मद शब्द योगिराज कृष्ण के नाम का ही अंश है। योगिराज कृष्ण का एक नाम मदनमोहन भी था। कुरुवंशी राजपूतों ने मदन शब्द का मद और मोहन शब्द का मोह लेकर मुहम्मद शब्द तैयार किया। इसी प्रकार के अनेकों प्रमाण अरबी भाषा में भी मिलते है। मुहम्मद का जन्म अब्दुल मुत्तलिब के पुत्र अब्दुल्ला के घर में हुआ। स्वयं मुहम्मद साहब १६ वर्ष की अवस्था तक महादेव की मूर्तियां बेचते थे व शिवलिंग की उपासना करते थे। मुहम्मद साहब ईमानदार थे। धीरे-धीरे उनका व्यापार बढ़ा। मुहम्मद का सम्पर्क खदीजा बेगम से हुआ। खदीजा बेगम वास्तव में वेद एवं अन्य आर्ष ग्रन्थों की ज्ञाता थी। सच्ची आर्या थी। पहले व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ा। फिर विवाह कर लिया। विवाह के समय खदीजा बेगम की उम्र मुहम्मद साहब की माता से भी अधिक थी। खदीजा बेगम ने मुहम्मद साहब द्वारा वेद के कुछ नियमों का अरबी रूपान्तर अरबवासियों के सम्मुख प्रस्तुत किया। अरबवासियों ने बहुत पसन्द किया। सर्वत्र मुहम्मद साहब की प्रशंसा होने लगी। किन्तु दुर्भाग्य कि खदीजा बेगम अधिक समय जीवित नहीं रह सकी और मुहम्मद साहब पढ़े लिखे थे नहीं कि वेद के तत्त्व को समझते। उन्हें जैसे साथी मिले वैसे ही उन्होंने इस्लाम को आगे बढ़ाया। आज इस्लाम का जो स्वरूप हमारे सामने है वह असली नहीं। वास्तव में यदि खदीजा बेगम जीवित रहती तो इस्लाम सच्चे अर्थों में वैदिक धर्म का ही अंग होता। किन्तु आज इस्लाम के अनुयायी स्वयं को वैदिक धर्म से पृथक् मानते हैं। चर्चा थी कि क्या अरब वासी आर्यों की संतान हैं? वास्तव में सत्य ही है कि अरबवासी आर्यों के भाई हैं। सत्य तो यह है कि कुरैश कबीले वाले वा कुरैश कबीले से निकले। प्रत्येक कबीले के सदस्य कुरुवंशी राजपूतों की सन्तान ही हैं। कहीं और से नहीं आये। समय की मांग है कि वैदिक धर्म के अनुयायी जागृत हों व संगठित होकर अपने वंश के पिछड़े, बिगड़े व रूठे हुए वंशजों को चाहे वे भारतीय मुस्लिम या ईसाई हों पुरानी मान्यताओं पर वापस लाकर उनका पुनर्मिलन करें व सकल विश्व को शांति व एकता का संदेश दें।

वेदभिक्षु: जो जिनकी अब याद ही रह गई है

—ज्ञानेन्द्रसिंह सैनी

पं० भारतेन्द्रनाथ जी जो बाद में वेदभिक्षु: जी के नाम से प्रसिद्ध हुए, हमसे जुदा हो गये हैं किन्तु भारतीय समाज पर अपनी अमर छाप छोड़ गए हैं। उनके अधूरे कामों को समाज पूरा करता रहेगा। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती राकेश-रानी जी. उनकी विदुषी लड़कियां तथा उनके दामाद सभी इस योग्य हैं कि जो शमा वे जलाकर गए हैं वह जलती रहे और उस रोशनी में हिन्दू समाज के भाई-बहन और नवयुवक आगे बढ़ते रहेंगे तथा अपने देश और राष्ट्र की सेवा करते रहें। वेदभिक्षु: जी की यही इच्छा थी कि जो ज्योति उन्होंने 'जन-ज्ञान' और 'वेदमन्दिर' के रूप में समाज के सामने उपस्थित की है वह हमेशा तेजी से जलती रहे और हमारा संगठन मजबूत बना रहे। समाज उनके उपदेशों से हमेशा लाभान्वित होता रहेगा और 'जन-ज्ञान' तथा 'वेदमंदिर' के लिए सहयोग देता रहेगा। उनकी स्मृति में दर्ज कुछ शेर ध्यान से पढ़ियेगा—

मरने वाले मरते हैं लेकिन फना होते नहीं
वे हकीकत में कभी हम से जुदा होते नहीं।
तुम नहीं लेकिन तुम्हारी उल्फत अभी तक दिल में है
बुझ चुकी है शमा फिर भी रोशनी महफिल में है।
जाने वाले कभी नहीं आते
जाने वाले की याद आती है।
जो टूट कर भी कभी नहीं टूटते
कुछ ऐसे भी रिश्ते होते हैं।
जिन्दगी को सम्भाल कर रखिए
जिन्दगी मौत की अमानत है।
पसीना मौत का माथे पे आया आईना लाओ
हम अपनी जिन्दगी की आखिरी तसवीर देखेंगे।
लोग कहते हैं बदलता है जमाना अक्सर
मर्द वो हैं जो जमाने को बदल देते हैं।
हजारों साल नर्गिस अपनी बेनूरी पे रोती है
बड़ी मुश्किल से होता है चमन में दीदावर पैदा। ▭

आइए, मुस्कराएं

मजिस्ट्रेट—"वकील साहब का कहना है कि आप में और आप की पत्नी में कुछ कहा-सुनी हो गई है। इसलिए आप तलाक की मांग कर रहे हैं।"

पति—"जी कहा-सुनी नहीं, सुना-सुनी। कहा तो सब कुछ मेरी पत्नी ने ही है।"

× × ×

नन्हे टिंगु हिसाब के सवाल हल करने में व्यस्त। रोजाना पिता से मदद मांगने वाले आज किसी तरह की सहायता के मोहताज नहीं थे। पिता से रहा नहीं गया। बोले, "टिंगु जी, क्या हम आपकी कुछ मदद करें?"

"ओह, नहीं पापा," टिंगु बोले—"सवालों का गलत हल तो मैं बिना आप की सहायता के भी निकाल ही लूंगा।"

× × ×

थियेटर का मैनेजर—"गीता जी, आप का पिछला नाटक बहुत ही श्रेष्ठ रहा। दुःखी नायिका के रूप में आप का पीड़ा-प्रदर्शन अत्यन्त स्वाभाविक रहा। सचमुच इसे आज की उपलब्धि माना जा सकता है।"

नायिका—"सचमुच मैं उस समय बड़ी पीड़ित थी। मेरे बाएं सैण्डिल की कील उभरी हुई थी और रह-रह कर पांवों में चुभ रही थी।"

मैनेजर—"अच्छा! तब ईश्वर के लिए वह कील आप अंतिम शो तक वैसी ही रहने दीजिएगा।"

× × ×

"एक सर्वांगपूर्ण विश्वकोश।" बाहर दरवाजे पर दस्तक देते हुए पुस्तक-विक्रेता ने आवाज लगाई—"दुनिया में जो कुछ आप नहीं जानते, वह इस पुस्तक में मिल जाएगा।"

"क्यों हमारी नींद में खलल डाल रहे हो?" गृहपति ने नाराज होते हुए कहा, "हमें इस पुस्तक की जरूरत नहीं। हम विवाहित हैं।"

× × ×

"मुझे इस दुनिया में ज्यादातर लोग बेवकूफ कहते हैं। पर मेरा ख्याल है, दोस्त होने के नाते तुम तो मुझे ऐसा नहीं कहोगे।"

"तुम क्या समझते हो? दुनिया में हजारों-लाखों लोग हैं जिन्हें मैं बेवकूफ कह सकता हूं। भला तुम्हें क्यों कहूंगा?"

× × ×

(शेष पृष्ठ ३२ पर)

अमेरिकी थालियों में हिन्दू भोजन

नेपाल नरेश के सम्मान में दिए गए राजकीय भोज में राष्ट्रपति रेगनने कहा—सीरिया ने अमेरिका के मृत पायलट को सौंप दिया है। यह पायलट सीरियाई ठिकाने पर धावा बोलने गया था और उसी दौरान मारा गया।

रेगन ने कहा, "मैं उसके बारे में बहुत चिन्तित था, क्योंकि मैं उन्हें फिरौती वसूलने की स्थिति में नहीं रहने देना चाहता। उसके मामले में तो हम बच गए। हमें समझौते की कोशिश करनी पड़ रही है।"

समझौते की यह बातचीत उस पायलट के लिए है, जो जिन्दा पकड़ा गया है, पायलट अश्वेत है। राष्ट्रपति पद के अश्वेत उम्मीदवार जेस्से जेक्सन ने उसकी रिहाई के लिए पैरवी की है। लेकिन सीरियाई उस पायलट को अश्वेत नहीं, अमेरिकी मानते हैं। सीरियाई कहते हैं कि वह उसे तब तक बंधक रखेंगे, जब तक अमेरिका लेबनान से बाहर नहीं हो जाता और जंग बन्द नहीं हो जाती।

रेगन का कहना था कि चूंकि 'जंग नहीं हो रही है इसलिए पायलट को छोड़ दिया जाना चाहिए था। रेगन ने कहा—"मुझे आश्चर्य है कि वे उसे 'युद्धबन्दी' बता रहे हैं। क्या वे यह कहना चाहते हैं कि हम 'जंग' पर हैं ? मेरे मुताबिक तो हम जंग पर नहीं हैं।

इस राजकीय भोज के मेहमानों में चार्ल्स वीक भी थे। वीक अमेरिकी सूचना समिति के अध्यक्ष हैं। उन्होंने भोज के दौरान कहा कि ब्रिटेन की प्रधानमन्त्री मार्गरेट थैचर ग्रेनाडा में अमेरिकी दखलंदाजी के खिलाफ इसलिए बोलीं, क्योंकि वे एक औरत थीं। पत्रकारों ने इस बात का खुलासा चाहा। इस पर वीक ने कहा—"यह पूछना आपके लिए उचित नहीं होगा। ज्यादा कहने से तनाव बढ़ेगा और दुःखद स्थिति पैदा होगी।" वीक के इस बड़बोलेपन को मर्दाना हेकड़ी माना जाता है।

इस भोज में खाद्य पदार्थों को नेपाल नरेश के हिन्दू होने को ध्यान में रख कर पकाया गया था। नेपाली राजदूत शेख बहादुर थापा ने प्रोटोकोल अफसर और रसोइए को गाय की चर्बी, बछड़े का मांस, सूअर का सुखाया हुआ मांस और मछली नहीं पकाने की सख्त हिदायत दे दी। इस पर रसोइए ने पूछा, "तब खाने को बचेगा क्या ?" थापा ने कहा, "बटेर, भेड, मृग मांस।"

भारतेन्द्रनाथ अमर हैं

—प्रो० सत्यकाम वर्मा
(दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली)

आज मैं जब कभी आर्य प्रतिनिधि सभाओं से निकाले जा रहे समाचारपत्रों को देखता हूं, तो उस समय के पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के मुखपत्र 'आर्य' की याद आ जाती हैं, जब पं० भीमसेन जी विद्यालंकार के सम्पादकत्व में यह पत्र लाहौर से और बाद में अम्बाला छावनी से निकलता था, तो हम उसे आर्यसमाजों का समाचारपत्र मानते थे। तब एक दिन अचानक ही सम्पादक के रूप में श्री भारतेन्द्रनाथ का नाम पढ़ा और पाया कि पत्र का हुलिया ही बदलना शुरू होगया। अब यह पत्र धार्मिक समाचार पत्र के अतिरिक्त साहित्यिक रुचि से भी सम्पन्न हो गया था। उसी समय से 'राकेशरानी' और 'भारतेन्द्र' के नाम से कविताएं इस पत्र का अंग बन गईं। कभी बहुत पहले ऐसा सत्यभूषण योगी के समय लाहौर में भी हुआ था। किन्तु अब इसमें अन्य लक्षण भी इसे साहित्यिक रुचि के पाठकों के निकट ले आए।

फिर एक समय आया, जब आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ह।एक लम्बे काल के लिए विवाद का विषय बन गई। परन्तु हमने पाया कि वह पत्र फिर भी श्री भारतेन्द्रनाथ के सम्पादकत्व में निकलता रहा, यद्यपि अब उसका प्रकाशन दिल्ली से होने लगा था। आर्थिक स्रोतों की परवाह बिना किए भी इस पत्र को अपने प्राणपण से चलाने वाला उत्साही युवक अपना जीवन ही इस क्षेत्र को अर्पित कर चुका था। बाद में आर्य प्रतिनिधि सभा का पत्र फिर से जालंधर आदि चला गया, किन्तु दयानन्द का मतवाला भारतेन्द्र तब तक नये स्वप्नों में खो चुका था। 'दयानन्द संस्थान' उसी स्वप्नद्रष्टा का खड़ा किया हुआ वह प्रासाद है, जिसे जन्म से लेकर आज तक कोई प्रतिनिधि सभा न बना सकी। आर्यसमाज के जन्मकाल से जितना भी अमर साहित्य सृजन हुआ था, उसे कोई भी सभा या प्रकाशक दोबारा छापने की न सोच सकता था। किन्तु अकेले भारतेन्द्रनाथ के दीवाने दिल ने यह यह साहसिक कदम उठाने के लिए उसे बाध्य कर दिया और वह अपनी जोगन पंडिता राकेशरानी के साथ अपनी झोली लेकर मैदान में उतरा। पता नहीं कि उसकी झोली में कितना आया, परन्तु जो कुछ वह इतने थोड़े समय में हिंदी और अंग्रेजी के जगत् को दे गया, वह इतना अधिक है कि उसकी तुलना किसी भी महाकोष से नहीं की जा सकती। उसने एक बार फिर से पुराने और अमूल्य आर्य साहित्य को इतने बड़े पैमाने पर लागत से

भी कम मूल्य में वितरित करके आर्य साहित्य को घर-घर तक पहुंचाने का अपना स्वप्न बहुत अंश तक पूरा कर दिया। उसके इस महान् प्रयास को देखकर विदेशों के आर्यजनों ने उनसे अंग्रेजी एवं अन्य भाषाओं में भी साहित्य प्रकाशन की मांग की। इसी कारण भारी आर्थिक घाटा सहकर भी इस दम्पति ने हिन्दी 'जनज्ञान' के साथ अंग्रेजी में भी इसी नाम से पत्र निकालना आरम्भ किया। बहुत समय तक विदेशों में और भारत में भी ये दोनों पत्र सहस्रों ऐसे घरों में भी वेदों एवं दयानन्द का संदेश पहुंचाते रहे हैं, जो अन्यथा आर्यसमाज के सम्पर्क में नहीं थे। आज अंग्रेजी में इस पत्र का प्रकाशन किन्हीं कठिनाइयों के कारण बंद हो गया हैं, किन्तु हिन्दी में अब भी यह पत्र आर्यजगत् का सर्वोच्च पत्र कहा जा सकता है। अभी अजमेर शताब्दी के अवसर की ही बात है, जब मेरे कई विदेशी मित्रों के सामने बड़े व्याकुल हृदय से उन्होंने मुझसे कहा था—'आप संभाल लीजिए न इसके सम्पादन का भार!' मैंने हां भी कर दी थी। किन्तु कौन जानता था कि पुन: दर्शन होने से पहले ही वह महारथी स्वयं ही इस असार दुनिया से कूच कर जाएगा।

परन्तु, हिंदूमात्र की रक्षा के कर्णधार भारतेन्द्र, तुम आज जिस लोक में भी विचरण कर रहे हो, निश्चिन्त रहो, तुम्हारी आवाज भारत में अब भी गूंज रही है और भविष्य में भी गूंजती रहेगी। सच्चे अर्थों में तुम्हारी सहधर्मिणी और सहचरी पण्डिता राकेशरानी इस मशाल को अब भी उठाए हुए हैं। आर्यजगत् में उसके भाइयों का परिवार इतना विशाल बना गए हो तुम, कि वह इस मशाल को कभी बुझने न देगा और फिर तुम्हारा और तुम्हारी सहधर्मिणी काम केवल तुम्हारे जीवनकाल तक अमर रहने के लिए तो रखा भी नहीं गया था। याद रखो जब तक दयानन्द का नाम जीवित है और जब तक हिन्दी भाषा जीवित है, तब तक तुम्हारा नाम भी सदा जीवित रहेगा, क्योंकि अगर तुम कुछ और न भी करते, तब भी ऋषि दयानन्द के वेद भाष्य को घर-घर तक पहुंचाकर, और वह इतने कम मूल्य में कि उसे सामान्य जन भी घरीद सके, तुमने जो उपकार हिन्दी-भाषी संसार पर किया है, वह किसी के मिटाए या भुलाए भी भुलया और मिटाया न जा सकेगा।

और, अभी तो तुम्हारी चिरसंगिनी तुम्हारी मशाल को उठाए हुए है। पहले रथ दो पहियों पर चल रहा था, अब अकेले ही उसे चलाना है वह सरलता से हारने वाली नहीं है। तुम्हारे साथी भी तुम्हारे मिशन को अपूर्ण न रहने देंगे।

और मरते तो वे हैं जो जीवन में ही मर चुके होते हैं। तुम तो जीवन को

जीत कर अपने देह त्यागने से पूर्व ही अपने कार्यों एवं यज्ञ के कारण अमर हो चुके थे, अतः भौतिक मृत्यु तुम्हारी अमरता में बाधा भी कब पहुंचा सकती है ?

कुछ और हुआ करते हैं जो यश की इच्छा में मरते हैं,
तुम यश को कब के जीत चुके, अब देह मरी तो क्या गम है?
जब तक वेदों का अमर ज्ञान, जब तक हिन्दी का है निशान,
तब तक जानेंगे दयानन्द को लोग तुम्हारे माध्यम से ।
यह नाम 'भिक्षु:' रखने से भी पहले से तुम थे 'भिक्षु:' बने,
अब जग 'अमरत्व' तुम्हें देगा, तुम जीवन में ही 'अमर' बने । ▭

(पृष्ठ २८ का शेष)

एक साहित्यिक गोष्ठी में जैसे ही एक कवि ने ये पंक्तियां पढ़ीं—'यह मस्त पवन यह हवा अपनी जगह है, लेकिन मेरे दिल का जख्म अपनी जगह है ।'

इस को सुन कर एक कवि महोदय बोल पड़े—"पहली पंक्ति का सम्बन्ध दूसरी से तो नहीं जुड़ता !" कवि तुरन्त बोल पड़े—"कुछ नहीं, यह अपनी जगह है, वह अपनी जगह है ।

× × ×

एक महिला अपनी शादी का विज्ञापन देने के लिए समाचारपत्र के दफ्तर में फार्म भर रही थी । जैसे ही उम्र का कालम आया, वह कुछ सोचने लगी । ऐसे में काउन्टर क्लर्क ने यह कहते हुए चुटकी ली—"बहन जी, जल्दी उम्र लिख डालिए, आप जितनी देर कर रही हैं उतना ही समय बढ़ता जा रहा है ।"

× × ×

एक यात्री—"चलती बस में से उतरना हो तो कब उतरना चाहिए ?"

दूसरा—"वैसे तो चलती बस में से उतरना ठीक नहीं, फिर भी यदि उतरना ही हो तो अस्पताल के नजदीक उतरना चाहिए ।

× × ×

अध्यापक—"बच्चो, तुम पढ़ते क्यों नहीं ?" तुम सबने सौ में से चालीस, बीस और पंद्रह नम्बर ही लिए हैं । जब हम पढ़ते थे तो १०० में से ८६, ६२ और ६५ नम्बर लिया करते थे ।

एक छात्र—"सर, तो फिर आपके अध्यापक योग्य होंगे ।

× × ×

लड़का—मां, यह भैंस क्या कर रही है ?

मां—बेटा, जुगाली कर रही है ।

लड़का—ओह, मैंने तो समझा, यह टुथपेस्ट कर रही है ।

× × ×

शहीद लेखराम की वसीयत के उत्तराधिकारी महात्मा वेदभिक्षु : जी

—स्वामी अग्निवेश

पंडित लेखराम ने अपनी वसीयत में कहा था कि "चाहे कुछ भी हो आर्यसमाज से लेख का कार्य बन्द न होने पाए।" उनके बाद आर्य जगत् के इतिहास में जिस अकेले आदमी ने इस वसीयत का उत्तराधिकार अपने ऊपर लिया और किसी की परवाह किए बिना अपनी जिन्दगी और जवानी को इसी मिशन के लिए लगा दिया, उसका अचानक हम सबके बीच से चले जाना बहुत बड़ी क्षति है। पण्डित भारतेन्द्रनाथ जी एक सच्चे सिपाही की तरह आखिरी सांस तक इस मिशन को पूरा करने का दर्द और वेचैनी अपने में समेटे रहे। उनका वह दर्द ही तो था जो वे बुलन्द हौसले के साथ न केवल आर्य जगत् बल्कि धार्मिक, आध्यात्मिक और राष्ट्रवादी जगत् में बहुमूल्य साहित्य का भण्डार अपने पीछे छोड़ गए।

उनसे मेरा परिचय उस समय से था जब वे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मुखपत्र 'आर्योदय' के यशस्वी सम्पादक के रूप में अपनी लेखनी से अग्निवर्षा किया करते थे। सन् १९५६ में उच्च शिक्षा के लिए कलकत्ता जाने के साथ ही मेरा सम्पर्क आर्यसमाज से हुआ और मैं विधान सरणी स्थित आर्यसमाज में जाने आने लगा। थोड़े ही दिनों में पंजाब में आर्यसमाज ने हिन्दी रक्षा आन्दोलन छेड़ दिया। उसमें भले ही आर्यसमाज के तत्कालीन कुछ नेताओं के नाम अखबारों में छपे हों, लेकिन वे सिर्फ भारतेन्द्रनाथ जी ही थे जिनकी ओजस्वी लेखनी के माध्यम से उस प्रचण्ड आन्दोलन की लपटें सुदूर कलकत्ता में हम तक पहुंच रही थीं। हम तक ही क्या, देश भर के आर्यसमाजियों में इस आन्दोलन के लिए मरने-मिटने की प्रेरणा उनकी लेखनी से मिल रही थी। बाद में पोप के भारत आगमन पर जब सारे देश के सत्तालोलुप चाटुकार आगे बढ़चढ़ कर उसकी आगवानी में स्वागत की तैयारियां कर रहे थे, तब स्वर्गीय भारतेन्द्रनाथ जी ने सबसे आगे बढ़कर ईसाई मिशनरियों का पर्दाफाश करके रख दिया। उन दिनों उनके आग उगलते पोस्टर और पर्चों में दिए गए नारे "पोप, भारत से वापिस जाओ" आदि आर्य-

समाज के युवा मानस में तूफान खड़ा कर रहे थे। उनके इस अभियान का व्यापक असर हुआ यह मैं जानता हूं।

मैं स्वयं और मेरे बहुत-से पढ़े-लिखे साथी उनके इस अभियान से बेहद प्रभावित हुए। उनका एक-एक शब्द आह्वान होता था जो हमारे भावुक हृदय पर ऐसी अमिट छाप छोड़ता था, जिसे भुलाया नहीं जा सकता। उस अभियान का मुझ पर इतना असर रहा कि थोड़े दिनों बाद जब मैं कलकत्ता के ही प्रसिद्ध सेण्ट जेवियर कॉलेज में कानून एवं व्यापारशास्त्र का प्राध्यापक नियुक्त हुआ तो उस कॉलेज में अपनी नौकरी की परवाह किए बगैर मैं ईसाई मिशनरी विरोधी साहित्य बांटने लगा और वहां के छात्रों को उनकी अराष्ट्रीय गतिविधियों के बारे में जानकारी देने में विशेष रुचि लेने लगा। उस समय और बाद में भी स्वर्गीय भारतेन्द्रनाथ जी के अथक परिश्रम, सूझबूझ और साहस से इतना विपुल साहित्य प्रकाशित हुआ कि देश और विदेश के ईसाई मिशनरी बुरी तरह घबरा गए—खासकर वे लोग जो भोलेभाले गरीब आदिवासियों को तरह-तरह के प्रलोभन देकर ईसाइयत में दीक्षित करने के षड्यन्त्र में लगे थे। मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूं कि पंडित जी के उस अभियान को यदि आर्यसमाज पूरे संकल्प और प्रयत्न से चलाता तो अराष्ट्रीय गतिविधियों का वह घिनौना जाल हमेशा के लिए भारत की जमीन से खत्म हो जाता। भारतेन्द्रनाथ जी के संपर्क में आये श्री ब्रह्मदत्त भारती जी ने ईसाइयत के षड्यन्त्रकारी इतिहास पर व्यापक प्रकाश डाला और पंडित जी ने उस पर कुछ साहित्य छापा था। हमने उसमें से उद्धृत कर एक पुस्तिका भी छापी थी—'मैक्समूलर एक्सपोज्ड'। कलकत्ते में इस छोटी-सी पुस्तिका के वितरण ने एक हलचल-सी पैदा कर दी थी।

अभी पिछले वर्ष जब महर्षि दयानन्द बलिदान शताब्दी समारोह का निमंत्रण देने मैं स्वामी इन्द्रवेश जी तथा रामशरण जी जोशी के साथ इंग्लैण्ड व यूरोप की यात्रा पर गया था तो पश्चिमी जर्मनी के एक प्रसिद्ध प्राच्य विद्या केन्द्र हाइडलबर्ग विश्वविद्यालय में मुझे आमन्त्रित किया गया। वहां एक गोष्ठी में जब मैंने मैक्समूलर से सम्बन्धित उपरोक्त पुस्तिका से उद्धरण दिए तो पहले तो उन्होंने यह कहकर टाल दिया कि ये उद्धरण गलत हैं। पर जब मैंने उन्हीं की लाइब्रेरी से 'लाइफ एण्ड लैटर्स आफ फ्रैडरिक मैक्समूलर' पुस्तक से वे अंश दिखा दिये तो उपस्थित सभी जर्मन विद्वानों के चेहरे सफेद पड़ गए। उस समय मुझे इस अपनी छोटी-सी विजय पर स्वर्गीय भारतेन्द्रनाथ जी की सेवाएं याद आयीं। जो अमूल्य साहित्य वे प्रकाशित कर गए उसकी कीमत लोग रोजमर्रा भले ही न जान

पायें, लेकिन इस तरह के अविस्मरणीय मौके जरूर आते हैं, जब पंडित भारतेन्द्रनाथ जी की बेजोड़ साहित्य सेवा को याद किया जाता रहेगा।

उनके द्वारा वानप्रस्थ की दीक्षा लेकर महात्मा वेदभिक्षु: बनने के बाद से मैं उनसे अधिक सम्पर्क नहीं रख पाया। परन्तु विशाल वेदों से लेकर लघु ट्रैक्टों के प्रकाशन तक में उनका पुरुषार्थ और पराक्रम किसी से छिपा नहीं है। सच तो यह है कि वे एक योद्धा की तरह जिए और योद्धा की तरह चले गए। मैंने उन्हें आर्यसमाज की पद-पदवियों के मोह से दूर एक ऐसे योद्धा की तरह लड़ते देखा है, जिस पर कीचड़ उछाल कर कुछ लोग भले ही खुश हो लिए हों, लेकिन कोई उन्हें हरा नहीं पाया। मैंने उन्हें पन्त अस्पताल में जीवन के आखिरी दिनों में भी देखा है, जब लगातार रक्त वमन के बाद भी उनके चेहरे पर अजेय योद्धा का वही संकल्प था। ऐसा लगता था कि मौत भी शायद उन्हें परास्त नहीं कर पा रही थी।

महात्मा वेदभिक्षु: ने अपने जीवन से यह दिखा दिया कि व्यक्ति के पास साधन न भी हों किन्तु यदि सशक्त मनोबल और अपने मनोबल से दूसरों को अनुप्राणित करने की क्षमता हो तो वह चिर-स्थायी काम कर सकता है। साधन तो उसके इर्द-गिर्द अपने आप इकट्ठे हो सकते हैं। अपने जीवन के अन्तिम दिनों तक आर्यसमाज को एक सशक्त संगठन तथा महर्षि दयानन्द के विचार के अनुरूप एक तेजस्वी और क्रांतिकारी आन्दोलन के रूप में देखने का सपना उनकी आंखों में तैरता रहा। अजमेर शताब्दी और उसके बाद हम लोगों द्वारा दिल्ली में मनाये गये महर्षि दयानन्द बलिदान शताब्दी समारोह के बाद उन्होंने दिल्ली में एक विशाल आर्य कार्यकर्त्ता सम्मेलन बुलाने का विचार रखा था। इस सिलसिले में टेलीफोन पर मुझसे उनकी बातचीत हुई थी। उनका प्रस्ताव था कि कुछ लोग बैठ कर कार्यकर्त्ता सम्मेलन की विस्तृत रूपरेखा बनाएं।

उनके चले जाने के बाद हमें उनके महान् कार्य को गति देने तथा उसे प्रभावशाली ढंग से आगे बढ़ाने में अपनी योग्यता की परख करनी चाहिए।

आपका सहयोग चाहिए

आप इस प्रकार भी सहयोग दे सकते हैं कि कुछ राशि नियमित रूप से प्रति मास जो सुविधापूर्वक धर्म के लिए निकाल सकें, भेजें। (चाहे एक रुपया हो अथवा १००० रु०) यह सहयोग हमारे लिए इस संकट की घड़ी में तथा मुकदमों से निबटने में आएं, बहुत बड़ा संबल होगा— —राकेशरानी

तोड़ दिया विधि ने बंधन अटूट धागे का

—वसुन्धरा

हाय ! २१ दिसम्बर तूने यह क्या किया !
प्यारा-प्यारा भाई बहन से जुदा किया।

मेरे प्यारे भैया, कहां गए ? आपको कहां खोजूं ? कहीं भी आपकी वह प्यारी बोली सुनने को नहीं मिलती और न ही वह मीठी फटकार।

५२ वर्षों तक साथ-साथ रहे, साथ खेले, साथ लड़े, साथ-साथ बड़े हुए। न जाने क्यों मेरे पूज्य पिता व माताजी ने मेरा नाम वसुन्धरा रखा ? क्या इसलिए कि स्वयं तो देश व समाज का कार्य करके अपना नाम अमर कर जायें और मैं सचमुच पृथ्वी की तरह सभी तरह की यातनाएं सहती रहूं। मेरे भैया और मैं उन महान् माता-पिता की सन्तान हैं जिन्होंने काकोरी काण्ड में मुख्य भूमिकाएं निभाइ। अंग्रेजी हकूमत की आंखों में धूल झोंकने के लिए ही जिन्होंने अपनी शादी रचाई। यहां तक कि भगतसिंह मेरे नाना के ग्राम टोपरी में लालसिंह नाम रखकर तीन मास रहे थे। वे मेरे पिताजी के पक्के दोस्त थे। भैया जब गर्भ में थे तो पिताजी ने ऐसी व्यवस्था कर दी थी कि एक नया कवि प्रतिदिन राष्ट्रीय कविताएं माताजी को सुनाया करता था। जब चार मास के थे, तभी पिताजी को किसी अंग्रेज अफसर ने पान में जहर खिला दिया था। पिताजी बीमार हो गए और पांच वर्ष तक बीमार रहे। हमारी माताजी पिताजी से कहा करती थीं कि लड़की के बिना मेरा गृहस्थ अधूरा रह गया। फिर मैंने जन्म लिया। महात्मा काली कमली वाले (ऋषिकेश) ने शर्त लगाई थी कि लड़का होगा और माताजी लड़की चाहती थीं। मैं जब छः दिन की थी तो माताजी ने बड़े गर्व से कहा कि देखो, लड़की हुई और कितनी मोटी-ताजी। हमारे पिताजी राजा-महाराजाओं की तरह रहते थे। कलकत्ते में उनका इत्र आदि का कारखाना था। राष्ट्रीय आन्दोलन में वे बाद में कूदे और क्रांतिकारियों को शस्त्रादि विदेशों से लाकर देने लगे। पहले हीरों का कार्य करते थे। परन्तु उनकी बीमारी ने और उनकी मृत्यु के कारण हम दोनों भाई, बहिन और माताजी पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा। माताजी डलहौजी में अकेली रह गई। वे बताया करती थीं कि मृत्यु से चार-पांच दिन पहले भारतेन्द्र (मेरा भैया) दो बिस्कुट लाया। उसने

एक मुझे दिया और एक आप लिया। उन्होंने मांगा तो अंगूठा दिखाया और नीचे भाग गए। बिस्कुट दूसरों को बांट दिए। तेरे से मांगा तो तूने आधा तोड़कर उन्हें दिया। तब पिताजी ने कहा कि "शारदा, यह लड़का तो देश की ही सेवा करेगा और मुन्नी आखिरी समय तुम्हारी सेवा करेगी।" पिताजी की यह बात बारह-तेरह वर्ष पहले कही हुई। अक्षरश: सत्य निकली। मेरे भैया जेहलम गुरुकुल गए हुए थे और मैं ही आखिरी समय उनके पास थी। भैया जी तो तीन दिन बाद आए थे। तब से अब तक मेरे महान् भैया ने मुझे मां और बाप दोनों का वात्सल्य दिया। दुलार-फटकार सभी कुछ तो माता-पिता की तरह थी। जब-जब मेरे ऊपर कोई भी मुसीबत पड़ी, तभी अचानक मेरे पास आ खड़े हुए। जैसे उनकी आत्मा पहले ही जान लेती थी कि मेरी बहिन पर कोई विपत्ति आई है और वह मुझे बुला रही है। कार्यों में इतने व्यस्त रहने पर भी चाहे दो मिनट को ही आयें, परन्तु मेरे पास अवश्य आते थे और कहा करते थे कि मेरी बहिन तो सेठानी है। अब अकेलापन सहन नहीं होता। न मैं रो सकती हूं, न किसी से कुछ कह सकती हूं। अपने भैया को ढूंढ़ती रहती हूं। मेरे भैया को हमेशा मुझसे यही शिकायत रहती थी कि "वसुन्धरा, तुम आकर दो-चार दिन नहीं ठहरतीं। तुम वेद मन्दिर आकर नहीं रहतीं।" मैं अपने गृहस्थ में व्यस्त थी। मैंने शक्तिनगर एक्स्टेंशन में मकान बनवाया तो भैया जी दिन में अपने कार्य में व्यस्त रहने के कारण रात्रि को टार्च जला-जला कर मकान का हर एक कोना अपने मित्रों को दिखाते। उनके मन में इतना प्रेम था मेरे लिए। सोचते थे कि अपनी बहिन के लिए कुछ कर दूं। वे मेरे घर में सब सुख-शांति देखना चाहते थे। अजीब प्यार था उनके मन में मेरे लिए। उनके विरोधियों से भाई-बहिन का प्यार सहन नहीं हुआ और वे कहने लगे कि 'बहिन का नहीं, यह तो इन्होंने अपना मकान बनवाया है।' छान-बीन शुरू करवाई। वह महान् भैया ही था जिसने आर्यजगत् के लिए अपना घर-बार माता-पिता का बनाया हुआ सब कुछ न्यौछावर कर दिया, मकान जो लिया (विवेक विहार में) वह भी समाज के हित के लिए अर्पित कर दिया। अपने जीवन में मुझे ऐसे महान्, ऐसे निष्पाप, निडर भैया की बहिन कहलाने का गर्व है। परन्तु मुझे दु:ख इस बात का है कि मुझे भगवान् ने एक भी गुण ऐसा नहीं दिया, जिससे मैं भी भैया के साथ कुछ कार्य कर सकती। भैया हमेशा लड़ते थे, मनाते थे और प्यार करते थे। वह प्यार अब कौन देगा? अपने कार्य में इतने लगे रहने पर भी उन्हें मेरा बहुत ध्यान रहता था। पिछले वर्ष १४ मार्च को मैं करोलबाग गई थी और वे १३ अप्रैल को मेरे जन्म दिवस पर यहां शक्तिनगर एक्स्टेंशन में आए थे, परन्तु अबकी बार मेरे भैया मुझसे रूठकर पता नहीं क्यों और कहां चले गए? मैं कहा करती थी कि 'मेरे जैसा सुखी कोई

नहीं।' वे कहा करते थे कि 'वसुन्धरा 'तेरे घर में तो स्वर्ग है।' बीमारी कीं अवस्था में भी मैं मिलने अस्पताल गई तो कहने लगे कि 'जीती रहो बहन, मैं और तुम्हीं तो हैं इस परिवार के सदस्य।' मैं अपने भैया की दीर्घायु मन ही मन मनाती हुई उनसे अधिक न बोली और मैंने यही कहा था कि भैया, मुझे आपका आशीर्वाद ही चाहिए। मुझे क्या पता था कि मैं आखिरी बार अपने प्यारे भैया से बात कर रही हूं। यदि मुझे यह पता होता तो मैं और भी बातें करती। फिर मैं दूसरी बार अस्पताल गई, तो वे बेहोशी की हालत में थे। प्रभु, मुझे क्या पता। था कि मेरे महान् भैया इतने रूठ जायेंगे कि बार-बार बुलाने पर भी न बोलेंगे प्रभु, तूने यह क्या किया। भारत-वसुन्धरा का जोड़ा क्यों अलग कर दिया? भारत को बुलाकर हमेशा-हमेशा के लिए वसुन्धरा को निर्जीव बना दिया।

मैं यह सोच-सोच कर पागल-सी हो रही हूं कि मैं अपनी प्यारी भाभी की क्या मदद करूं। करना चाहती हूं पर कर नहीं सकती, क्योंकि मेरे बाल-बच्चे हैं। मैं गृहस्थ में इतनी फंसी हूं कि बिल्कुल निकल नहीं सकती। भैया, मुझे क्षमा करना कि आपकी बहिन आपके किसी काम नहीं आ सकती। भैया, क्षमा करोगे न अपनी अभागी बहिन को?

इसे अवश्य पढ़ें

जन-ज्ञान के सुविज्ञ पाठकवृन्द,

जो आवाज क्रांति के आह्वान का पहला शंखनाद थी, आज उस आवाज के जादूगर महात्मा वेदभिक्षु: नहीं रहे, किन्तु सौभाग्यशाली हैं वे जिन्होंने उनकी आवाज को सुना था।

हम देश-विदेश के उन सभी सौभाग्यशाली लोगों से अनुरोध करते हैं कि वे महात्मा वेदभिक्षु: जी के भाषण, सम्बन्धित रपटें, समाचार-पत्रों की कटिंग, उनके भाषणों के कैसेट, पत्रादि की जानकारी हमें दें ताकि हम उनका समाज के हित में उपयोग कर सकें।

—राकेशरानी

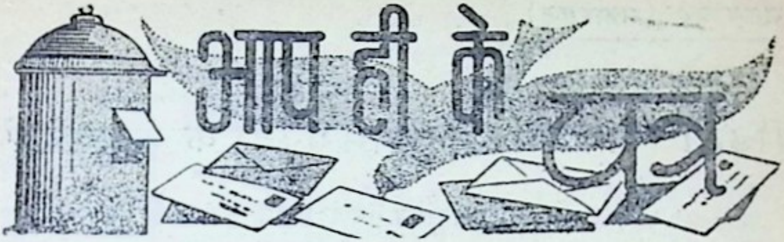

क्या यह न्याय है ?

महोदय,

'जन-ज्ञान' की सम्पादिका श्रीमती राकेशरानी पर दिल्ली प्रशासन के अधिकारियों ने २२ केस महात्मा वेदभिक्षु: जी के जीवन काल में ही चालू कर दिए थे। ज्ञात हुआ है कि पुलिस ने श्रीमती राकेशरानी ६ केस पर और चला दिए हैं।

'सरिता' में महारानी सीता, भगवान् राम, श्रीकृष्ण जी, गीता-गायत्री का खुले आम अपमान हो रहा है। केन्द्रीय सरकार के कर्णधार सरिता के संपादक विश्वनाथ पर एक भी केस चलाने की आवश्यकता नहीं समझते। फांसी का फंदा एक आर्य देवी राकेशरानी पर डाला जा रहा है।

पंजाब में नर-संहार हो रहा है। हिन्दुओं को भिंडरांवाला और उसके उग्रवादी चेले मौत के घाट उतार रहे हैं, पुलिस वालों को गोलियों का निशाना बना रहे हैं। उन देशद्रोहियों को फांसी पर लटकाने की हिम्मत भारत सरकार में नहीं। ऐसी अवस्था में भारतवर्ष की रक्षा कौन करेगा ? आज यह प्रश्न देश वासियों के सामने है।

धर्मवीर आर्य झंडाधारी

९२५७ अहाता ठाकुरदास, सराय रुहेला, नई दिल्ली-५

समाचार पढ़कर अवर्णनीय दुःख हुआ

आदरणीय बहन राकेशरानी जी,

समाचारपत्र में परम आदरणीय महात्मा वेदभिक्षु: जी के स्वर्गवास का दुःखद समाचार पढ़कर हृदय को अवर्णनीय दुःख हुआ। वे इस वर्तमान समय में हिन्दुत्व, राष्ट्रीयता तथा मातृभूमि के लिए कार्य करने वाले एक निर्भीकएवं सूझ-

मलकापुर (महाराष्ट्र)

पंडिता राकेशरानी अभियुक्तों के कठघरे में

(हमारे कार्यालय संवाददाता से)

मलकापुर (जिला बुलढाना)। यहां के फर्स्ट क्लास जुडीशल मजिस्ट्रेट श्री सावले की अदालत में नई दिल्ली के दयानन्द संस्थान की अध्यक्ष पंडिता राकेशरानी पर धारा १५३ (ए) के अधीन मुकद्दमा दर्ज किया गया है। २९ मार्च को राकेशरानी जी हिन्दू सेना (अकोला) के प्रमुख श्री चन्द्रशेखर एस० गाडगील, अपने वकील श्री बुन्देले, नान्दुरा के प्रतिष्ठित नागरिक डा० कुलकर्णी और अनेक हिन्दुत्ववादी युवकों के साथ अदालत में पेश हुईं। नई दिल्ली से श्री राकेश भार्गव भी उनके साथ आये थे।

मामला यह है कि पिछले वर्ष नान्दुरा में हुए सहस्र चंडी महायज्ञ के अवसर पर (अब स्वर्गीय) महात्मा वेदभिक्षु जी और राकेशरानी जी ने अपने भाषणों में अन्य बातों के अतिरिक्त यह भी कहा था कि "भारत के मुसलमानों को या तो वन्देमातरम् गाना होगा या भारत से जाना होगा।" राकेशरानी जी को दिये गये अभियोगपत्र में कहा गया है कि उनके भाषण से हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य पैदा हुआ। राकेशरानी जी पर एक अभियोग यह भी है कि उन्होंने मुसलमानों को चेतावनी देते हुए उनके लिए अपशब्दों का इस्तेमाल किया। मामले की सुनवाई के बाद उन्हें व्यक्तिगत जमानत पर रिहा कर दिया गया। उनकी ओर से अकोला के वकील श्री बुन्देले, मलकापुर के वकील श्री रावत और नान्दुरा के वकील श्री जैन पेश हुए।

राकेशरानी जी नान्दुरा और शेगांव होती हुई अकोला रवाना हुईं। शेगांव में बाजे-गाजे के साथ उनका शानदार जलूस निकाला गया। यह जलूस शिवाजी चौक से श्री गजानन मन्दिर संस्थान में पहुंचकर समाप्त हुआ। मन्दिर की ओर से प्रसाद वितरित किया गया। कार्यक्रम की व्यवस्था हिन्दू सेना के शाखा प्रमुख श्री नागपाल, अध्यक्ष श्री सीवन, हिन्दुत्वनिष्ठ प्रचारक श्री शालिग्राम जोशी आदि

(शेष पृष्ठ ४८ पर)

बूझ वाले महापुरुष थे। उन जैसा साहस उन्हीं में था, उनका अभाव हिन्दूमात्र के लिए हानिप्रद है। इस क्षति की पूर्ति होना असम्भव है। महर्षि दयानन्द जी ने जिस निर्भीकता के साथ कुरान की बुराइयों को उजागर सत्यार्थप्रकाश में किया था उन्हीं का अनुकरण करने में महात्मा जी पूर्ण निष्ठा से लगे रहते थे। उनका स्वास्थ्य कई वर्षों से ठीक नहीं था। तब भी वे दूर-दूर की यात्राएं कष्ट उठाकर और स्वास्थ्य की उपेक्षा करके भी करते रहते थे।

उन्होंने थोड़े-से समय में छोटी-छोटी पुस्तकों के माध्यम से हिन्दुओं में जागृति पैदा कर दी थी। सभी पाठक उनसे प्रभावित थे। उन द्वारा अपठित हिन्दुओं को भी सावधान करने का प्रयत्न इस साहित्य से प्राप्त जानकारी के आधार पर ही प्रभावित करने योग्य तथ्य थे। हम लोगों का महान् दुर्भाग्य है कि हमें अब उनके मार्गदर्शन से वंचित होना पड़ गया है। आपने अत्यधिक कार्य किया। परन्तु अब तक उनका सान्निध्य एवं सहयोग आपको प्राप्त था। अब आप अकेली के कन्धों पर सारा भार आ गया। यह बड़ी भारी कठिनाई की बात है।

कालचक्र के सामने किसी का कुछ वश नहीं चलता। हम तो दुःखी होकर आंसू बहा लें या संवेदना प्रकट कर लें—इसके अतिरिक्त कर ही क्या सकते हैं। अपने आपको जो व्यक्ति महान् शक्तिशाली समझता है वह भी इसके सामने नत-मस्तक हो जाता है। उसकी कुछ नहीं चलती। अतः भगवान् से बारम्बार यही प्रार्थना है कि दिवंगत महात्मा जी की आत्मा को शुभ गति व शांति प्रदान करें। उनकी लग्न, तप, तेज, प्रभाव, प्रताप, सूझ-बूझ आदि सद्गुण किसी उनके अनुयायी को प्रदान करके हमें उनके अभाव से होने वाली क्षति तथा दुःख से निवृत्त करें। वे जो कार्य कर रहे थे वे ईश्वर की सेवा के सदृश थे और ईश्वर की प्रेरणा से ही कर रहे थे, अन्यथा अनेक लोग सब-कुछ जानते हुए सुखोपभोग में लगे रहते हैं, समाज, धर्म, राष्ट्र या मातृभूमि के लिए वे थोड़ा-सा भी कष्ट नहीं उठाते तब इन्हें इतनी चिन्ता क्यों थी? भगवान् अवश्य ही उनके कार्य को यथा-वत् ही नहीं अधिक प्रभावी ढंग से करने का साहस हमें प्रदान करेंगे।

सूरतगढ़ —गौरीशंकर कोठारी

समाचार पढ़कर अवाक् रह गया

माननीया पण्डिता राकेशरानी जी,

महात्मा वेदभिक्षुः जी के स्वर्गारोहण का समाचार पढ़कर अवाक् रह गया। हृदयगत शोक एवं पीड़ा हुई।

आर्यसमाज और हिन्दू समाज का एक देदीप्यमान नक्षत्र अस्त हो गया। हिन्दुओं का एक त्राता चला गया। महाराणा प्रताप और चाणक्य की परंपरा वाला एक महापुरुष हिन्दुओं को छोड़कर—अनाथ छोड़कर चला गया। क्रांतिकारी युगल का पुत्र जीवन भर अभिनव क्रांति का विगुल बजाता रहा और उसी की ज्वाला में अपने को तिल-तिल करके जलाता हुआ देवलोक का पथिक हो गया। ईश्वर उनकी आत्मा को शान्ति दे।

आप वीर पत्नी हैं। शायद उसी पथ की अनुगामी बनी रहें। पर मैं यही कहूंगा कि आपने अपने हिस्से का योगदान कर दिया। अब उस कंटकीपूर्ण मार्ग से उपराम हो जावें। यह समाज बड़ा कृतघ्न है। यदि यह अकिंचन आपके किसी काम आ सके तो अवश्य अनुज्ञा दें।

हरिद्वार — रामेश्वरदयाल गुप्त

वे असमय जुदा हुए

परमपूज्य बहन राकेशरानी जी,

हमारे विदेश से लौटने पर अत्यन्त दुःखजनक समाचार पढ़ा। सारा ही परिवार शोक सागर में डूब गया। महात्मा वेदभिक्षु: जी की मृत्यु की खबर पढ़ते-पढ़ते हम मानो पागल हो गए। उनका नाम ही हमारे हृदय मन्दिर में पवित्र तीर्थ बना है। अफसोस कि ईश्वर ने ऐसे उच्च कर्मयोगी और अमूल्य देशरत्न को बड़े असमय जुदा कर दिया।

देश, आर्यसमाज, दयानन्द संस्थान व सम्पूर्ण हिन्दू जगत् की अपूरणीय हानि हुई है।

प्रभु से प्रार्थना है कि महात्मा जी की अमर आत्मा को पूर्ण शांति व श्रेष्ठत देव जन्म प्रदान करे व सारे दयानन्द संस्थान परिवार को ऐसी भीषण क्षति को सहन करने की शक्ति दे।

सदा आपके संग—

फैजाबाद — रमेशचन्द्र चोपड़ा

प्रभो, सहन शक्ति दो

पण्डिता राकेशरानी जी,

महात्मा वेदभिक्षु: के प्राण त्यागने का समाचार मैंने ऐसे ही सुना, जैसे मेरे ऊपर ऐटम बम गिर गया हो। आर्य जाति के प्रेरक, हिंदू समाज के रक्षक हम से छिन गये! इस क्षति को कौन पूरा करेगा? प्रभो, ऐसे "लाल",

जिनमें देश और धर्म की तड़प हो कहां से आयेंगे? अच्छा प्रभो 'दिवंगत' पुण्यात्मा को सद्गति एवं शांति प्रदान करो तथा समूचे समाज को सहन शक्ति का बल तथा ऐसा ही नेता दो!

आपके दुःख में दुःखी—

धूरी (महाशय) प्रेमप्रकाश वानप्रस्थी

बेहद दुःख हुआ

मेरी प्यारी बहन राकेशरानी जी,

शोक समाचार मिला। बेहद दुःख हुआ। वे महान् व्यक्ति हमारे बीच में से चले गए। ईश्वर से प्रार्थना है कि उनकी महान् आत्मा को शान्ति दें और आप सबको धैर्य व शक्ति प्रदान करें। यह दुःख केवल आपका ही नहीं, सारे आर्य जगत् का है, दयानन्द संस्थान का है तथा हिन्दू रक्षा समिति का है। उनकी सेवाएं अब हमारा मार्गदर्शन करती रहेंगी। संसार में वेदभिक्षुः जी दूसरों के लिए जिये और अब उनकी याद ही बाकी रह गई है। आपको और बच्चों को भी महान् बनाने में उनका भारी योगदान रहा है। वे जो कुछ कहते और लिखते वह उनके अपने हृदय मन्दिर से होता था। भगवान् उन्हें अपने पास स्थान देंगे। आप उनकी जलाई मशाल को प्रज्वलित रखेंगी और उनकी अनुपस्थिति महसूस नहीं करेंगी क्योंकि आपके साथ समस्त हिन्दू समाज है और आपके अनेकों भाई-बहन हैं। ईश्वर आपके साथ है।

हम इस दुःख में आपके साथ हैं। संसार में एक दिन तो हर व्यक्ति को जाना होता है। उनका और आपका साथ ईश्वर को इतना ही मंजूर था। अब तो हम सभी को सब्र करना पड़ेगा।

रिवाड़ी —ज्ञानेन्द्रसिंह

आप पर वज्र प्रहार हुआ है

पूज्य भाभी जी,

भाई साहब के दिवंगत होने का समाचार पत्रों में देखा। संस्थान का शोक-समाचार भी मिला। मैं तो स्तब्ध रह गया। समझ में नहीं आ रहा है कि किन शब्दों में आपको संवेदना प्रेषित करूं। स्वयं आना चाहता था। मुझे आना चाहिए था, पर प्रभु की ऐसी इच्छा नहीं मालूम नहीं दी अतः आ नहीं सका हूं। पत्र द्वारा ही संवेदना प्रेषित कर रहा हूं। उनका स्नेह मेरे प्रति अपार था सो आपको क्या बताऊं। आप पर तो वज्र प्रहार ही हुआ है जिसे झेलने की

... हो दे सकता है, वहां दूंगा। आप स्वयं विदुषी है, धर्मरक्षा में संलग्न हैं, यही उनका कार्य है जो आपको पूरा करना है तथा प्रभु कृपा से आप इसे पूर्ण करते हुए उनका मिशन पूरा करेंगी। उनको प्रभु अपनी गोद में शांति प्रदान करेगा। वह शांति प्रदान करे, यही प्रभु के चरणों में प्रार्थना है।

६७/६० लालकुआं, लखनऊ — मधुसुदन वाजपेयी

प्रभु शक्ति व धैर्य प्रदान करें

श्रीमती राकेश,

शोक समाचार अभी मिला है, सबने भारी सन्ताप का अनुभव किया है। अचिन्त्य शक्ति प्रभु से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को शांति एवं सन्तप्त पारिवारिक जनों को इस गहरे दुःख को सहन करने की शक्ति व धैर्य प्रदान करें।

आपके दुःख से दुःखी—

गाजियाबाद — उदयवीर शास्त्री

---

२८ मुकद्दमे
और
वे भी एक अकेली महिला
हिन्दू नेता पर !

अपराध है हिन्दू समाज को जगाना
अन्य सम्प्रदायों के प्रहारों से बचाना
और अपनी संस्कृति व अस्मिता का बोध कराना

क्या आप सहते ही रहेंगे ?
क्या आप सोते ही रहेंगे ?

बातों से काम नहीं चलेगा। देश, समाज और धर्म की रक्षार्थ कुछ करना ही होगा।

अपना नैतिक, भावनात्मक तथा आर्थिक सहयोग अधिक से अधिक दीजिए।

—अखिल भारतीय हिन्दू रक्षा समिति नई दिल्ली-५

अकालियों का आत्मघात !

—अनिल लोढा

अकालियों ने संविधान के अनुच्छेद २५ को जलाकर अपनी समझ में चाहे बहादुरी का काम किया हो पर कोई समझदार व्यक्ति यह कहने में नहीं हिचकेगा कि ऐसा करके उन्होंने अपनी देशभक्ति की महान् ऐतिहासिक परम्परा को कलंक का टीका लगाया है।

एक पूरी कौम जिसकी पहचान उसकी देशभक्ति और बलिदान से बनी है, जिसका अस्तित्व विधर्मियों व विदेशियों से हिन्दुओं की रक्षा और देश की सुरक्षा के लिए कायम हुआ, उस कौम के नुमाइंदों ने पिछले डेढ़-दो साल से जो खूनी खेल खेलना शुरू किया, अब इस राष्ट्र विरोधी कार्यक्रम तक जा पहुंचा है।

हम सिखों पर हमेशा गर्व करते रहे हैं। उनकी वीरता और देशभक्ति की स्तुति करते रहते हैं और आज भी करना चाहते हैं पर मन लाख समझाए भी नहीं मानता कि उनके नाम पर हो रहा आंदोलन राष्ट्रद्रोही नहीं है। विशेष रूप से संविधान को जलाकर तो उन्होंने यह साबित ही कर दिया है कि उनकी अपनी बात (या जिद) के आगे दुनिया की किसी भी चीज का कोई मूल्य नहीं है। चाहे वह उनका राष्ट्र हो या उनके राष्ट्र का सम्मान।

संविधान क्या होता है? क्या महज एक कागज का पुर्जा होता है, जिस पर देश की व्यवस्था के संचालन के नियम-विनियम लिखे होते हैं? नहीं! वह इससे आगे कुछ भी होता है। उस देश के निवासियों की सामान्य इच्छा-आकांक्षाओं का प्रतीक होता है। संविधान के साथ हमारे एक संप्रभुता संपन्न होने की उद्घोषणा जुड़ी रहती है। फिर भी क्या संविधान को जलाकर अकालियों ने सम्पूर्ण देश के ६० करोड़ लोगों की इच्छा-आकांक्षाओं पर प्रहार नहीं किया है, उनके स्वाभिमान को कौंचा नहीं है? और इसके आगे क्या उन्होंने देशभक्त सिखों की दृष्टि में अपने आपको नीचे नहीं गिरा लिया है?

अकालियों का यह कहना उनके अपराध को कम नहीं कर देता कि उन्होंने संविधान के एक अनुच्छेद की एक धारा को ही जलाया है। क्या यह कहकर कोई हत्या के अपराध से बच सकता है कि उसने केवल बांह में जहर का

अपने ग्राम-नगर में हिन्दू रक्षा समिति स्थापित कीजिए

सबसे पहले आप समिति के उद्देश्य और मांगें पढ़ डालिए। यदि आप उनसे सहमत हों तो कम से कम अपने १९ साथी और बनाइए। इस प्रकार २० सदस्य बनाकर उनके फार्म तथा उनके पूरे शुल्क का ड्राफ्ट "अखिल भारतीय हिन्दू रक्षा समिति" के नाम का बनाकर केन्द्रीय कार्यालय, नई दिल्ली को भेजिए। साथ ही स्वीकृति के लिए पत्र भी लिखें।

स्वीकृति प्राप्त होने पर आप में से जिन्हें संयोजक बनाया जाए—वे एक अस्थायी कोषाध्यक्ष व मंत्री नियुक्त कर लें तथा अपने यहां विधिवत् कार्यालय बना लैटर-हैड, रसीद बुक आदि छपवा लें। स्थापना के दो मास के भीतर आप एक कार्यकर्ता सम्मेलन बुलाएं और रात्रि को सार्वजनिक सभा हिन्दू रक्षा सम्मेलन के रूप में रखें।

आपका लक्ष्य अधिक से अधिक सदस्य बनाना हो। अपने सदस्यता शुल्क व दान से सम्मेलन कीजिए। साहित्य बांटिए, पोस्टर लगाइए और संगठन को सुदृढ़ बनाइए।

२० सदस्यों के बाद बने सदस्यों का चौथाई शुल्क आप केन्द्र को भेजेंगे। दान रूप में एकत्र सम्पूर्ण धन आप अपने क्षेत्र में व्यय कर सकेंगे, किन्तु आपको सारा हिसाब नियमानुसार रखना होगा।

केन्द्र कभी भी आपके आय-व्यय की जांच कर सकेगा और केन्द्र को यह भी अधिकार होगा कि वह अनियमितता प्रतीत होने पर आपकी समिति भंग कर नयी समिति गठित कर सके।

हिन्दू रक्षा समिति वस्तुतः राष्ट्र के गौरव, परम्पराओं, इतिहास और स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए कृतसंकल्प सर्वस्व-समर्पित देशभक्तों का संगठन है। अतः सब इसी दिशा में सोचते हुए सभी कार्य सम्पन्न करें, ताकि सफलता मिल सके।

हम किसी भी संकट में सेवा के लिए सदा प्रस्तुत हैं।

(प्रो०) धर्मवीर, प्रधान मंत्री
अ० भा० हिन्दू रक्षा समिति, करौलबाग, नई दिल्ली-५

इंजेक्शन लगाया था या केवल सिर पर हथौड़ा मारा था। आदमी मर गया तो वह क्या करे ?

आज वे जिस अनुच्छेद को लेकर यह सब हो-हल्ला कर रहे हैं, उसे बदलने की मांग उन्होंने की ही कब थी ?

क्या पहले कभी आंदोलन के दौरान यह बताया भी था कि वे क्या परिवर्तन चाहते हैं ?

और अगर वे कोई परिवर्तन चाहते थे तो उसके लिए संविधान सम्मत प्रक्रिया का तो अभाव नहीं था। जब एक संविधान के तहत वे सरकार बना सकते हैं, मुख्य मन्त्री बन सकते हैं तो क्या उसी संविधान की व्यवस्थाओं के जरिये उन्हें अपना यह अभीष्ट पाने की चेष्टा नहीं करनी चाहिए थी ? पर उन्हें यह स्वीकार नहीं था। हो भी न सकता था, क्योंकि वे जानते हैं कि संविधान सम्मत लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के रहते उनकी दाल नहीं गल सकती। देश की जनता और उसके प्रतिनिधियों के समक्ष अपनी मांग का औचित्य साबित करना या तो वे अपनी तौहीन समझ रहे थे या स्वयं इसके औचित्य को साबित कर बहुमत से इसे स्वीकार करवाने के बारे में संदिग्ध थे।

बहरहाल जो भी हो, अकालियों ने संविधान को जलाया और वे उसे निरन्तर जला रहे हैं। हमारे राजनैतिक दल उन्हें मना रहे हैं कि वे ऐसा न करें पर वे मान नहीं रहे। अकाली दल के साथ सबसे बड़ी विडंबना यह है कि वह न तो सम्पूर्ण राजनैतिक दल है और न ही सम्पूर्ण धार्मिक दल। जब उसे राजनैतिक फैसला लेना होता है तो उसके धार्मिक नेता निर्णायक व नीति-निर्धारक हो जाते हैं।

सचाई यह है कि अकाली दल के भीतर का राजनैतिक तबका आज भी संविधान जलाना गलत मानता है पर अकाली दल के धार्मिक तत्त्व जिन्हें धर्मान्ध कहना अनुचित नहीं होगा, संविधान जैसी चीजों को अपनी सत्ता के आगे बौना साबित करने पर तुले हैं। उन्हें लगता है कि उनकी धार्मिक सत्ता से ऊपर कोई भी सत्ता नहीं होनी चाहिए—चाहे वह राजनैतिक सत्ता हो चाहे संवैधानिक सत्ता हो।

अपनी संप्रभुता की चाह में इस धार्मिक वर्ग ने अकाली दल के राजनैतिक स्वरूप व चरित्र को दांव पर लगा दिया है। धार्मिक नेताओं के हुक्मनामों पर संविधान जलाकर अकाली राजनीतिज्ञ देश की जनता व विभिन्न राजनैतिक पार्टियों की सहानुभूति खो रहे हैं और धार्मिक अकाली दल के कहने पर राजनैतिक अकाली दल आत्मघात कर रहा है।

Inside Congress

During the last year of his life Swami Shraddhanandji conducted an English weekly called "The Liberator".

This book contains 26 articles written by Swamiji in that weekly.

An absorbing book, commended by late Deshbandhu Gupta in his foreword, "to all those who esteem the late Swamiji, his name, his sterling sincerity and his mission."

Just out. Price : Rs. 30

In case you send your money till 30th of April, 1984, You would get it at Rs. 20.

Dayanand Sansthan,
1597 Hardhyan Singh Road, New Delhi-110005

(पृष्ठ ४० का शेष)

ने की। अकोला में रात्रि के दस बजे हिन्दू सेना शाखा और हिंदू यूथ जिमको की ओर से राकेशरानी जी के स्वागत का आयोजन था। नगर शाखा प्रमुख श्री शरण भट्टी, श्री तरुण विश्वास, जिमको के इनचार्ज सर्व श्री गाढ़े, पिंगले आदि ने सारे कार्यक्रम की व्यवस्था की।

नागपुर धर्मपेठ की हिन्दू ज्ञान पीठ शाखा और महाल शाखा की प्राचार्या सौभाग्यवती देशपांडे और सौभाग्यवती योगी एवं व्यवस्थापक श्री कुबीरकर आदि कार्यकर्ताओं के सहयोग से नागपुर में भी राकेशरानी जी के स्वागत का आयोजन किया गया। तीनों स्थानों पर राकेशरानी जी ने अपने विचार प्रकट किये और स्वागत के लिए आभार प्रकट किया।

महर्षि दयानन्द : एक सफल क्रान्ति के पुरोधा

—दीनानाथ सिद्धान्तालंकार

कई वर्ष पूर्व अमेरिका के एक दार्शनिक और चिन्तक डाक्टर ऐंड्रूज डेविड जैक्सन ने आर्यसमाज को विश्व में पाप, घृणा, ईर्ष्या और द्वेष की नाशक अग्नि बताया था और इसके प्रवंतक महर्षि दयानन्द पर बड़े भावपूर्ण शब्दों में अपनी आस्था प्रकट की थी। इस विद्वान् लेखक-चिन्तक के कुछ शब्दों को हम यहां उद्धृत कर रहे हैं—

I behold a fire that is universal, the fire of infinite love which burneth to destroy all hat, which dissolveth all a things to their purification. Over the great land of Africa, over the fair fields of America, over the everlasting monuments of Asia over the whole empires andkingdoms of Europe I behold the kindling flames of the all-consuming, all purifying fire······ To restore primitive Aryan religion to its pure state was the fire in the furnace called, "Arya samaj" which started and burned brightly in the bosom of that inspired son of God in India, Dayanand Saraswati. From him the fire of inspiration was transfered to many noble enflaming souls in the land of Eastern Dreams. Hindus and Muslims ran together to extinguish the consuming fire which was flaming on all sides with a fireness that was never dreamt of by the first kirdler Dayanand. And Christions also joined Muslims and Hindus

in their efforts to extinguish the new light of Asia. But the heavenly fire increased and propagated itself…"

मैं एक ऐसी अग्नि देखता हूं जो सर्वव्यापक है । यह अप्रमेय प्रेम की अग्नि है जो सर्व विद्वेष को भस्मसात् करने के लिए प्रज्वलित हो रही है और समस्त वस्तुजात को पवित्र बनाने के लिए पिघला रही है । अमेरिका के प्रशस्त क्षेत्रों, अफ्रीका के महान् स्थानों, एशिया के चिरस्थायी स्मारकों, यूरोप के विशाल राज्यों और राष्ट्रों में सब कुछ अपने में समेट लेने वाली और सब को पवित्र करने वाली इस पावक अग्नि की प्रज्वलित ज्वालाएं मुझे सर्वत्र दिखाई दे रही है ।

सनातन आर्य धर्म को—उसकी प्रारम्भिक पवित्र भावना को हस्तगत करने के लिए "आर्यसमाज" नामक अग्निकुंड में इस अग्नि का आधान हुआ था । वह भारत में ईश्वरप्राप्त (लब्ध ज्योति) पुत्र दयानन्द सरस्वती के हृदय में प्रादुर्भूत और प्रज्वलित हुई थी । ईश्वरीय ज्ञान की वह अग्नि उससे दयानन्द से पौरस्त्य विचारों की भूमि (भारतवर्ष) की बहुत उच्च और उज्ज्वल आत्माओं को प्राप्त हुई ।………यह सर्वनाशक अग्नि सब ओर ऐसी प्रचंडता से प्रज्वलित है कि उसका ध्यान उसके प्रथम प्रकाशक दयानन्द को भी न आया था । हिन्दू और मुसलमान मिलकर इस अग्नि को बुझाने दौड़े और ईसाई भी एशिया के इस नये प्रकाश को बुझाने के प्रयत्न में हिन्दुओं और मुसलमानों के साथ मिल गए । किन्तु वह अग्नि बढ़ती और फैलती ही गई ।

पहली असफल क्रांति

विश्व के धार्मिक इतिहास के अध्ययन से पता चलता है कि इस देश में पांच उल्लेखनीय क्रान्तियां हुईं जिनमें चार सफल रहीं । विश्व शांति और मानव निर्माण की दृष्टि से केवल एक पांचवीं ही सफल कही जा सकती है । हम इनका यहां क्रमशः वर्णन करते हैं ।

महाभारत युद्ध के बाद भारत में इस युद्ध की भयंकर अनैतिक प्रतिक्रिया हुई । एक ऐसा सम्प्रदाय उभरा जो कर्मकाण्ड-प्रधान हिंसा और वाममार्ग का प्रचारक था और इसी के द्वारा स्वर्ग प्राप्ति की घोषणा करता था । समूचे देश में पशुबलि ही नहीं अपितु नरबलि सहित यज्ञों के साथ मद्य, मांस और व्यभिचार का धड़ल्ले से चलन होने लगा । उस काल में गौतम बुद्ध हुए जो राजवंश के थे । संसार में रोग, बुढ़ापा, मृत्यु इत्यादि देख उनके मन में अत्यन्त

वैराग्य उत्पन्न हुआ, घर से भाग कर दीर्घकाल तक तपस्या की; फलतः शरीर अत्यन्त कृश हो गया। हृदय में प्रकाश हुआ और उन्होंने हिंसा, नरबलि इत्यादि अधार्मिक कृत्यों का घोर विरोध किया। इसके साथ ही अहिंसा, करुणा दया सेवा इत्यादि सिद्धान्तों का प्रचार किया। लगभग इसी प्रकार के सिद्धान्तों के प्रचारक महावीर स्वामी हुए जिन्होंने जैन मत की स्थापना की। बुद्ध ने अपने प्रचार के लिए भिक्षुक-भिक्षुणी दल, मठ इत्यादि स्थापित किए जिनमें प्रत्येक के लिए आजन्म अविवाहित रहना अनिवार्य था। प्रत्येक युवा-युवती प्रचारक के लिए यह अनिवार्य कौमार्य मानव के प्रतिकूल था। फिर गौतम बुद्ध और महावीर स्वामी ईश्वर और जीवात्मा सदृश सूक्ष्म, अदृश्य पर सृष्टि की रचनाओं इत्यादि आध्यात्मिक तत्त्वों के विषय पर मौन रहे परिणामतः उनकी मृत्यु के बाद उनके अनुयायियों ने उन्हीं की मूर्तियां और मठ बना उनकी पूजा प्रारम्भ कर दी। यह भारत की पहली धार्मिक क्रांति थी जो सर्वथा असफल रही। यद्यपि बुद्ध मद्य-मांस के विरुद्ध थे पर उनके जीवन में ऐसी घटना का उल्लेख है जब उन्होंने स्वयं एक स्वर्णकार के घर मांस भक्षण किया। इसके फलस्वरूप उन्हें रोगग्रस्त होना पड़ा। अब स्थिति यह है कि समस्त बौद्ध देश मद्यपायी गोमांस, समेत मांस भक्षक और हिंसा में डूबे हुए है।

शंकर का अद्वैत और नारी-शूद्र निंदा

भारत में दूसरी क्रान्ति का सूत्रपात शंकराचार्य द्वारा हुआ। इसमें दो मूलभूत तत्त्व थे—एक बौद्ध-जैन मत के प्रतिक्रियास्वरूप सर्वव्यापक, निराकार, अनादि, अनन्त, शक्तिमय इत्यादि गुणयुक्त अजन्मा केवल ब्रह्म का ही अस्तित्व और दूसरा इस भौतिक शरीर और स्थूल जगत् की निस्सारता।

शंकर पर बौद्ध मत का प्रभाव था क्योंकि प्रत्येक सुधारक के लिए अपने पूर्ववर्ती विचारकों से सर्वथा अप्रभावित रहना सहज नहीं होता। इसीलिए कुछ तत्कालीन विद्वानों ने शंकर को प्रच्छन्न बौद्ध कहा है। यद्यपि शंकर ने वेद को आदि सृष्टि में ईश्वरीय ज्ञान के रूप में स्वीकारा पर साथ ही पृथक् अस्तित्व को नकारते हुए ब्रह्म को दो भागों में बांट दिया। प्रथम विशुद्ध ब्रह्म—शबल ब्रह्म व ईश्वर।

प्रथम ब्रह्म केवल द्रष्ट निराकार, सर्वव्यापक अजन्मा अनन्त, अनादि इत्यादि निर्गुण रूप है दूसरा ब्रह्म ईश्वर रूप सृष्टिकर्त्ता, कर्मफलदाता, दयालू इत्यादि सगुण रूप है।

शंकर गृहस्थ आश्रम के सर्वथा विरुद्ध संन्यास और कोपीनवन्तः खलु भाग्यवन्तः (केवल कोपीनधारी ही भाग्यशाली हैं) और नारी को अधम हेय रूप देने वाले, नरकस्य किं द्वारम्—नारी (नरक का द्वार क्या है—नारी)

नारी और शूद्र को केवल वेदाधिकार से वंचित ही नहीं अपितु अगर ये दोनों कहीं भूल से भी श्रुति शब्द सुन लें या बोलें तो इनके कान में गरम सिक्का डाल देने और जिह्वा काट देने की मान्यता के पोषक थे जैसा कि उन्होंने वेदान्त दर्शन के एक सूत्र के भाष्य में कहा है। शंकर जन्मतः वर्ण-व्यवस्था के कट्टर पोषक साथ ही ब्राह्मणत्व के प्रतिपादक। आत्मा के अस्तित्व को अमान्य करने और ब्रह्म के ही अविद्याग्रस्त हो जाने के सिद्धान्त ने भारतीय जनता को घोर भाग्यवादी और आलसी बना दिया। इस दृष्टि से शंकर द्वारा प्रतिपादित दूसरी क्रांति असफल रही। लेकिन शंकर की इस क्रांति का एक उज्ज्वल पक्ष भी है। केरल प्रदेश निवासी शंकर जहां आदित्य ब्रह्मचारी और सन्यासी वर्ग की वरीयता और सुदृढ़ संगठन संस्थापक, परम योगी-पुरुषार्थी और और समूचे भारत में चारों दिशाओं में मठ स्थापित कर उन्हें एक सूत्र में आबद्ध करने वाले थे। वहां अपनी ज्ञान गरिमा से नास्तिक बौद्ध मत का तर्क-युक्ति सहित खण्डन कर शास्त्र और विद्या के बल पर बौद्ध मत का भारत से पूर्णतः उन्मूलन करने वाले थे।

महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ-प्रकाश में लिखा है कि अद्वितीय ब्रह्मचारी को युवा काल में ही एक जैनी ने शिष्य के छद्म रूप में विष देकर मार दिया था।

तीसरी क्रांति—ईसाइयत

विश्व के धार्मिक क्षेत्र की तीसरी क्रान्ति ईसाइयत की है। ईसाइयत और इस्लाम दोनों सेमेटिक सभ्यता से लगभग अविच्छन्न है। विद्वानों ने विश्व की सभ्यताओं को प्रधानतः दो भागों में बांटा है—एक आर्य सभ्यता जिसके अन्तर्गत बौद्ध, पारसी, जैन, हिन्दू आदि धर्म हैं। दूसरी सेमेटिक जिसके अन्तर्गत ईसाइयत, इस्लाम यहूदी आदि सम्प्रदाय हैं इन दोनों सभ्यताओं में मौलिक भेद है। ईसाइयत की धर्मपुस्तक बाइबल है जो पुरानी और नई दो भागों में विभक्त है। ईसाइयत का आधार नई बाइबल मानी जाती है।

ईसाइयत का मूल सिद्धांत "त्रिकवाद" है अर्थात् परमात्मा, वह पिता परमात्मा वह पुत्र (ईसा) और परमात्मा वह पवित्र आत्मा। वैसे तो ईसाइयत में

एक ईश्वर माना गया है पर इस मूल सिद्धान्त के अनुसार ईश्वर के तीन रूप हो जाते हैं और तीनों समकक्ष हैं। यह सर्वथा निराधार और युक्तिविहीन सिद्धान्त है। सृष्टि रचना के सम्बन्ध में बाइबल के सिद्धान्त एकदम अवैज्ञानिक सिद्ध हो चुके हैं।

जल पर ईश्वर का आत्मा डोलता था। पर जब जल की रचना ही नहीं हुई उस पर आत्मा कहां से टपक पड़ा? आदम को खुदा ने अपने जैसा बनाया। तब पाप कहां से आया? इसका कोई उत्तर नहीं है। अमरीका के एक प्रमुख लेखक के अनुसार वहां तो ईसाइयत के १६७ भेद हैं और ५० ऐसे हैं जो इस सूची में नहीं हैं। सब आपस में लड़ते रहते हैं परिणामस्वरूप "क्रिश्चिएनिटी" को वहां "चर्चएनिटी" कहा जाता है, जो केवल खाली पड़े गिरजाघरों तक ही है।

ईसाइयत : विदेशी साम्राज्यवाद की एजेंट

धार्मिक दृष्टि से पश्चिम में ईसाइयत मृतप्राय है पर इसे साम्राज्यवाद और पूंजीपतियों के विदेशों में अपने पैर जमाने के रूप में ही देखा जाता है। कुछ वर्ष की बात है कि फ्रांस की पार्लमेंट में जब ईसाइयत के प्रचार के लिए बजट की राशि प्रस्तुत की गई—तब सभासदों ने एक स्वर से इसका विरोध किया। सरकार की ओर से बजट की मांग पास करने के पक्ष में जब यह दलील दी गई कि यह रकम ईसाइयत के निर्यात (एक्सपोर्ट) के लिए है, तब राशि पास कर दी गयी। इतिहास इस तथ्य का साक्षी है कि ईसाइयत का प्रचार बड़ी धूर्त्तता से किया गया। एक विद्वान् के अनुसार ईसाइयत की इस धूर्त्त को अंग्रेजी के तीन अक्षरों में विभक्त किया गया है। ईसाईता पहले बाइबल हाथ में लेकर विदेशों में गए, उसके बाद वहां की जनता का चरित्र भ्रष्ट करने के लिए बीयर का प्रवेश हुआ और अन्त में उसे पराधीन बना देने के लिए बम के प्रयोग से उस पर कब्जा कर लिया गया। एक आधुनिक लेखक के अनुसार ईसाइयत के विस्तार के तीन साधन हैं—

१. वुमैन अर्थात् वेश्यावृत्ति का प्रचार
२. वाइन अर्थात् मद्यपान
३. वैपन अर्थात् हथियारों की घुसपैठ

इसलिए अमरीका और पश्चिम के अन्य देशों में पादरी को सदा साम्राज्यवाद और आर्थिक शोषण का साधन माना जाता रहा है।

इस्लाम : तलवार के जोर पर

चौथी क्रांति इस्लाम की है। ऐतिहासिक दृष्टि से इस्लाम की मान्यता है कि बहिश्त तलवार की छाया में है ।

इस्लाम की एकमात्र धार्मिक पुस्तक कुरान है । उसमें स्पष्ट रूप से इस्लाम को न मानने वालों अर्थात काफिरों से कैसा व्यवहार करना चाहिए, इसके लिए क्या आदेश दिए गए हैं इसके कुछ नमूने पेश हैं—

१. अल्लाह ने बैठे रहने वालों की अपेक्षा जिहाद करने वालों का बदला बड़ा रखा है। (८५ पारा ५) ।

२ निःसन्देह अल्लाह ने काफिरों के लिए अपमानजनक यातनाएं तैयार कर रखी हैं ।

३. जिन लोगों ने हमारी आयतों का इन्कार किया उन्हें हम जल्द अग्नि में फेंक देंगे । जब उनकी खालें पक जाएंगी तो हम उन्हें और दूसरी खालों में बदल देंगे ताकि वे यातना का रसास्वादन कर लें । निःसन्देह अल्लाह प्रभुत्वशाली और तत्वदर्शी है ।

इस्लाम के इतिहास से पता चलता है कि जब कुरान जन्मा तो वहां बड़ा बवण्डर फैला, जिसके प्रमाण कुरान की अनेक आयतों में हैं। जिहाद की मारकाट से भयभीत अनेक लोग इस्लाम में आ गये । आयत ५५ में कहा गया है कि फिर उनमें से कई तो खुदा पर ईमान ले आये और कइयों ने उससे मुंह मोड़ लिया । ऐसों के लिए जहन्नुम की दहकती अग्नि काफी है । ऐ ईमान लाने वालो ! अपने हथियार संभालो ! या फिर अलग टुकड़ियों में निकलो या इकट्ठे होकर निकलो ।

इस प्रकार इस्लाम की धर्मपुस्तक कुरान हिंसा, अत्याचार आदि की शिक्षाओं से भरी पड़ी है। इसी का यह परिणाम है कि ईसाइयत ने जहां मीठी छुरी द्वारा अपने को विश्व में फैलाया वहाँ इस्लाम ने खुलकर क्रूर और अमानवीय हिंसा द्वारा अपना विस्तार किया ।

पांचवीं सफल क्रान्ति

विश्व की चार असफल क्रांतियों के बाद सफल पांचवीं क्रान्ति वह है जिसके पुरोधा महर्षि दयानन्द थे ।

विक्रमी संवत् १९४० कार्तिक बदि १५वीं तदनुसार सन् १८८३ अक्टूबर ३० दीपावलि की अमावस्या की रात को इस नश्वर शरीर छोड़ते हुए मोक्ष-यात्रा की उस महापुरुष की समूची जीवन गाथा बड़ी प्रेरक और रोमांचकारी है।

अपने शिष्यों और अनुयायियों के अत्यन्त आग्रह पर बम्बई के गिर-गांव क्षेत्र में मानिकचन्द की वाटिका में प्रभु प्रार्थना के बाद संवत् १९३२ शनिवार चैत्र शुदि प्रतिपदा तदनुसार ७ अप्रैल १८७५ को जब एक संस्था स्थापित करने का निश्चय किया गया, तब उपस्थित सज्जनों ने ऋषि दयानन्द से उसका नामकरण करने की प्रार्थना की। ऋषिवर वहां से उठकर वाटिका के एकान्त स्थान पर लगभग आध घण्टे तक ध्यानस्थित हो जब सभास्थल में उपस्थित हुए तब उनका मुखमण्डल स्वाभाविक तेजयुक्त और प्रफुल्लित था। उन्होंने आते ही घोषणा की कि मेरी सम्मति में इस संस्था का नाम "आर्यसमाज" होना चाहिए। उपस्थित समुदाय हर्ष ध्वनि के साथ इस नाम का अनुमोदन किया। आर्यसमाज अर्थात् श्रेष्ठ धार्मिक वैदिक सिद्धांत आधारित एक सदृश लक्ष्य और विचार के व्यक्तियों की संस्था बम्बई में कुछ प्रमुख विद्वानों और ऋषि के विचारों के समर्थक महानुभावों की एक समिति ने पहले आर्यसमाज के २८ नियम निश्चित किए। ये नियम कई अंशों में अस्पष्ट, अपूर्ण और सामान्यत; अव्यावाहरिक थे। बाद में लाहौर के कई ऋषिभक्त अनुयायियों और सुविज्ञ व्यक्तियों के अनुरोध पर इन्हें दो भागों में बांटकर १० नियम और शेष उपनियमों के रूप में निर्धारित किये गए। इन समय १० नियम ही आर्यसमाज के मूलभूत नियम हैं। आर्यसमाज के स्वरूप को समझने के लिए इन १० नियमों के महत्त्व को समझना आवश्यक है। इनमें पहले तीन नियम ईश्वर के स्वरूप उसकी भक्ति, उपासना और ईश्वरीय ज्ञान वेद की महत्ता से सम्बद्ध हैं। ये आर्य-समाज के मूल आधार हैं।

अगले तीन नियम मानवमात्र जीवन के लिए श्रेष्ठ और गुण वत्ता प्रेरक हैं, जिनमें सत्य, धर्म और उपकार तीन लक्ष्य स्थापित किए गये हैं।

अगले तीन नियम वैयक्तिक और सामाजिक संबन्धों के लिए मूलभूत हैं।

अन्तिम दसवां नियम व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और सामाजिक परतन्त्रता—दोनों में समन्वयात्मक और सह-अस्तित्व द्योतक हैं। व्यक्ति और समाज का पारपरिक सबंध क्या है—यह युग-युगान्तर कालोन विवादास्पद विषय रहा है और आज के परिप्रेक्ष्य में तो अत्यत विवादस्पद है। इन दोनों—उत्तर दक्षिण ध्रुव का संगतिकरण इस नियम में किया गया है।

आर्यसमाज : एक गौरवशाली संस्था

आर्यसमाज के माध्यम से ऋषि दयानन्द ने न केवल आर्यसमाज अपितु जो जागतिक क्रांति अहिंसा, शान्ति, सहयोग, समन्वय पर आधारित कर है, प्रकटाई वह उनकी विश्व को अमृत और क्रांतिकारी देन है। महर्षि के जीवन का कार्यकलाप भारत की सीमाओं में ही आबद्ध रहा। उस समय देश की बहुमुखी समस्याएं थीं। सबसे प्रमुख समस्या विश्व की सर्वोत्तम वैदिक सिद्धांत पर आधारित आर्य संस्कृति और सभ्यता के अधःपतन की थी। इसका सर्वाधिक घृणित और घातक रूप भारत की पराधीनता थी जो देश के भूतकालीन उज्ज्वल प्रेरक आर्य साहित्य से सर्वथा विमुख अपनी भाषा, भावना से एकदम विपरीत और अनगिनत दोषों से युक्त थी जिसके उन्मूलन के लिए ब्रह्मचारी दयानन्द को अकेले ही लड़ना था। साथ ही अपने देश के हिंदू, मुस्लिम, ईसाई इत्यादि से भी अकेले अभिमन्यु की तरह उस दिव्य महापुरुष ने जीवन के अन्तिम क्षण तक एकमात्र प्रभु विश्वास पर यह घोर संग्राम किया। ऋषि द्वारा स्थापित आर्यसमाज अपने अस्तित्व के एक शती से कुछ अधिक काल में न केवल भारत अपितु विदेशों में भी जो प्रत्यक्ष क्रान्ति व उसका बीजवपन किया है वह विश्व के इतिहास में अपने ढंग का अनूठा है।

ऋषि दयानन्द द्वारा प्रवर्तित वेदोक्त धर्म आधारित आर्यसमाज एक ऐसी विशुद्ध धार्मिक संस्था है जो बिना किसी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष राज्य शक्तिकी सहायता के अपितु इसके सर्वथा विपरीत विदेशी सरकार द्वारा प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष विरोध आर्यसमाज और उसकी संस्थाओं पर पाबन्दी, समाजियों के निर्दयता से उत्पीडन ईसाई पादरियों द्वारा आर्य समाज के विरुद्ध षड्यन्त्र और मिथ्या प्रचार, इसी प्रकार मुसलमानों द्वारा पंडित लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द, महाशय राजपाल आदि दर्जनों नेताओं की हत्या, आर्य समाजी साहित्य और पुस्तकों की जब्ती, गांधी जी द्वारा भी स्वामी दयानन्द और आर्यसमाज की पक्षपातपूर्ण आलोचना; दूसरी ओर कुरान और मौलवियों की कठपुतली बन उनके प्रति तुष्टीकरण की नीति के बावजूद आर्यसमाज दृढ़ता से व्यक्तिगत पारिवारिक, सामाजिक सुधार, विदेशी शासन के विरोध स्वतन्त्रता आन्दोलन के नेतृत्व और उसमें पूर्ण सहयोग और उसके लिए गोरी सरकार के अत्याचारों का प्रसन्नता से सहन, हिन्दी प्रचार, प्राचीन पद्धति पर आधारित शिक्षण संस्थाओं की स्थापना, नारी उद्धार, विधवा, अनाथों की रक्षा व पालन, भूकम्प अकाल आदि दैवीय संकटों में सर्वप्रथम सहायता वेदशास्त्रों के पठन-पाठन की

व्यवस्था वेदानुकूल यज्ञों और १६ संस्कारों का प्रचार, योग और अध्यात्मविद्या की गुणकर्मानुसार वर्णाश्रित व्यवस्था हिन्दी, उर्दू और अन्य प्रादेशिक भाषाओं में दैनिक, मासिक, साप्ताहिक, अर्धमासिक पत्रों का प्रारम्भ—इस प्रकार आर्यसमाज ने सेवा और नवजागरण कार्यक्रम तैयार किए हैं जिनका मूल्यांकन विश्व की क्रांतियों के इतिहास में सदा समुज्ज्वल है और भावी पीढ़ियों के लिए अनुकरणीय, अविस्मरणीय और दिशाप्रेरक रहेगा। एक दिन आएगा जब सारा संसार गगनभेदी स्वर में उद्घोष करेगा—

जो बोले सो अभय—वैदिक धर्म की जय।
महर्षि दयानन्द की जय!
आर्य समाज चिरंजीवी हों,
वैदिक धर्म के बलिदानी
चिरंजीवी हों।

अमर भारती

आत्मविश्वास, आत्मज्ञान और आत्मसंयम ये तीनों भावनाएं जीवन को दिव्य बना देती हैं।

—स्वामी रङ्गनाथानन्द

आत्मविश्वास के बिना मनुष्य में स्वावलम्बन की प्रवृत्ति ही नहीं उठती और स्वावलम्बन के बिना वह अपने को उठाने में असमर्थ होता है।

महत्वाकांक्षी मानव को आत्मसत्ता में सर्वाधिक विश्वास करना चाहिए। उसका जीवन निरर्थक नहीं है। उसमें कुछ शक्तियां अवश्य हैं तभी तो उसे मनुष्य का शरीर मिला है। अन्यथा वह खटमल और मच्छर ही होता।

—स्वामी रामतीर्थ

भारत में सक्रिय रूसी गुप्तचर

—डा० बी. डी. गुप्त

भूतपूर्व मेजर-जनरल लारकिंस को जासूसी के आरोप में बन्द बनाये जाने के पश्चात ऐसा लगा कि सरकार विदेशी जासूसी के छद्म जाल को समाप्त करने के लिए दृढ़संकल्प है। परन्तु यथार्थ यह है कि भारत में जासूसी की जड़ें बहुत गहरी हैं और ऐसा लगता है कि सरकार विदेशी सम्बन्धों की विवशता में विदेशी जासूसी तंत्र को समाप्त करने में स्वयं को असहाय अनुभव कर रही है।

सम्प्रति विश्व राजनीति में गुप्तचरी का महत्त्व और उपयोग बढ़ता जा रहा है और यह कोई रहस्य की बात नहीं कि विभिन्न देश अपने विरोधी देशों में अव्यवस्था फैलाने तथा सरकार का तख्ता पलटने के लिए अपने जासूसों को छद्म वेश में भेजते रहते हैं। पर ऐसा संभवत: भारत के अतिरिक्त किसी देश में नहीं होता होगा कि उसके "मित्र" देश के जासूस भारी संख्या में सक्रिय हों, अराजकता फैला रहे हों, और उस देश की सरकार इन अवांछित तत्वों की उपस्थिति को जानते हुए भी अनदेखी कर रही प्रकटत: तो यह अविश्वासनीय।

राजनयिकों के रूप में जासूस

आज भारत में विदेशी जासूसों की बाढ़-सी आई हुई है। प्रधानमन्त्री, विदेशमन्त्री तथा गृहमंत्री के भाषणों तक में उल्लेख होता है कि विदेशी जासूस भारत में बहुत सक्रिय हैं। प्रश्न यह है कि सरकार उनके बारे में पूरी जानकारी रखते हुए भी उन्हें पकड़ती क्यों नहीं ? सम्भवत: इसलिए कि उनमें से अधिकतर का सम्बन्ध सोवियत गुट से है, और भारत सरकार में इतना साहस नहीं कि उनकी आपत्तिजनक गतिविधियों के समक्ष प्रश्न चिह्न लगा सके। यदि यह सत्य नहीं है तो क्या कारण हो सकता है कि जिन सोवियत राजनयिकों को गुप्तचरी के आरोप में अन्य देशों से निष्कासित किया जा चुका है, उन्हें ही भारत में महत्त्वपूर्ण पदों पर कार्य करने की अनुमति मिली हुई है। सबसे ज्वलंत उदाहरण है क्यूबा के राजनयिक श्री पीरज नोवोआ का जो इस समय भारत में क्यूबा के राजदूत हैं। ये

महोदय पहले इथियोपिया में राजदूत थे। रूसी सरकार ने अपने जासूस के रूप में उनका उपयोग किया था और भेद खुलने पर इथियोपिया की सरकार ने उन्हें "अवांछित व्यक्ति" घोषित करके निष्कासित कर दिया था, पर भारत सरकार ने उनकी यहां नियुक्ति पर कोई आपत्ति प्रकट नहीं की और उन्हें समस्त राजनयिक सुविधायें बेहिचक प्रदान कर दीं।

के. जी. बी. का जाल

इस समय स्थिति यह है कि लगभग दस हजार रूसी भारत में कार्य कर रहे हैं और इनमें से अधिकतर के. जी. बी. से संबद्ध हैं। उनका मुख्य कार्य यही है कि भारत से गुप्त जानकारियां प्राप्त कर सोवियत संघ भेजी जायें। और भारत सरकार उन्हें सुविधायें भी प्रदान कर करती है; यहां तक कि सोवियत वायुसेवा "एयरोफ्लोट" के कार्यकर्ताओं तक को वे सुविधायें प्राप्त हैं साधारणत: दूतावास के कर्मचारियों को मिलती है। क्या कोई दावे से कह सकता है कि आज इतनी भारी संख्या में ये जो विदेशी भारत में उपस्थित हैं—अराजकता और उपद्रव फैलाने में इनका हाथ नहीं होता? इस संदर्भ में यह भी स्मरणीय है कि यदि कोई मामूली जासूस पकड़ा जाये तो उसे मृत्यु दण्ड भी हो सकता है किन्तु जो विदेशी राजनयिक (डिप्लोमेट) हैं, उन्हें कोई हाथ नहीं लगा सकता।

कुछ समय पूर्व थाईदेश से ३३ रूसी जासूसों के निकल जाने की आज्ञा दी गई और ये सभी रूसी दूतावास एवं रूसी हवाई कम्पनी "एयरोफ्लोट" के कर्मचारी थे। पर हमारे देश में यह हाल है कि कुछ ही दिन पूर्व "एयरोफ्लोट" का एक अफसर बम्बई में हीरे, जवाहरात और घड़ियों की तस्करी करते हुए पकड़ा गया, पर भारत सरकार ने उसके विरुद्ध कोई कारंवाई नहीं की। सम्भवत: भारत एकमात्र देश है जो सोवियत रूस की राष्ट्रविरोधी गतिविधियों की इस प्रकार अनदेखी कर देता है। अन्य देश ऐसी किसी गतिविधि को सहन नहीं करते।

निष्कासित जासूस भारत में

ब्रिटेन की सरकार १०५ रूसी राजनयिकों को निष्कासित कर चुकी है। ये सभी सोवियत खुफिया पुलिस के. जी. बी. से सम्बद्ध थे और राजनयिकों के रूप में रूसी दूतावास में कार्यरत थे। अविश्वसनीय-सा लगता है पर ब्रिटेन से निष्कासित जासूसों में से दो इस समय भारत रूसी दूतावास में कार्यरत बताए जाते हैं। इसी प्रकार कुछ वर्ष पूर्व इथियोपिया से

निष्कासित श्री डेट चेकाफ तथा अमरीका से निष्कासित श्री सोवाफ भी रूसी दूतावास में कार्यरत हैं। क्या ऐसा भारत के सिवा किसी अन्य देश में हो सकता है?

आज जासूसी सोवियत तंत्र का एक अभिन्न अंग बन चुकी है और सारे विश्व में इसका जाल-सा फैला हुआ है। पर इधर विभिन्न देश भी काफी सतर्क हो गए हैं। अभी फ्रांस तथा केनेडा ने भी दो रूसी जासूसों को निकाला हैं। जमैका में भी चार रूसी अफसरों को देश से निकल जाने की आज्ञा दी गई थी, क्योंकि रूसी दूतावास के कर्मचारियों ने जमैका की एक महिला राजनीतिज्ञ की हत्या करने तथा उसके बच्चों का अपहरण करने की चेष्टा की थी। आज से चार वर्ष पूर्व जापान सरकार ने रूसी कम्युनिस्ट पार्टी से अपने देश में जारी जासूसी के विरुद्ध शिकायत की थी। अभी बंगलादेश ने भी अड़तालीस रूसी राजनयिकों को जासूसी आरोप में निष्कासित किया है बंगलादेश में सोवियत सांस्कृतिक केन्द्र भी बन्द करा दिया गया है। सूडान, मिस्र, आस्ट्रेलिया, जापान, थाईदेश कोई भी देश नहीं बचा जहां रूसी जासूस सक्रिय न रहे हों, पर भारत के समान संरक्षण उन्हें शायद ही कहीं प्राप्त हुआ हो।

यह बात भी विश्वासयोग्य नहीं कि भारत सरकार देश में होने वाली जासूसी गतिविधियों से अनभिज्ञ है। कितनी ही बार स्वयं प्रधानमन्त्री के वक्तव्यों में यह सुनने को मिला है कि देश में विदेशी जासूस अराजकता फैला रहे हैं। जब सरकार को यह जानकारी उपलब्ध है तो उन्हें पकड़ा क्यों नहीं जाता? क्या इसलिए कि जिन देशों के जासूस सबसे अधिक सक्रिय हैं उनके के प्रति भारत सरकार के शासकवर्ग के हृदय में कोमल भावनायें छिपी हैं? वे इन देशों के अहसान से दबे हैं? दूसरे शब्दों में जिनके पास भारत की स्वतन्त्रता की, निहित सवार्थों के कारण गिरवी रख दिया जाता है, उनसे इतने अधिक व्यापारिक अनुबन्ध किए जा रहे हैं कि यदि वे रूष्ट हो जायें तो भारत का व्यापारी समुदाय ही इस धक्के से लड़खड़ा जाएगा और समग्र अर्थतन्त्र चरमरा उठेगा। नहीं तो क्या कारण है कि जो तत्परता अमरीका के लिए जासूसी करने वाले भूतपूर्व सैन्य अधिकारी लारकिन्स को गिरफ्तार करने में दिखाई गई, वही भारत में हजारों की संख्या में सक्रिय के. जी. बी. एजेंटों तथा रूस के लिए जासूसी करने वाले भारतीयों को पकड़ने में नहीं दिखाई जाती? तथाकथित "मित्रता" का यह तो तकाजा नहीं कि हम राष्ट्रहित की पूर्णतः अनदेखी कर बैठें।

नई आस्था

—हरिमोहनसिंह कोठिया,

शब्द-शब्द जुड़कर के, नव-इतिहास बनेगा।
भाव-भाव का मिलन, मधुर मधुमास बनेगा॥
संघर्षों से भिडी थकी, यदि नहीं जवानी।
पीड़ा का अभिशाप-स्वप्न-आभास बनेगा॥

जो कायर होते हैं, वे बोया करते हैं।
बढ़ने वाले व्यर्थ, नहीं सोया करते हैं॥
आंधी में निर्माण करें, नित नया घोंसला।
वे पंक्षी आतंक नहीं, ढोया करते हैं॥

जिनको करना सृजन, उन्हें उल्लास चाहिए।
निश्चित पाना लक्ष्य, आत्मविश्वास चाहिए॥
दृढ़ कदमों का नहीं, विधाता कभी विरोधी।
नये पंथ को सदा, नया विश्वास चाहिए॥

नई पौध को अब, आगे आना ही होगा।
नई आस्था को, जीवन पाना ही होगा॥
नये रक्त की नव प्रवाह की नई लहर से।
विश्व-शिखर पर, 'माँ' को पहुंचाना ही होगा॥

कहानी

तैमूर की शिकस्त

—डॉ० मनोहरलाल चतुर्वेदी

तैमूरलंग अपनी राजधानी समरकन्द से अल्लाह की कसम खाकर निकाला था कि काफिरों का कत्लेआम करके वह गाजी बनेगा। उसने सोचा था कि हिन्दुस्तान काफिरों का ही मुल्क है और एक साथ लाखों हिन्दू काफिरों के खून से वह अपनी दुधारी तलवार को रंगकर जब खुदा की खिदमत में पेश करेगा तो अल्लाह उसे जन्नत बख्श देंगे। हिन्दू संस्कृति को नेस्त-नाबूद करने की इच्छा से उसने समरकन्द से कूच दिया था।

तैमूर ने शाहजादा अमीर तथा सेनापतिग्रों को इस्लाम के प्रति वफादार रहने की कसम दिलायी थी। वह भारतवर्ष पर बिजली की तरह टूट पड़ा। मजहब के संकीर्ण दायरे में सिकुड़ा-सिमटा वह आगे की तरफ कूच करता ही गया। मन्दिरों में बजती घटियां व शंख-ध्वनियाँ धीमी पड़ गयी। हर-हर महादेव की जगह अल्ला हो अकबर का स्वर गूंज रहा था। उन्मत्त बन कर धर्मान्ध होकर उसने अनेक मन्दिरों का विध्वंस कर डाला। राम-कृष्ण के गुण गाने वाले अनेक लोगों की जबान काट डाली गई, जिसने भी इस्लाम के आगे सिर नहीं झुकाया उसी का सिर धड़ से अलग हो गया।

मजहब के दीवाने तैमूर ने गंगा, यमुना तथा पंचनद के पवित्र जल को बेबसों व बेकसूरों के खून से रंग डाला। कत्लेआम—कत्लेआम—कत्लेआम—चारों तरफ कत्लेआम। अबोध शिशुओं को उछाल-उछाल कर भाले की नोक पर रोक लिया गया। अनेक बेबस माँ बहिनों के साथ खुले आम बलात्कार किया गया। तैमूर का अट्टहास दिल्ली से समरकन्द तक गूंज रहा था मुहम्मद शाह की फौज मूली-गाजर की तरह कट चुकी थी और दिल्ली चिता की लपटों से घिरी जल रही थी—चीख रही थी—विधवा की तरह सनाथ बनी फूट-फूटकर बिलख रही थी—और भारत का पवित्र आकाश आग की लपटों से लाल हो चुका था।

तैमूरलंग अब अपनी फतह का जश्न मना रहा था—हाथ में शराब का जाम थामे झूम-झूमकर नाच-गाने का लुत्फ ले रहा था। खेमे के बाहर चारों तरफ भयानक तातार सिपाही नंगी तलवारें थामे और हाथों में जलती

मशाल लिये पहरा दे रहे थे। तैमूर की आंखों के डोरे नशे से गुलाबी हो चुके थे। दुगुना नशा था—शराब का और फतह का—और वह नशे की गहराइयों में उतर रहा था—डुबकी लगा रहा था—डूबता ही जा रहा था।

युमुना के निर्मल जल पर तैमूर छोटी-सी किश्ती में बैठकर नदी पार कर रहा था। साथ में केवल शाहजादा शाहरुख था। दूर कहीं से बंसी की मीठी सुरीली तान सुनाई पड़ रही थी। उसने अपनी नाव उस ओर मोड़ दी। वह जंग का थका हुआ था, तनहाई चाहता था। अंग रक्षकों को इस पार ही रोक दिया गया था। तैमूर सादा वेश में था। उसने आश्चर्य देखा कि एक कृषक बाला लहलहाती फसल काटती हुई कोई सुरीला राग गा रही थी। बंसी का स्वर विलीन हो चुका था। तैमूर घोड़े से वहां पहुंचा और नम्र स्वर में बोला—"क्या मुझे थोड़ा पानी पीने कोदोगी?"

"हां, हां—जरूर। लेकिन क्यों?"

"क्योंकि मुझे बहुत प्या लगी है।"

"अरे! अभी तुम्हारी प्यास बुझी नहीं?"

"ऐं?।"

"ठहरो देती हूं।' कृषक बाला समीप ही झोंपड़ी में गई और दो कटोरे दूध लाकर तैमूर व शाहजादे को थमा दिये। तैमूर की आंखों में चमक उभर आयी। विस्फारित नेत्रों से कटोरे को देख कर बोला—"मगर मैंने तो सिर्फ पानी की ही फरमाइश की थी।" लड़की बोली कोई बात नही है, हम पानी मांगने वालों को दूध ही दिया करते हैं। हिन्दू हैं, गोपाल के भक्त हैं पर तुम कौन हो शी?"

"मैं···मैं···एक फकीर हूं···मांगकर खाता हूं···जगह-जगह घूमता रहता हूं। तुम अगर अपनी ज़ुबान में मुझे भिखारी भी कहो तो भी मैं बुरा नहीं मानूंगा।"

"क्यों नहीं! क्यों नहीं! पराई चीज मांगकर ली जाए या लूटमार कर ली जाये यह काम तो भिखारी ही किया करता है। कृषक बाला जोर से हंसने लगी। तैमूर किंकर्त्तव्यविमूढ़ सा खड़ा था। वह बोली—"बेकसूरों का खून पीने वाला प्यास ही प्यास तो पुकारता है।" तैमूर की त्योरियां चढ़ गई, मुट्ठियां भिच गई। वह क्रोध स बोला—खबरदार लड़की। शायद तू

मुझे नहीं पहचानती? हिन्दुस्तान को फतह करने वाला मैं तैमूर लंग।

"मैं तुझे जानती हुं। शायद तू यह नहीं जानती कि किसी भी मुल्क को फतह करने से पहले उस मुल्क की रिआया के दिल जीतने पड़ते हैं। अचानक तैमूर व शाहजादा शाहरुख के हाथों में थमे कटोरों के दूध का रंग लाल सुर्ख खून का-सा—बन गया। तैमूर ने कटोरा फेंक दिया और खेत के बाहर भागा। यकायक वे दोनों अलग-अलग खड्डों में जा गिरे। बाहर निकलने का दोनों ने बहुत प्रयत्न किया पर निकल नहीं सके। तैमूर चिल्लाने लगा—

"निकालो। बाहर निकालो मेरा दम घुटा जा रहा है। कृषक वाला अट्टहास करती हुई खड्डे के समीप पहुंची, बोली—"बस! डर गया कायर तेरी जान कीमती है? बेबसों की जान सस्ती होती है? कान खोलकर सुन ले तैमूर, यह तेरी कब्र है। इन कब्रों में तू और तेरा शाहजादा दोनों हमेशा के लिए दफन हो जाओगे।"

'लेकिन मैंने कोई बुरा काम नहीं किया, जो कुछ भी किया इस्लाम के ही लिए किया—तैमूर गिड़गिड़ा रहा था। "इस्लाम? अरे अन्धे! इस्लाम इन्सान को इन्सान से मुहब्बत करना सिखाता है या बेकसूरों को कत्ल करना इस्लाम क्या मासूम बच्चों के खून से हाथ रंगने को कहता है? माँ-बहिनों की अस्मत से खेलना सिखाता है? ठहर जा, देख पहले तेरे सामने ही तेरे शाहजादे को दफना दिया जायेगा ताकि तू समझ सके कि बच्चों के मरने का बाप को कितना गम होता है। शायद तू अमीर है सो तड़पेगा नही शाहजादा शाहरुख के खड्डे में चारों तरफ मिट्टी गिरने लगी। तैमूर चीखने लगा—"बचाओ···बचाओ···कोई मेरे बच्चे को बचाओ···मेरे शाहरुख को बचाओ···।

चार तातार सैनिक हाथों में नंगी तलवार लिये और जलती मशाल लिए खेमे में तैमूर के सामने थे, पास ही में शाहजादा। शाहरुख बैठा था बोला—"अब्बा हुजूर कोई खौफनाक ख्वाब देखा था क्या?"

"हां, मेरे बच्चे बड़ा खौफनाक ख्वाब था। तैमूर ने शाहजादे को गले से लगा लिया। कुछ बूंदे आंखों से छलक पड़ी बोला—बस बहुत हो चुका बेटे। अब हम समरकन्द वापिस जायेंगे। इन काफिरों की नापाक जमीन में दफन होने से बेहतर तो अपना वतन ही है। तैमूर ने सरदारों को पेश होने का हुक्म दिया। बोला—खुदा के बेटों···अब हमारा दिल काफिरों की नापाक जमीन से भर चुका है। चलो, हम अपने वतन लौट चलते हैं।

सवाल भाषा का नहीं, राष्ट्र की आत्मा का है

—रत्नसिंह शांडिल्य

राष्ट्रभाषा के संदर्भ में विचार करते समय हमें स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए कि राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय भाषा में अन्तर है। इसे अच्छी प्रकार समझकर हमें कार्य करना चाहिए। किसी राष्ट्र की राष्ट्रभाषा उसे कहेंगे जिसे वहां का बहुसंख्यक वर्ग बोलता और समझता हो तथा वह एक निश्चित लिपि में लिखी जाती हो। उदाहरण के रूप में सोवियत संघ की राष्ट्रभाषा रूसी है जबकि वहां अनेक राष्ट्रीय भाषाएं हैं। इसी प्रकार भारत की राष्ट्रभाषा देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी है जबकि देश-भर में अनेक प्रचलित भाषाएं, उप-भाषाएं और बोलियां राष्ट्रीय हैं जिनकी अनेकता व विविधता पर हमें गौरव है। भारत के संविधान ने देश की प्रमुख १४ भाषाओं को मान्यता देकर यह व्यवस्था भी की है कि हिन्दी उन भाषाओं से शब्द लेकर किस प्रकार अपना राष्ट्र या राजभाषा का स्वरूप निखारेगी। हिन्दी की पत्र-पत्रिकाएं ऐसे अनेक शब्दों को अपना भी रही हैं जो अन्य राष्ट्रीय भाषाओं में लिखे और बोले जाते हैं। उदाहरणार्थ हाल ही में कालीकट को कोषिकोडे, त्रिवेन्द्रम् को तिरूअनन्तपुरम् और टैपिओका को कप्पा किया गया है जो मलयालम में लिखित व प्रचलित है। इसी प्रकार अन्य भाषाओं से भी शब्दों को लेने का क्रम जारी है।

अन्य विद्वान भी सीमित घेरे में

हिन्दी के विकास की यह सही दिशा है, परन्तु हिन्दी के प्रति अनेक विद्वानों ने जो संकुचित व सीमित दृष्टिकोण अपनाया हुआ है, उसे बदलने की आवश्यकता है। हम आचार्य रामचन्द्र शुक्ल या तत्कालीन हिन्दी साहित्य के अन्य इतिहासकारों की विवशता समझते हैं कि उन्होंने सीमित साधनों और विपरीत परिस्थितियों में हिन्दी का उद्गम मेरठ की खड़ी बोली को माना है, परन्तु डां० नगेन्द्र, डा० भोलानाथ तिवारी, डा० अम्बा प्रसाद सुमन आदि विद्वानों की कोई ऐसी मजबूरी नहीं समझते वि वे भी हिन्दी का उद्गम-क्षेत्र अधिक-से-अधिक कुरुक्षेत्र की भाषाओं, उपभाषाओं व बोलियों से जोड़ते हों। वस्तुतः हिन्दी का आधुनिक विद्वान् भी जब तमिल

को पढ़ने-समझने के लिए डा० ग्रियर्सन और पादरी काल्डवेल आदि उन यूरोपीय विद्वानों का सहारा लेते हैं जिन्होंने भाषा के नाम पर भारतीय जन को विभाजित करने का षड्यंत्र किया था तब हमें दुःख होता है क्योंकि ये विद्वान् श्री काशीराम शर्मा के उस प्रयास की उपेक्षा कर जाते हैं जो उन्होंने हिन्दी को भी द्रविड़ परिवार की भाषा सिद्ध करने के लिए किया है और श्री अर्जुन के उस शोध को तो देख भी नहीं पाते जिसमें उन्होंने हिन्दी और तमिल में समान रूप से प्रचलित पांच हजार शब्दों का उल्लेख किया है। सच बात तो यह है कि हिन्दी के विद्वान अंग्रेजी के माध्यम से तमिल पढ़ते हैं तबउन्हें द्रविड़ भाषा परिवार अलग क्यों न दिखे ?और तमिल व तेलगू आदि की लिपियों को वे ब्राह्मी या देवनागरी का कलाकृत या विकसित रूप कैसे स्वीकार करें।

संकुचित दृष्टि और उसके कुपरिणाम

हिन्दी विकास-पीठ, मेरठ (उ०प्र०) की त्रैमासिक पत्रिका "ज्ञान-विविधा" में वेनिस विश्वविद्यालय, वेनिस (इटली) में हिन्दी संस्थान के निदेशक डा० लक्ष्मणप्रसाद मिश्र ने "एक स्वस्थ, सजग, निर्भीक, स्वतंत्र देशवासियों की मनोभावना जैसे होनी चाहिए, उसका भारत में अवतरित होना अभी बाकी" माना और बताया है। हमें लगता है कि जब तक मिश्र जी का यह "बाकी" काम पूरा नहीं होता और हमारे विद्वान् हिन्दी के प्रति इस दृष्टिकोण को नहीं अपनाते तब तक हिन्दी का "राष्ट्रभाषा" स्वरूप नहीं निखर सकता।

राष्ट्र की एकात्मता का दर्शन करने वाले कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के डा० मनमोहन सहगल सरीखे मनीषी भी उस समय उस संकुचित दृष्टिकोण से प्रभावित लगते हैं जब उन (डा० सहगल) को भी समस्त उत्तर भारत में अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त बोलियां या भाषाएं एक धरातल पर आकर हिन्दी से सम्बद्ध होती दिखायी देती हैं।

काफी समय पूर्व इसी प्रकार की और हिन्दी विद्वानों के इसी संकुचित दृष्टिकोण को देखकर प्रसिद्ध साहित्यकार श्री मामा वरेरकर को "हिन्दी भाषा" नाम छोड़ने तथा "भारती भाषा" नाम देने की आवश्यकता महसूस हुई और गांधी जी को "हिन्दुस्तानी" में ही अपना समझौतावादी दृष्टिकोण संतुष्ट होता दिखायी दिया जिसे तत्कालीन राष्ट्रीय नेता राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन, सरदार वल्लभभाई पटेल और हिन्दी विद्वान् श्री बालकृष्ण शर्मा "नवीन" आदि ने चुनौती न दी होती तो श्री जवाहरलाल नेहरू और

मौलाना अबुल कलाम आजाद सरीखे लोगों की हिन्दी को राजभाषा न बनने देने की मुराद पूरी हो जाती जो बाद में (१९६५) काफी हद तक अंग्रेजी को सह-राजभाषा बनाकर पूरी की गई है । इसके दुष्परिणाम भारत अभी भुगत रहा है ।

हिन्दी के प्रति यह संकुचित क्षेत्रवादी दृष्टिकोण ही जिम्मेदार है जिसके कारण उसका वह राष्ट्रीय स्वरूप अभी नहीं निखर पाया जिसकी अभिलाषा हम सबके मन में है । हम समझते हैं कि हिन्दी उस सांस्कृतिक परम्परा की प्रतीक है जिसे ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में राष्ट्रीयता या सार्वभौमिकता के रूप में गाया गया है । इस रूप को इतिहासविद् श्री पुरुषोत्तम नागेश ओक सरीखे विद्वान् यदा-कदा व्यक्त भी करते रहते हैं । हमारा मत है कि भारत राष्ट्र का वह शरीर भी क्षत-विक्षत है और उसकी आत्मा की अभिव्यक्ति भी उसी खंडित रूप में व्यक्त हो रही है जिसे संवारने के लिए सुदृढ़ मन-मस्तिष्क के साथ बलशाली हाथ-पांव भी चाहिए । कहने का मतलब यह है कि अखण्ड राष्ट्रीयता की भावना ही असली राष्ट्र भाषा के रूप में अभिव्यक्ति पा सकेगी जिसके अभाव की पूर्ति सभी विद्वानों से अपेक्षित है ।

इस व्यापक दृष्टिकोण के अभाव में ही हिन्दी में "पवित्र केश" को पवित्र बाल लिखा जाता रहा जिसके कारण बंगाल में उसे अपशब्द के रूप में देखा और समझा जाता रहा । हम यहां हिन्दी को व्याकरण के उस जटिल जाल में तो नहीं फंसाना चाहते जिसमें उलझकर वह अपनी आत्मा को ही खो बैठे । जो लोग उच्चारण भेद को ही भाषा भेद समझते हैं, उनसे हमें कुछ नहीं कहना: परन्तु यदि सही दृष्टिकोण लेकर काम किया जाय तो भी कुन्नुकुषि कृष्णन् कुट्टी की तरह श्री स्वाति तिरुनाल सरीखे उन अनेक विद्वानों के दर्शन होंगे जिन्होंने अब से ढेड़-सौ वर्ष पूर्व केरल में हिन्दी में वैसे ही कृष्ण भक्ति के गीत गाये जैसे उत्तर प्रदेश में सूरदास ने और राजस्थान में मीरा ने । बंगला के श्री केशवचन्द्र सेन की हिन्दी गुजरात के महर्षि दयानन्द से मिलकर सुघर व संवर कर हिन्दी की राष्ट्र भाषा हुई । परन्तु हिन्दी साहित्य के इतिहास में क्या इनका उल्लेख होता है ?

अब समय आ रहा है जब मानव अपनी उस खोई हुई थाती को खोजने चल दिया है जिसे मानव कल्याण की भावना कह सकते हैं । हिन्दी उसकी वाहिका बनेगी और उस रूप में हिन्दी विश्व की एक भाषा के रूप में निखरेगी । हिन्दी विद्वान् अपने को उस धारा में जल्दी-से-जल्दी समर्पित करें, यही आशा आकांक्षा है ।

ऐसे थे मेरे जीजा जी !

—विजय शर्मा

२१ दिसम्बर ८३ को सुबह सुबह जब एक पड़ोसी ने आकर कहा कि करोल बाग से फोन आया है तो मेरा माथा ठनका। जीजा जी (महात्मा वेदभिक्षु जी) १५ दिन से बीमार थे, अस्पताल में थे इसलिए सुबह-सुबह फोन की बात सुनकर मन किसी अनजानी आशंका से कांप उठा।

और जब ये फोन पर बात करके लौटे तो इस अनहोनी के हो जाने की सूचना मिली कि जीजा जी हमारे बीच नहीं रहे। हम करोल बाग भागे ।

जनकपुरी से करोलबाग तक के आधे घंटे के सफर में मन तीससाल पीछे तक यात्रा कर आया। उनकी एक-एक बात याद हो आई। उनकी स्मृतियां कौंधने लगीं। जिस व्यक्ति की छत्रछाया में सारा परिवार पला-बढ़ा और जिस व्यक्ति की प्रेरणा से सारा का सारा परिवार देश व समाज को समर्पित हो चला उसके बिना तो परिवार की कल्पना ही नहीं की जा सकती थी।

मैंने जीजा को पहली बार कब देखा, कुछ याद नहीं क्योंकि जबसे होश सम्भाला है तबसे उन्हें देखती रही हूं। मैं जब दो-तीन साल ही की थी तभी जीजी की शादी हो गयी थी। इसलिए बहुत बचपन से ही मुझे उनका स्नेह संरक्षण मिलने लगा था। उनका हम सभी बहिन-भाईयों पर उनका स्नेह पिता के स्नेह जैसा ही था ।

हमारी माजी कभी भी उन्हें जंवाई नही मानती थीं। बड़ा बेटा ही कहती थी और वे भी हर समय बेटे का कर्तव्य हो बेटों से अधिक निभाते रहे हैं। माजी यही सोच सोचकर अभी तक बीमार ही चल रही हैं। हमारे पिताजी कभी भी कुछ भी कह देते थे। नाराज भी हो जाते थे। उन्होंने आज्ञाकारी बालक के समान कभी भी किसी बुजुर्ग के सामने उत्तर देने का यत्न नहीं

किया। कही भी ले गये हो कभी सामाजिक पारिवारिक कर्त्तव्यों के प्रति दृष्टिगत नहीं हो रही है।

जीजा जी जब रोग शैया पर थे तो उनके कुछ शब्द तो मुझे बार-बार उनकी स्मृति दिलाते हैं उनके कहे हुए शब्द "विजय मुझे भूलना नहीं, तुम बहुत अच्छी हो। तुम बहुत महान् हो। मेरी बड़ी बेटी भी तो हो।" उनके इन शब्दों की ध्वनि मुझे बार-बार यही सोचने पर मजबूर करती है कि जीजा जीपूरे परिवार का उत्तरदायित्व संभाले हुए थे। हमने कभी सोचा भी न था कि इतनी जल्दी ईश्वर उस सहारे को हमसे छीन कर मृत्यु को सौंप देगा।

कितना पितृतुल्य स्नेह करते थे मुझे। वैसे तो उनका सब विभिन्न स्वरूपों में स्मरण होता है, लेकिन किसी भी कष्ट के समय तो वे किसी भी उपचारक से कम न थे। एक बार की घटना मुझे सदैव स्मरण रहती है कि आभा ने यहां से जाकर अपने मौसा जी की बीमारी के बारे में उनसे कहा कहने की देर थी कि उसी समय दौड़े आये। हालांकि जीजा जी कलकत्ता का तूफानी दौरा करके आये थे। चेहरा थकान से लाल हो रहा था। रात्रि का समय था। हम लोग घर में निश्चिन्त हो कर सो रहे थे कि अचानक घण्टी बजी तो दरवाजा खोलने पर देखा जीजा जी थे। उनके चेहरे पर विचित्र-सी परेशानी झलक रही थी। आकर एक दम से कहा कि अभी तुम लोगों को डाक्टर साहब के यहां चलना है। हम लोग यह बात सुनकर कुछ हैरान हुए तथा मन में शंका भी हुई कि वास्तव में कोई विशेष बात है। रात्रि के दस बजे अपने परमस्नेही डा० श्रीवास्तव साहब के पास हमें ले गये तथा इनके सभी एक्सरे इत्यादि उन्हें दिखाये। डा० साहब ने उनको सान्त्वना दी। इस पर भी उन्हें सन्तोष नहीं हुआ। सभी परिचित डाक्टर, वैद्य इत्यादि से जानकारी लेते रहे। हम लोग तो घर में निश्चिन्त थे लेकिन महात्मा जी (जीजा जी) अत्यधिक चिन्तित थे। यहां के डाक्टरों की राय से वो पूरी तरह संतुष्ट नहीं हुए तो अजमेर के एक विशेषज्ञ डा० यादव के पास भेजा।

इस प्रकार के न जाने जीवन के कितने अनुभव हैं जो स्मृति पटल पर बिल्कुल ताजा हैं। ऐसा लगता ही नहीं कि वो हमारे बीच नहीं हैं। नियति की इस विडम्बना को कौन टाल सकता है। उनकी मृत्यु परिवार की एक अपार क्षति है जिसकी पूर्ति असम्भव है।

कितने महान थे महात्मा जी (जीजा जी)। कैसी विभिन्न विशेषताएँ थीं अकेले व्यक्तित्व में। लेखन में कवि निराला की सी स्वच्छन्दता 'प्रसाद' की सी गम्भीरता और झलकता था प्रेमचन्द का यथार्थ। सभी विशेषतायें एक ही व्यक्तित्व में! कैसा विचित्र सा समन्वय था।

समुद्र की सी अथाह गहराई थी विचारों में तरँगित लहरों की सी चंचलता थी स्वभाव में, कितना विरोधाभास झलकता था उनके व्यक्तित्व में! कितने महान् थे जीजा जी। हम लोग तो उनसे छोटी-छोटी बातों पर नोक-झोंक करते ही रहते थे। उन्हें भी यह सब अच्छा लगता था। कभी-कभी तो बिल्कुल बच्चों की सी हठ करते थे। उन्हें मनाना भी उतना ही आसान था जितना किसी अबोध बालक को।

उनकी स्मृतियां मस्तिष्क पर अभी भी चित्रों की तरह अंकित हैं। उनके शब्द बार-बार कानों में गूजते हैं। मन को व्यथित कर जाते हैं। रोग शय्या पर लेटे हुए वे एक बार बोले—"विजय! मुझे भूलना नहीं। तुम बहुत अच्छी हो, बहुत महान् हो। यह उनका स्नेहातिरेक ही तो था। जो मुझ जैसी अकिंचन को अच्छी व महान् बता रहे थे!

सभी कुछ होने के बाद भी मन ऐसा मानने के लिए तैयार नहीं कि उनकी मृत्यु हो गई है। और वास्तव में उनकी मृत्यु हुई ही कहां है? उनके महान् कार्य, उनका कीर्ति स्तम्भ अभी भी हमारे समक्ष हैं। वे हमेशा ही हमें प्रेरणा देते रहेंगे कि हम उनके बताये मार्ग पर चलते रहें तथा देश, धर्म और मानव जाति के लिए हंसते-हंसते अपना सर्वस्व अर्पित कर दें।

★

हिन्दू प्रेस लगाने के लिए
अधिक से अधिक
धन दीजिए।

मुस्लिम साम्प्रदायिकता के खतरनाक इरादे

—प्रतापनारायण मिश्र

जनवरी के दूसरे सप्ताह में देश के प्रमुख मुस्लिम दलों ने नेशनल मुस्लिम फ्रन्ट का गठन किया है। राजधानी के दिनांक १३ जनवरी के प्रमुखसमाचारपत्र "स्टेट्समैन" के अनुसार अ० भा० मुस्लिम लीग, इंडियन यूनियन मुस्लिम लीग, इत्तहादुल मुसलमीन, मुस्लिम मजलिस आदि कई संगठन इसमें सम्मिलित हुए थे। इसके अतिरिक्त व्यक्तिगत रूप से कई अन्य मुस्लिम नेता तथा विभिन्न राजनैतिक दलों की कुछ हस्तियो ने भी उसमें भाग लिया था। मुस्लिम नेशनल फ्रन्ट ने एक प्रस्ताव पास किया है। इसमें देश के आठ करोड़ मुसलमानों का आह्वान किया गया है कि वे विपक्षी दल या सत्तारूढ़ पार्टी, जो मुसलमानों के हितों के संरक्षण और उसकी अलग पहचान बनाये रखने के लिए समर्थन का आश्वासन देंगे, उन्हें ही मुसलमान सामूहिक रूप से अपना वोट प्रदान करेंगे।

मजहब को हथियार बना कर राष्ट्रविरोधी मांगो को मनवाने का दवाव डालने के उनके हथकण्डे नये नहीं हैं। सर्वसामान्य मुस्लिम समाज को देश की राष्ट्रीय जीवनधारा के साथ समरस न होने देने और द्विराष्ट्रवाद के सिद्धान्तों के वैचारिक व व्यवहारिक आधार पर उसकी अलग पहचान बनाए रखने का अलगाववादी क्रियाकलापों का यह सिलसिला आजादी के बाद भी चला आ रहा है। देश के सामान्यतः सभी राजनैतिक दल न्यूनाधिक मात्रा में निहित स्वार्थ और वोट की राजनीति के शिकार है। अलगावबाद का विषैला प्रचार किस प्रकार किया जा रहा है, यह शहाबुदीन के 'मुस्लिम इंडिया', जमायत उलेमा के मुखपत्र 'रेडियन्स', अलजमीयत आदि अनेकों साप्ताहिक और दैनिक उर्दू एवं अंग्रेजी के पत्रों के लेखों व संपादकीयों को देखकर स्पष्ट अन्दाजा लगाया जा सकता है।

पृथक्तावादी मांगों के पीछे पुनर्विभाजन के बीज

स्वाधीनता के पश्चात् राजनैतिक स्तर पर मुस्लिम संस्थाओं द्वारा इस प्रकार प्रकट रूप से इकट्ठे आकर सार्वजनिक घोषणा पहली बार ही हुई है। उनका यह नया पैंतरा देश की एकात्मा और अखण्डता के लिये अति घातक है। भारत विभाजन के पूर्व जिस स्थिति के निर्माण के प्रयत्न हुए थे, जिसके परिणामस्वरूप पाकिस्तान बना, वही प्रयास व्यापक मात्रा में चलाये जा रहे हैं। देश-भर के ४५ मुस्लिम सांसदों द्वारा प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी को ६ मास पूर्व दिया गया ज्ञापन अभी भूला नहीं होगा। भारतीय जनता पार्टी को छोड़कर सत्तारूढ़ दल कांग्रेस सहित सभी राजनैतिक दलों के सांसदों के उस मांगपत्र पर हस्ताक्षर थे। इस माँग पत्र में २५-३० प्रमुख मांगों के साथ-साथ "हम पहले मुसलमान हैं, बाद में किसी दल के हैं या अन्य"'। सभी मुसलमान किसी भी दल के हों, पहले मुसलमान हैं।" इसकी पुरजोर वकालत की गई थी।

इसी प्रकार राजनैतिक और गैर-राजनैतिक मुस्लिम संस्थाओं के प्रतिनिधियों और अन्य प्रमुख मुस्लिम नेताओं द्वारा दो और भी ज्ञापन इन्दिरा जी को दिये जा चुके हैं। व्यक्तिगत या संस्थागत रूप से जिन मांगों को प्रस्तुत किया गया है और जिनके क्रियान्वयन के लिये आठ करोड़ मुसलमानों को पुकारा गया है, यदि उसे ध्यान से देखें तो उसमें भारत के पुनर्विभाजन के बिषबीज छिपे हैं।

स्वतंत्रता के पूर्व स्व० मुहम्मद अली जिन्ना के नेतृत्व में जिन मांगों को लेकर मुसलमान समाज संगठित होकर खड़ा हुआ था, उन्हीं अलगाववादी बिंदुओं पर युद्धस्तर पर फिर से उसे खड़ा करने की कोशिशें चल रही हैं।

एक करोड़ विदेशी मुस्लिमों की घुसपैठ-योजना

गत दो दशकों में पाकिस्तान तथा बंगलादेश से लगभग ५५ लाख विदेशी मुसलमान भारत में गैरकानूनी ढंग से घुस आये हैं। असम में ४५ शेष बीस लाख राजस्थान, गुजरात, बंगाल, बिहार आदि प्रदेशों के सीमान्त जिलों में बहुत बड़े क्षेत्र में कब्जा करके बैठ गये है। गत तीन-चार वर्षों से असम की समस्या इतनी बिकट हो चुकी है कि विदेशी घुसपैठिये बहुमत में और स्वदेशवासी लोग अल्पसंख्यक हो गये हैं। अब बिहार में भी विदेशी घुसपैठ की स्थिति विस्फोटक बनती जा रही है।

कतिपय मुस्लिम नेताओं ने निकट भविष्य में विदेशी घुसपैठ को बढ़ा कर एक करोड़ तक ले जाने का अपना मंसूवा प्रकट किया है। असम के प्रयोग से उत्साहित होकर व्यापक स्तर पर घुसपैठ की योजनायें चलाई जा रही हैं। घुसपैठियों के बल पर बनी असम की कांग्रेस सरकार में उन्होंने अपना प्रभाव बढ़ाया है। कांग्रेस के कुछ वरिष्ठ नेता सार्वजनिक रूप से यहां तक भी कह गये हैं कि ये विदेशी घुसपैठिये किसी भी कीमत पर नहीं हटाये जायेंगे। पुरस्कारस्वरूप वहां मुसलमानों को सरकारी और पुलिस सेवाओं में २४ प्रतिशत आरक्षण भी प्राप्त हो गया है। कई नये मुस्लिम जिले भी गठित कर दिये गये हैं। मुसलमानों की जनसंख्या के आधार पर कांट-छांट कर अलग से नये मुस्लिम जिलों का पुनर्गठन किये जाने की मांग भी विभिन्न माध्यमों से जोर पकड़ रही है।

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय आदि अनेकों मुस्लिम शिक्षण संस्थाओं को बहुसंख्यक हिन्दू समाज के विद्यालयों की कीमत पर अनुपात से सैकड़ों गुना अधिक अनुदान सरकार पहले से ही प्रदान करती आ रही है। सरकार पर पक्षपात का आरोप लगा कर और भी अधिक धन की मांग की गई है। इस्लामी कट्टरवाद और मुस्लिम पहचान की बुनियाद पर विश्वस्तर पर कई और शिक्षण संस्थाएं चल रही हैं। देवबंद और लखनऊ के दारुल उलूम आदि अनेकों विद्यालय पहले से ही थे। अब दो और विश्वविद्यालय मुरादाबाद एवं वाराणसी में शीघ्र ही स्थापित किये गये हैं। ऐसी अनेकों संस्थायें चल रही हैं जिनमें उन्हें कट्टर मुसलमान और भारतद्रोही बनाया जाता है।

खाड़ी के मुस्लिम देशों से प्रतिवर्ष ६६० करोड़ रुपये की विपुल विदेशी धनराशि भारत में धड़ल्ले से आ रही है। इसे गृहमंत्रालय ने भी दबी जुबान से स्वीकार किया है। यह धन हिन्दू धर्मान्तरण, घुसपैठ और इन शिक्षण संस्थाओं में चलने वाले अराष्ट्रीय कार्यों के काम में आता है।

मुस्लिम रेजीमेंट की स्थापना की मांग

पी०ए०सी० का नये सिरे से गठन करने, पुलिस और सरकारी सेवाओं तथा सेनाओं में ३३ प्रतिशत मुसलमानों के लिये स्थान आरक्षित करने तथा सैन्य सेवा में मुसलमानों की एक पृथक् रेजीमेंट गठित करने की भी मांग की जा रही है। इसी प्रकार की कई अन्य साम्प्रदायिक और राष्ट्रद्रोही मांगों के पीछे मुसलमानों को भड़का कर संगठित रूप से उसे शेष समाज से अलग खड़ा करने की साजिशें चलाई जा रही हैं।

विश्व हिन्दू परिषद् और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर प्रतिबंध लगाने की शर्त के बिना शायद यह ज्ञापन पूरा ही न होता। विश्व हिन्दू परिषद् और संघ का आधार मजहब अथवा पंथ नहीं है। हिन्दू धर्म कोई मजहब नहीं। संघ का कथन है कि मजहब बदलने से राष्ट्रीयता नहीं बदलती पर इस्लाम में धर्मान्तरित होते ही उसके राष्ट्रीय जीवन मूल्य और देश के प्रति आस्था बाह्य निष्ठा में परिवर्तित हो जाती है। भारत में मुस्लिम इंडिया अर्थात् भारत में अलग मुस्लिम राज्य की स्थापना का स्वप्न क्या राष्ट्रीय है? प्रखर देशभक्ति के आधार पर खड़े हिन्दू समाज के संगठित रहते हुए उनके ओछे मंसूबे नहीं सफल होंगे, इसीलिए शायद इन हिन्दू संगठनों को अपघात पहुंचाना वे आवश्यक समझते हैं।

विश्व मुस्लिम कांग्रेस

दिनांक एक मार्च से ५ मार्च तक बिहार के पूर्णिया जिले में विश्व मुस्लिम कांग्रेस आयोजित हुई। यह बंगलादेश की सीमा पर है। इसमें लगभग बीस मुस्लिम देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। ये साधारणतः वही देश है जिनसे विदेशी धन भारत में आता है। सम्मेलन में बीस लाख मुसलमानों को एकत्रित करने की पुरजोर कोशिशें की गईं भारत की मुस्लिम संस्थाएं हिन्दू धर्मान्तरण, विदेशी घुसपैठ और मुस्लिम कट्टरवाद के प्रचार-प्रसार में कितनी प्रभावी भूमिका निर्वाह कर रही हैं इसका अध्ययन कर ये देश इस धनराशि को बढ़ायेंगे। इसे ६५० करोड़ से बढ़ाकर एक हजार करोड़ तक करने की पेशकश के संकेत दिये गये हैं।

विश्व मुस्लिम सम्मेलन की ओट में बंगला देश से आए लगभग ५ लाख घुसपैठिये मुसलमानों को बिहार में बसाने की आशंकायें व्यक्त की जा रही हैं। इसी प्रकार दो वर्ष पूर्व बिहार शरीफ में एक सम्मेलन हुआ था। उस समय बहुत बड़ी संख्या में आए विदेशी मुसलमान अपने मुल्क को वापिस नहीं गये। ऐसे सम्मेलनों में वीसा लेकर या चुपचाप आये अधिकतर विदेशी मुसलमान उसकी अवधि समाप्त होने के बाद भारत में ही रुक जाते हैं। उन्हें खोज निकालना कठिन हो जाता है। यह भारत सरकार के केन्द्रीय मंत्रालय के लिये एक सिरदर्द है। ऐसे हजारों लोगों की आज भी गृहमंत्रालय द्वार खोजबीन जारी है; इसे उसने स्वीकार किया है।

इस्लामी राज्य के मंसूबे

कुछ सप्ताह पूर्व ही पाकिस्तान के लेफ्टीनेंट-जनरल श्री अकरम खान

का एक बयान सभी समाचारपत्रों में छपा है। पाक जनरल ने कहा है कि "हिन्दू सदा हारने वाली कौम है। मुसलमान भारत का विजेता रहा है। उसने सैकड़ों वर्षों तक भारत पर राज्य किया है। मुसलमान राज्य करने के लिये ही पैदा हुआ है।" जमायते हिन्द, मुस्लिम लीग, इंडियन यूनियन मुस्लिम लीग आदि के नेताओं के वक्तव्यों के पीछे वही पुरानी इस्लामी राज्य की मानसिकता तो काम नहीं कर रही है?

सद्गुण जब दुर्गुण बन जाता है

मध्य अफ्रीका में मलावी एक देश है। एयर इंडिया के वायुयान में एक भारतीय प्रवासी पश्चिम के देशों का भ्रमण कर रहा था। उन्होंने परिचारिका (एअर होस्टेस) से खाने का मीनू (कार्ड) मांगा। जहाज में परोसे जाने वाले भोजन के मीनू में गोमांस (बीफ) का उल्लेख देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ। उन्होंने पूछा—"क्या वह उपलब्ध हो सकता है?" उत्तर मिला, "हां", उन्हें ठेस लगी। उन्होंने कहा, "क्या सुअर-मांस (पोर्क) भी मिल सकता है? परिचारिका ने कहा कि "वह यहां पर वर्जित है। मुसलमान इस पर आपत्ति करते हैं। उनकी भावनाओं को ठेस पहुँचती है" प्रवासी हिन्दू ने कहा, "गोमांस परोसकर हिन्दू भावनाओं को ठेस नहीं पहुंची? वह भी भारत के जहाज में?" परिचारिका ने कहा, "हिन्दू सहिष्णु है।" भारतीय जहाज सेवा यदि सुअर मांस (पोर्क) नहीं परोसती है तो गोमांस परोसना क्यों आवश्यक है? इसीलिये कि हिन्दू सहिष्णु है? हिन्दू जीवन-मूल्यों और अस्मिता पर चोट सहन कर लेता है?

एकमात्र समाधान: सहिष्णुता हिन्दू की विशेषता है। यह एक सद्गुण है पर उसकी भी एक मर्यादा है। सीमा से बाहर सहिष्णुता का अच्छा गुण भी दुर्बलता मानी जाती है। हिन्दू भावनाओं को कुचला और अपमानित किया जाता है। ऐसा ही कुछ आज अपने देश में हो रहा है। मुस्लिम साम्प्रदायिकता का चेहरा बेनकाब हो गया है। यदि राष्ट्रीय एवं हिन्दू हितों के विरुद्ध मुसलमान एक मंच पर आ सकता है, वह अपने संगठित मत को अभिव्यक्त कर सकता है तो राष्टीय हितों और देश की अखण्डता के साथ खिलवाड़ करने वाले दलों और व्यक्तियों को हिन्दू समाज भी सहन नहीं करेगा। हिन्दु जनमानस का संगठित मत ऐसे राष्ट्र-घाती मंसूबों को चाहे वे अपने हों या पराये, करारा जवाब देने के लिए कटिबद्ध हो, यही समय की माग है।

अकाली आन्दोलन

विघटनकारी शक्तियों का एकीकरण

—क्षितीश वेदालंकार

हिन्दुओं और सिखों के बीच एक ही इतिहास, एक ही परम्परा और एक ही संस्कृति की दृष्टि से अटूट सम्बन्ध हैं। इसलिए जब यह कहा जाता है कि सिख विशाल हिन्दू समाज के ही अंग हैं, तो उसमें कोई गलती नहीं होती। यह सोचना कि सिखों को हिन्दू समाज का अंग कह देने से उनकी पृथक् पहचान समाप्त हो जायेगी—एक नितान्त भ्रामक कल्पना है। वर्तमान अकाली नेता इतिहास के उसी चिरंतन सत्य को झुठलाने में लगे हुए हैं। यह स्थिति इस हद तक पहुंच गई है कि कोई ऐसा अकाली नेता नहीं बचा जिसके वचन को प्रमाण माना जाय।

सिख नेता बार-बार कहते हैं कि हम पृथक्तावादी नहीं हैं, खालिस्तान की मांग से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं हैं। और पिछले ही दिनों श्री हरचन्दसिंह लौंगोवाल ने यह भी कहा है कि आनन्दपुर साहिब के प्रस्ताव में खालिस्तान का उल्लेख नहीं है। परन्तु हाल में ही खालिस्तान गणराज्य के स्वयंभू नेता डा० जगजीत सिंह चौहान ने स्पष्ट रूप से यह घोषणा की है कि आनन्दपुर साहिब के प्रस्ताव में खालिस्तान की मांग शामिल है और अकाल तख्त के अन्दर "सर्वखालसा" की बैठक बुलाकर उस मांग की पूर्ति के लिए आह्वान कर दिया। डा० चौहान ने अकाली दल के नेता श्री लौंगोवाल और शिरोमणि गुरुद्वारा समिति के प्रधान जी०एस० टोहरा को पत्र भेजकर इसी वर्ष २६ जनवरी से खालिस्तान के रूप में समानान्तर सरकार के निर्माण का आग्रह किया है। इतना ही नहीं उसी दिन डा० चौहान ने अपने मंत्रीमण्डल की घोषणा की। भारतीय संविधान और तिरंगे राष्ट्रीय ध्वज को जलाया और ब्रिटेन में भारतीय हाई कमिश्नर के निवास स्थान पर खालिस्तान के प्रतिनिधि के रूप मे मार्च किया। १८ दिसम्बर को लन्दन के

गुरुद्वारा नानकसर में एक सिख संगत में इस प्रकार खालिस्तान की घोषणा कर देने का प्रस्ताव पास भी किया जा चुका है और उसी प्रस्ताव की प्रतिलिपि श्री लौंगोवाल, श्री टोहरा और श्री भिंडरांवाले को भेजी गई है।

विदेशी हाथ कहां तक ?

इससे जहां खालिस्तान के आन्दोलन के पीछे विदेशों के हाथ होने का आभास होता है, वहां साथ ही यह भी कि रोग की जड़, आमतौर पर जितना समझा जाता है, उससे कहीं अधिक गहरी है।

स्वर्ण मंदिर अब एक "किला"

पिछले दिनों बब्बर खालसा से सम्बद्ध सुखदेव सिंह की गिरफ्तारी से और अनेक रहस्यों पर से पर्दा उठ गया है। उसने जहां बब्बर खालसा द्वारा ३५ निरंकारियों की हत्या स्वीकार की है, वहां यह भी स्वीकार किया है कि इन हत्यारों को ये हथियार गुरुनानक निवास से मिलते हैं। उनको बाकायदा इस काम का प्रशिक्षण दिया जाता है और भिंडरांवाले का आशीर्वाद भी उन्हें प्राप्त है। इसी प्रकार उग्रवादी या बब्बर खालसा के लोगों के रहने या प्रशिक्षण शिविर में भाग लेने या वहां से हथियार प्राप्त करने के स्रोतों का केन्द्र स्वर्ण मंदिर ही है। फिर चाहे लौंगोवाल या अन्य नेता कितना ही खण्डन करते रहें, लेकिन इन सब चीजों के दूर तक फैले तारों का सीधा सम्बन्धसूत्र स्वर्ण मन्दिर के साथ है, इसमें किसी को सन्देह नहीं रहता। चाहे लौंगोवाल हों या टोहरा या भिंडरावाले हों, और इनमें से चाहे किसी को उग्रवादी, आतंकवादी या उदारवादी के नाम से सम्बोधित किया जाय, परन्तु यह स्पष्ट हो चुका है कि अब स्वर्ण मंदिर धार्मिक और श्रद्धालु व्यक्तियों का निवास बनने की बजाय केवल आतंक का ही निवास बनता जा रहा है। किसने कम हत्यायें की हैं या किसने कम खजाने लूटे हैं, महत्त्व इसका नहीं है, न ही उदारवादी या उग्रवादी कहकर दुनिया को बहकाने की कोशिश की जा सकती है। मुख्य मुद्दा यह है कि क्या लूट और हत्या जारी रखने वाले लोगों से किसी प्रकार समझौते की या किसी भी प्रकार की कोई बातचीत की जा सकती है?

साम्प्रदायिक राजनीति की विडम्बना

अकाली नेताओं ने अपनी विशुद्ध साम्प्रदायिक मांगों को राजनैतिक और क्षेत्रीय मांगों के साथ जोड़ दिया है। तथाकथित धार्मिक मांगें भी राजनैतिक मंच से उठाई जा रही हैं और अपनी मांगों को समस्त पंजाब

पंजाब की समस्त जनता की मांगें कहा जा रहा है। क्या सिख और पंजाब पर्यायवाची हैं ? सिख और पंजाब तो पर्यायवाची हैं या नहीं, हम उससे आगे बढ़कर यह कहना चाहते हैं कि सिख और अकाली भी पर्यायवाची नहीं हैं। इसलिए अकालियों की ओर से ही जा रही मांगों को न तो समस्त सिखों की मांग कहा जा सकता है और न ही समस्त पंजाबियों की मांग कहा जा सकता है।

सच बात तो यह है कि जिस दिन अकाली दल और मुस्लिम लीग, इन दोनों दलों को राजनैतिक मान्यता देकर चुनाव लड़ने की अनुमति दी गई थी, वह देश के दुर्भाग्य का दिन था। अभी पिछले दिनों इस गलती की ओर लोकदल के नेता चौधरी चरणसिंह ने भी ध्यान खींचा है और उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा है कि किसी सम्प्रदाय-विशेष के ऊपर आधारित किसी भी राजनैतिक दल को न तो मान्यता मिलनी चाहिए और न ही उसे चुनाव लड़ने का अधिकार होना चाहिए। देश को साम्प्रदायिकता के जहर से मुक्त रखने का यही एक कारगर उपाय है। अब भी अगर इन दोनों दलों को राजनैतिक दल की मान्यता से वंचित कर दिया जाय, तो असाम्प्रदायिक लोकतंत्र की दृष्टि से वह सर्वथा उचित होगा। परन्तु क्या केन्द्रीय सरकार यह हिम्मत करेगी ?

ये गठबन्धन

पहले अकाली दल ने जामा मस्जिद के इमाम अब्दुल्ला बुखारी को बुलाकर उनके साथ एक सम्मिलित मोर्चा बनाना चाहा था, परन्तु जब बुखारी के सहयोग से दिवान्धता का बुखार नहीं उतरा, तब कश्मीर के मुख्यमंत्री, दूसरे अब्दुल्ला फारूख़ के साथ मिलने की फराखदिली दिखाई जा रही है। उधर फारूख़ अब्दुल्ला पुनर्वास विधेयक बनाकर विभाजन के बाद जो मुसलमान पाकिस्तान चले गये, उन्हें वापस बुलाकर उन्हें नागरिकता का अधिकार प्रदान कर रहे हैं और दूसरी ओर दो-तीन दशकों से जो हिन्दू जम्मू में रहते चले आ रहे हैं उनकी नागरिकता छीनी जा रही है। पाकिस्तान बनने के बाद जो हिन्दू शरणार्थी आये थे उनका न तो पुनर्वास हुआ और न ही उन्हें नागरिकता प्रदान की गई। वे अभी तक वहां दूसरे दर्जे के लोग समझे जा रहे हैं।

इतना ही नहीं, आतंकवादी सिखों के प्रशिक्षण के लिए जितने शिविर लगते हैं उनमें से अधिकतर .जम्मू-कश्मीर के क्षेत्र में ही लगते हैं। कश्मीर

के रास्ते से ही उन आतंकवादियों के पास पाकिस्तान से हथियार आते हैं और वही हथियार दिल्ली और पंजाब में लूटमार, डकैती और हत्याओं के काम आते हैं। जम्मू-कश्मीर में इंका के कार्यकर्ताओं पर जिस तरह ज्यादती की गई है, उसका समर्थन अकाली नेता करें यह आश्चर्य की बात है। उधर फारूख अब्दुल्ला इन अकालियों की मांगों का समर्थन करते हैं और इधर ये अकाली नेता फारूख अब्दुल्ला का समर्थन करते हैं। इससे यह स्पष्ट ध्वनित होता है कि ये दोनों समान उद्देश्य से प्रेरित मौसेरे भाई हैं। इनकी नस्ल कहीं-न-कहीं आपस में लिलती है।

इसी प्रकार साम्प्रदायिकता के उन्माद से ग्रस्त और राष्ट्र के विघटन के लिए उत्सुक अन्य जो भी अलगाववादी अराष्ट्रीय तत्त्व हैं वे सब इस समय आपस में मिलकर जैसे घी-शक्कर हो गये हैं, उससे उनके मौसेरे भाई होने की ही पुष्टि होती है! जब तक भारत सरकार दृढ़तापूर्वक इन मौसेरे भाइयों का इलाज नहीं करती, तब तक देश का भविष्य सुरक्षित नहीं है।

प्रत्येक हिन्दू परिवार में होना ही चाहिए

पवित्र धर्म : परमात्मा की वाणी

चारों वेदों का हिन्दी भाष्य

मंत्र-शब्दार्थ-भावार्थ-छन्द-स्वर-देवता आदि सहित

लागत मूल्य लगभग ५०० रु०

किन्तु प्रचार के लिए ३० अप्रैल तक

पुस्तकालय संस्करण : २५१ रु०

३० अप्रैल के बाद २७५ रुपए

उपहार संस्करण १००० रुपए

अभी ६०४ रु० में लीजिये।

३० अप्रैल के बाद ७०० रुपए में।

५० रु० अग्रिम भेजें। रेलवे स्टेशन लिखें।

अध्यक्ष, दयानन्द संस्थान

१५६७, हरध्यानसिंह मार्ग, करौलबाग, नई दिल्ली-५

दूरभाष : ५६२६३९-५६४७४१

हिन्दू-सिख विभेद कैसे पनपा ?

—डॉ० सतीश मित्तल

आज का उभरता हुआ ज्वलन्त प्रश्न है कि क्या सिख पंथ हिन्दू धर्म से भिन्न है ? १८७२ के "एडिनबरा रिव्यू" के एक अंक में लिखा है, "पृथ्वी पर हिन्दू एक अत्यन्त प्राचीन राष्ट्र है, जो सभ्यता और सुसंस्कृति में अद्वितीय है।" हिन्दू धर्म जैसा कि सर्वविदित है, संसार के प्राचीनतम धर्मों में से एक है तथा इसका उद्गम अद्भुत देश है। इसे "वैदिक धर्म" आदि नामों से पुकारा गया है। समय-समय पर हिन्दू धर्म में आई कुरीतियों को दूर करने के लिए अनेक मतों का अभ्युदय होता रहा है। वास्तव में हिन्दुत्व स्वयं कोई "इज्म" अर्थात् मत (रिलीजन) नहीं है, परन्तु इसके विकास में अनेक मतों ने योगदान दिया है। निश्चय ही सिख पंथ भी उसकी एक अभिन्न कड़ी है।

यदि ऐतिहासिक संदर्भ में देखा जाए तो ऐसा लगेगा कि धार्मिक स्वतंत्रता व समन्वय की यह भावना हिन्दू धर्म की विषेषता रही है। समय-समय पर हिन्दू धर्म में अनेक धार्मिक सम्प्रदायों तथा उपासना पद्धतियों का विकास हुआ। परन्तु इसका सम्बन्ध सदैव उसकी मूल धारा से रहा। गुरु नानक देव से लेकर १८४९ ई० तक समन्वय का यह निरन्तर प्रवाह अबाध गति से चलता रहा।

ब्रिटिश राजनीतिज्ञ का षड्यन्त्र

परन्तु १८४९ ई० में पंजाब के अंग्रेजी साम्राज्य में विलीनीकरण से इस प्रवाह को रोकने तथा योजनापूर्वक अलगाव की भावना पैदा करने का प्रयास हुआ। अलगाव का मुख्य कारण ब्रिटिश राजनीतिज्ञों का प्रयास था। लार्ड डलहौजी को लगा कि पंजाब के अंग्रेजी राज्य में मिल जाने से सिखों की संख्या निरन्तर घटती जाएगी। अतः सिख सैनिकों को लम्बे बाल रखने तथा दाढ़ी रखने के लिए प्रेरित किया, उनके लिए सिख ग्रन्थी नियुक्त किए तथा

उनके लिए गुरुद्वारा जाना अनिवार्य किया। उसने "बांटों और राज्य करो" के विभाजनकारी शस्त्र का भी उपयोग किया। सिखों को भी "राजभक्त" तथा "देशद्रोही" दो भागों में बांटा गया। जिन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध १८५७ ई० में भाग लिया था उन्हें अनेक यातनाएं, कष्ट तथा देश निकाला दिया गया तथा "जी हुजूर" सिख नेताओं का एक नया वर्ग तैयार किया गया। इन्हीं जी हुजूर नेताओं के माध्यम से इस पृथक्करण की भावना को उत्तेजित किया गया। गुरुमुखी लिपि एवं जन्म तथा विवाह के संस्कारों को योजना-पूर्वक अलगाव की भावना पैदा करने में उपयोग किया गया।

तत्कालीन ग्रन्थों तथा घटनाओं के अध्ययन करने से स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है कि हिन्दू समाज में सिखों को अलग करने की प्रवृत्ति के जन्मदाता अंग्रेज ही थे, जिनका उद्देश्य ब्रिटिश साम्राज्य को बहुत देर तक बनाए रखना था अंग्रेजों की हिन्दू-मुस्लिम तथा केशधारी व गैरकेशधारी हिन्दुओं को अलग करने की नीति में बड़ी समानता दिखाई देती है। जिस प्रकार सर सैय्यद अहमद खां जैसे व्यक्ति को सरकारी सम्मान दिए गए वैसे ही वफा-दार सिख नेताओ को ऊंचे-ऊंचे स्थान दिए गए।

१८९२ ई० में खालसा कॉलिज, अमृतसर की स्थापना हुई जिसकी व्यवस्थापिका समिति का अध्यक्ष लाहौर के अंग्रेज कमिश्नर को बनाया गया। इसके सदस्य अमृतसर के कलैक्टर तथा निदेशक इत्यादि होते थे। शीघ्र ही यह कालेज "चापलूसों का कॉलेज" के नाम से प्रसिद्ध हो गया परन्तु अभी भी अग्रेज अपनी योजना में पूर्णतः सफल नहीं हुए थे।

मैकालिफ की छद्म योजना

अंग्रेजों की सिख पंथ को हिन्दू धर्म से अलग करने की विनाशक योजना को आंशिक सफलता १९वीं शताब्दी के अन्तिम दशक में मिली। इस योजना को सफल करने में श्री मैक्स आर्थर मैकालिफ ने वही कार्य किया जो कांग्रेस के जन्मदाता श्री ह्यूम अथवा अलीगढ़ कॉलिज के प्रिंसिपल मिस्टर बैक ने किया था। मैकालिफ अंग्रेजी साम्राज्य की सुरक्षा तथा सिखों व हिन्दुओं में भेदभाव उत्पन्न करने के प्रयास में काफी सफल हुए।

मैकालिफ आयरलैण्ड का रहने वाला व्यक्ति था। उसका जन्म २९ सितम्बर १८३७ ई० को हुआ था। १८५२ में आई० सी० एस० की परीक्षा पास करने के बाद उसकी पहली नियुक्ति बंगाल में हुई पंजाब में अपना भविष्य उज्ज्वल देखते हुए उसने अपना तबादला पंजाब करवा लिया। यहां आकर

उसने हिन्दी व फारसी का ज्ञान प्राप्त किया। १८ वर्ष तक न्यायाधीश के रूप में पंजाब में कार्य किया। सरकारी नियमों में संशोधन होने से उसे लगा कि पंजाब तबादला करने पर उसे आर्थिक हानि हुई है अतः वह पुनः बंगाल जाने का प्रयास करने लगा। तत्कालीन वाइसराय लार्ड रिपन ने उसके प्रार्थनापत्र को स्वीकार नहीं किया। १८८२ ई० में वह डिप्टी कमिश्नर एवं १८८४ ई० में जालन्धर डिवीजन का डिविज़नल व सेशन जज नियुक्त हुआ तथा इसी पद पर १८८८ ई० में उसका स्यालकोट तबादला हो गया। इसी बीच मैकालिफ ने पुनः बंगाल जाने के प्रयत्न किए। सम्भवतः इसके मुख्य कारण मैकालिफ का अपने एक वकील के प्रति अशिष्ट व्यवहार, सरकारी कार्य के प्रति उदासीनता तथा उपेक्षा थी।

जब मैकालिफ को तबादला न होने से निराशा हो गई तो उसने अपना ध्यान दूसरी ओर लगाया। वह एक बार दीवाली के अवसर पर अमृतसर गया तथा सिख पंथ से अत्यधिक प्रभावित हुआ। उसने "कलकत्ता रिव्यू" में कई लेख लिखे। गुरुमुखी लिपि का ज्ञान प्राप्त किया; ज्ञानियों से संपर्क स्थापित किया; सिंह सभाओं में भाग लेना प्रारंभ किया। फरीदकोट, नाभा व पटियाला के राजाओं ने उसे सहायता दी।

१८९२ ई० में उसने "आदि ग्रन्थ" का अंग्रेजी में अनुवाद करने का विचार किया तथा पंजाब सरकार से यह प्रार्थना की कि उसे सरकारी नौकरी से मुक्त कर अनुवाद करने के लिए "स्पैशल ड्यूटी" पर लगाया जाए। मैकालिफ ने यह भी बताया कि सिख धर्म के इस ग्रन्थ का अनुवाद करना लाभकारी होगा। उसने इससे पूर्व १८७७ ई० में एक जर्मन मिशनरी डा० ट्रम्प के अंग्रेजी अनुवाद की कटु आलोचना भी की।

अक्टूबर १८९८ ई० के "ऐशयाटिक क्वार्टली रिव्यू" में अपने एक लेख में मैकालिफ ने इस ग्रन्थ का अनुवाद करने के पीछे अपने उद्देश्य को स्पष्ट किया है। उसका यह कथन है कि योरोप, अमरीका, आस्ट्रेलिया आदि देशों में अनेक लोग सिख पंथ को हिन्दू धर्म का अंग ही समझते हैं। वह उनके इस भ्रम को दूर करना चाहता है। स्वयं मैकालिफ ने इस ग्रन्थ का अंग्रेजी अनुवाद राजनैतिक दृष्टि से भी उपयोगी बतलाया। मैकालिफ का कहना है कि वह इस स्तर से डा० ट्रम्प द्वारा किए गए गलत अनुवाद का कुछ प्रायश्चित कर सकेगा तथा इसके द्वारा विश्व को नए धर्म से परिचित करायेगा। अतः मैकालिफ का मुख्यतः राजनैतिक उद्देश्य था। १६ नवम्बर १८८८ को सिंह सभा, अमृतसर द्वारा लार्ड डफरिन को एक स्मृतिपत्र का हवाला देते

हुए उसने लिखा है कि अगर "हमारे पवित्र ग्रन्थ का विश्वसनीय अनुवाद हुआ तो वह उसी तरह सच्चे व राजभक्त सिख रहेंगे जैसे पहले ब्रिटिश सरकार के थे।"

राजभक्ति एक चाल

मैकालिफ ने भारत के धर्मों को दो भागों में बांटा। ब्रिटिश सरकार के प्रति वफादार और गैर-वफादार। उसने सिख पंथ को पहली श्रेणी में रखा। उसने धार्मिक तटस्थता की नीति को "आत्मघातक" बतलाया तथा सरकार को सिख धर्म का प्रचार करने के लिए "नियम" बनाने को कहा। उसने सिखों की वफादारी की प्रशंसा करते हुए सरकार से अनुरोध किया कि उन्हें सेना में अधिक स्थान दिया जाए। इतना ही नहीं, उसने स्वयं भी लम्बे केश रख लिए व अपने को "मैकालिफ सिंह" कहना प्रारंभ कर दिया। सिख उसे "ज्ञानी जी" कहने लगे।

वास्तव में मैकालिफ ने यह सिद्ध करने की कोशिश की कि सिख पंथ हिन्दू समाज से बिलकुल अलग है। खुफिया पुलिस की मदद से उसने अपने विचारों को तेजी से प्रचारित किया। उसने यह भी कहना शुरू किया कि गोमांस खाने पर सिख पंथ में प्रतिबन्ध नहीं है। तीर्थ यात्राओं की उसने कटु आलोचना की। गुरुमुखी लिपि के आधार पर अलग सिख विश्वविद्यालय स्थापित करने को प्रेरित किया।

षड्यन्त्र को समझें

अतः मैकालिफ के जीवन-चरित्र के अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि वह सिखों में रानी विक्टोरिया के प्रति वफादारी की भावना बढ़ाते हुए उन्हें हिन्दुओं से अलग रखना चाहता था। इस सबका परिणाम यह हुआ कि सिखों व हिन्दुओं के बीच खाई बढ़ती गई। बाद में साम्प्रदायिक चुनाव, राजनैतिक स्वार्थ तथा कुछ सिखों में धार्मिक कट्टरता की भावना ने इसे और बढ़ावा दिया।

अतः आवश्यकता है कि देश की बदलती हुई परिस्थितियों में अपनी मूल मान्यताओं को दृष्टिगत रखते हुए, एकता की भावना को अधिकाधिक बलवती बनाया जाए। ★

"वेदोद्धारिणी"

(द्वैमासिक अनुसन्धान-पत्रिका)

(१) वेद, शाखा, संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषत्, प्रातिशाख्य, शिक्षा, अनुक्रमणिका, श्रौत-गृह्यसूत्र आदि मूल ग्रन्थों का शोध प्रबन्ध तथा प्रकाशन

(२) वेद तथा वैदिक भाषा में प्रवेश हेतु प्रत्येक अंक में क्रमिक तथा विधिवत् सुगम वेद प्रवेश-पाठ्यक्रम

(३) देश तथा विदेशों में स्थित वैदिक अनुसंधान केन्द्रों का विशेष परिचय, विशिष्ट वैदिक विद्वानों के जीवन तथा महत्त्वपूर्ण कार्यों का प्रकाशन, वैदिक युग के अविस्मरणीय इतिवृत्त इत्यादि

(४) सुकुमार वर्ग के लिए शुभ वैदिक सन्देश, युवा वर्ग के लिए उत्तम वैदिक विचारधारा, प्रौढ़ों के लिए उत्तम विचार-प्रवाह तथा सर्वसाधारण के लिए वैदिक जीवन का मानदण्ड

(५) वेद में उपलब्ध विज्ञान, जैसे अध्यात्म-विज्ञान, आत्म-अनुशासन, वैदिक दर्शन, मनोविज्ञान, भाषा-विज्ञान, उच्चारण-विज्ञान, व्याकरण-शास्त्र का दर्शन, आयुर्विज्ञान, खगोल-विज्ञान, गणित-विज्ञान, उपकल्पित, प्रतिरूप, पर्जन्य-विज्ञान, कला और संगीत, ऊर्जा एवं अणु शक्ति, अंतरिक्ष विज्ञान, लिपि-विज्ञान, कृषि-विज्ञान, वनस्पति-विज्ञान, पशु-पक्षी, फल, पुष्प आदि

(६) गृह-कार्य, पवित्र संस्कार, खान-पान, रूप-शृंगार-सज्जा, पारिवारिक सम्बन्ध तथा कर्त्तव्य-धर्म, ग्रामसमुदाय, युद्ध-कौशल, वर्ण एवं आश्रम-प्रणाली, राष्ट्रीय समिति इत्यादि

(७) वेद के अनुसार देश की वर्तमान समस्याओं का समाधान, आधुनिक-पत्रकारिता की रीति-नीति विभिन्न धर्मों की आड़ में राजनीतिक उद्देश्य पूर्ति, वर्तमान भारत अपने सांविधानिक ढांचे में, शत्रु और मित्र आदि।

सम्पादक : पं० अभिविनय भारथी, विद्यावाचस्पति

एक प्रति	६.००	वार्षिक चंदा	३०.००
चार-वर्षीय	१००.००	आजीवन सदस्यता	२५१.००

वेदोद्धारिणी सभा

एक्स-११, पश्चिमी पटेल नगर, नई दिल्ली-११०००८

दूरभाष : ५८३३४३

देशभक्ति का जोश

—राकेशरानी

"आ गया—वह आ गया । निर्मल भैया आ गया ।" मृगेन्द्र की आवाज सुन सभी बालक उसकी ओर देखने लगे । जिधर मृगेन्द्र ताक रहा था, उसी तरफ सभी की निगाहें उठ गयीं ।

पंचेत सरोवर के किनारे बैठे और टहलते हुए अनेक लोगों के बीच में निर्मल दिखाई दे रहा था । कभी साफ नजर आता तो कभी वह लोगों की भीड़ में ओझल हो जाता । फिर भी आ तो रहा था उसी ओर जहां किशोरों और बालकों का वह समूह जमा था,जिसे मृगेन्द्र ने उसके आने की जानकारी दी थी ।

अनाथ बंधु पंजा, संतोष कुमार बृजकिशोर चक्रवर्ती, रामकृष्ण राय और मृगेन्द्र दास ये सभी किशोर उसी निर्मल भैया का तो इन्तजार कर रहे थे, जो अब आ रहा था उन्हीं की ओर ।

और थोड़ी देर में निर्मल अपने मित्रों की टोली के बीच आ मिला । निर्मल ने एक बार चारों ओर नजर दौड़ाई यह जानने के लिए कि कहीं उसके साथियों के अलावा कोई अजनबी तो उनके आस-पास नहीं है । जब वह इस बारे में पूरी तरह निश्चिंत हो गया तो धीरे से बोला "मित्रो, कल बर्ज खेलने आएगा ।"

मृगेन्द्र ने प्रश्न किया "कहां ?"

"जेल के सामने वाले खेल के मैदान में ।"

"तुम्हें किसने बताया है निर्मल भैया" मृगेन्द्र ने सवाल किया ।

"टाउन क्लब के सेक्रेटरी से अभी-अभी मिलकर आ रहा हूं । उन्होंने ही यह जानकारी दी है ।"

यह सुनते ही मृगेन्द्र की आंखों में एक चमक दमक उठी । वह तुरंत बृजकिशोर की ओर मुड़ा और बोला "बृज दा, ताली बजाओ—अपना काम बन गया ।"

और फिर कुछ देर ठहर कर मृगेन्द्र बोला "कल का मैच मुहम्मडन स्पोर्टिंग क्लब नहीं जीतेगा—टाउन क्लब की भी जीत नहीं होगी । कल की जीत हम ही दर्ज कराएंगे ।"

तभी मृगेन्द्र ने फिर कहा "बृज, तुम बताओ बर्ज किस तरफ से मैदान

की ओर आएगा ?"

"एक रास्ता कन्या पाठशाला की तरफ से है और दूसरा पूर्व की ओर से। ऐसी संभावना है कि बर्ज पूर्व वाले रास्ते से ही आएगा।"

"ठीक है तुम पूर्व की ओर मुख करके यानी उस रास्ते की ओर देखते हुए—किन्तु सड़क से दूर खड़े रहना—मैं मैदान में ही रहूंगा। खेल आरम्भ होने से कुछ देर पहले खिलाड़ी फुटबाल से खेलने का अभ्यास भी किया करते हैं। भला उस समय तुम लोगों में से कौन रहेगा मेरे साथ ?"

"मैं रहूंगा" तुरन्त बोल उठा अनाथ बन्धु !

और मृगेन्द्र ने कहा "अच्छा ठीक है।"

तभी शिकायत-सी करते हुए रामकृष्ण ने कहा—

"मृगेन्द्र भैया, तुम मेरे साथ अन्याय कर रहे हो।"

"और मुझ पर भी" निर्मल ने भी अपनी बात कह दी और साथ ही यह भी कि "मैं उस रास्ते पर केवल खड़े-खड़े क्या करूंगा भला—वहां खड़ा होना तो बेकार ही रहेगा !"

मृगेन्द्र ने उन्हे समझाते हुए कहा "देखो मित्रों—यह एक सांझा काम है। यदि हर एक यही कहे कि फुटबाल के खेल में मैं ही सैन्टर फारवर्ड अथवा हाफ फारवर्ड रहूंगा तो क्या खेल खेला जा सकता है ? सभी खिलाड़ी मिल-जुलकर खेलें तभी टीम को जीत दिला पाते हैं ? इसे ही तो कहते है टीम वर्क।"

निर्मल और रामकृष्ण को मृगेन्द्र की इस दलील से संतोष तो नहीं हो पाया था किन्तु फिर भी उन्हें यह सलाह माननी ही पड़ी, क्योंकि किसी एक को अपना अगुआ बनाए बिना कोई काम पूरा नहीं हो पाता—इस बात को तो समझते थे वे भी।

वास्तव में उनमें तो एक और कारण से डाह के भाव उभर रहे थे। उन्हें यह तो स्वीकार था कि मृगेन्द्र उनका मार्गदर्शक या नेता रहे। किन्तु अनाथ बंधु के बारे में उनका मत था कि वह उस विशेष कार्य की दृष्टि से अनुभवहीन है, जिसे पूर्ण करने की उन्होंने ठानी हैं। उन्हे यह नहीं सुहा रहा था कि वह नेता के साथ रहे। इतना ही नहीं मृगेन्द्र के सबसे आगे रहने पर भी वे प्रसन्न नहीं थे।

अजीब धुन के धनी थे ये किशोर। उनमें थी देश के लिए बलि चढ़ाने के लिए एक दूसरे से आगे आने की होड़। उन्होंने ज्यों-त्यों कर अपने

मन को समझाया। और फिर बृज ने पूछा "मुझे क्या करना होगा?"

"तुम्हें देना होगा संकेत। तुम हरा स्वैटर पहने रखना। हम तुम्हारी ओर ध्यान देते रहेंगे। खेलते हुए भी। वही गाड़ी है और बर्ज उसमें है, यह संकेत देने के लिए तुम पहना हुआ स्वेटर उतारना लेकिन गाड़ी के आगे बढ़ जाने के बाद। जब हम तुम्हें स्वैटर उतारते हुए देखेंगे तो समझ जाएंगे।

"मेरी पिस्तौल?"

"वह तुम अपने पास ही रखो। हम में से किसी को वहां से निकल जाने का अवसर मिल गया तो निकल जाएंगे और यदि गोलियां कम रहीं और फिर से पिस्तौल भरने का मौका नहीं मिला तो तुम तैयार रहोगे ही। काम नहीं हो सका तो निकल भागने की कोशिश की जाएगी।"

और अब निर्मल की बारी थी। उसने पूछा "मुझे क्या करना होगा?"

"तुम्हे रहना होगा कन्या पाठशाला के पास।" और फिर मृगेन्द्र ने रामकृष्ण को समझाया "तिनघड़िया स्टेशन के पास तुम तैयार रहना।"

इस तरह काम का विभाजन कर दिया गया। टोली के जो किशोर वहां उपस्थित नहीं थे—उन्हें सूचना देने का काम बृज को सौंप दिया गया। और फिर वे सभी चले गए पास के स्वल्पाहार गृह में। उन्होंने नाश्ता जो करना था।

□ □ □

ये दिन थे गुलामी के। ब्रिटिश सत्ता के खूनी पंजों में जकड़ी हुई थी भारत माता। उस गोरी सरकार को चुनौती देने को तैयार हुई थी किशोरों की यह टोली। सरफ़रोशी की तमन्ना थी इन सभी के मन में। वे भारत-भूमि को जीवन दान देने के लिए जीवन के बलिदान के दर्शन के पक्षधर थे।

मेदिनीपुर की क्रांतिधर्मी धरती के ही जाए थे। ७ जनवरी १९३१ को मेदिनीपुर के जिला अधिकारी जेम्स पेडी को क्रांतिकारी अपने कोप का भाजन बना ही चुके थे।

उसके बाद वहां जिलाधिकारी बनाकर भेजा गया था राबर्ट डगलस। क्रांतिकारियों का उस पर भी आरोप था कि उसने बन्दीगृह (जेल) में कांग्रेसी स्वयंसेवकों को सताया है। कड़ी सुरक्षा व्यवस्था के बाद इस डगलस से हिसाब किया था उन्होंने ३० अप्रैल १९३२ को।

और अब मेदिनीपुर का जिलाधिकारी था बी० ए० जे० बर्ज। दो-दो

अंग्रेज अधिकारियों की हत्या से मेदिनीपुर में दमनचक्र का दौर-दौरा पूरे ज़ोर-शोर से चलाया जा रहा था। गिरफ्तारियों का चक्र पूरी तरह जारी था। सारे मेदिनीपुर जिले में आतंक व्याप्त था। निरीह जनता पर हो रहे अत्याचारों का प्रतिकार—यही था उस किशोर टोली का विचार जिसका मृगेन्द्र था कर्णधार।

इस टोली में शामिल थे वे किशोर जिन्होंने अंग्रेजी साम्राज्यवाद से टक्कर लेने को अपने जीवन का ध्येय बताया था। ये थे वे अधखिले फूल जो भारत-माता के चरणों में न्योछावर होने को अपना अहोभाग्य मानने की शपथ खाकर समरांगण में कूदे थे।

उम्र तो उनकी भी वही थी जिसमें प्रायः मन बहक जाता है। सुख-सुविधाएं रास आती हैं। किन्तु उन्होंने तो चुनी थी अलग ही जीवन की राह। वह राह जिसमें हास-विलास और परिहास के लिए कोई स्थान नहीं था। उनके मन में तो थी एक ही चाह "तेरा वैभव अमर रहे मां—हम दिन चार रहें न रहें।"

□ □ □

६ नवम्बर, १९३२ को बर्ज ने पुलिस अधिकारियों को अत्याचार और दमन के लिए नए तरीकों के सुझाव दिए थे। इन नए तरीकों और दमन चक्र ने मेदिनीपुर वासियों में आतंक व्याप्त कर दिया था। लेकिन भीतर ही भीतर प्रतिशोध की आग भी प्रखर होती जा रही थी।

पुलिस और गुप्तचर विभाग के कर्मचारी हर प्रमुख स्थान पर अपनी पैनी दृष्टि बिछाए चौकस रहते थे। कोई पिस्तौल और बमों की चर्चा तो कहीं नहीं करता, इसकी वे टोह लेते रहते थे। संदेह में ही अनेक लोग बंदी बनाए जा रहे थे। अनेक निरपराध भी अंग्रेजों के टुकड़खोरों के कोप का ग्रास बन रहे थे।

लेकिन मातृभूमि के लिए शीश दान की भावना से प्रेरित किशोरों की यह टोली भी सेर के लिए सवा सेर बनने में यकीन रखती थी। इसलिए उसने भी अंग्रेज गुप्तचरों की खोज-खबर लेने के लिए अपने साथी तैनात किए हुए थे।

बर्ज जहां तक संभव होता अपने बंगले से बाहर नहीं आता। वह जिन समारोहों में शामिल होता उनमें भी पुलिस का कड़ा सुरक्षा प्रबन्ध किया जाता था।

एक बार तो ऐसा भी हुआ था कि एक कार्यक्रम में बहुत बड़ी संख्या में तैनात गुप्तचरों में से ही एक को एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी ने सन्देह में घेर लिया था और अपना परिचय पत्र दिखाने के बाद ही उसे रिहाई नसीब हो पाई थी। पर इससे उसके परिचितों पर भी उसका भेद खुल गया था। इसलिए उसे इस सारे प्रकरण में अपमानित होना पड़ा था।

ऐसे ही अपमानित और आहत लोग भी क्रान्तिकारियों के काम आते थे और उन्हें पते की बात बता जाते थे !

मेदिनीपुर की क्रांतिकारी टोली का उन दिनों एक ही निशाना था जिला अधिकारी बर्ज। वे बर्ज के बारे में पूरी-पूरी टोह लेते थे कि वह कब और कहां जाता है। किससे विचार-विमर्श करता है और किस-किस कार्यक्रम में भाग लेता है, इसका भी क्रान्तिकारी हिसाब लगाते थे, क्योंकि उन्हें बर्ज से हिसाब जो चुकता करना था एक दिन।

मेदिनीपुर में उन दिनों जो आतंक व्याप्त था उसमें तो बम-पिस्तौल ये शब्द भी किसी के मुख पर चढ़ते तो विपदा का कारण बनते थे अतएव इन हथियारों की वहां प्राप्ति की तो कल्पना करना भी कठिन था।

अतएव मृगेन्द्र, अनाथ बन्धु, निर्मल, बृज, रामकृष्ण आदि इन क्रांतिदूत किशोरों की टोली ने भी एक दिन कलकत्ता की राह ली थी। वहीं से प्राप्त किए थे उन्होंने हथियार और वहां से वापसी में वे खड़गपुर स्टेशन पर उतर गए थे, जहां से उन्होंने गुप्तचरों की नजरो से बचते-बचते मेदिनीपुर तक की मंजिल पूरी की थी।

गोप टोली के एक पुराने खंडहर को बनाया था अपना केन्द्र इन क्रांतिधर्मा किशोरों ने। इस खंडहर के चारों ओर घना जंगल। जहां सामान्य जन आते हुए भय खाते थे। वहीं किया था इन किशोरों ने गोली चलाने का अनेक दिन तक लगन सहित अभ्यास।

□ □ □

एक दिन इस टोली को जानकारी मिली थी कि बर्ज एक सभा में शामिल होने वाला है। भयानक बाढ़ के कारण बंगाल में अनेक घर-द्वार तबाह हो गए थे। फसलें जलमग्न होकर तबाह हो गई थी। तब अंग्रेज शासन ने भी लोगों के आंसू पोंछने के लिए जो नाटक रचे थे, उन्हीं में से एक थी वह सभा भी।

इन किशोरों ने भी वर्ज से निपट लेने का कार्यक्रम बनाया था। वे भी उस सभा में पहुंचे थे। लेकिन उन्हें वहां उचित अवसर नहीं मिल पाया था, इसलिए वे खाली हाथ ही लौट आए थे। अपनी असफलता पर वे मन मार कर रह गए थे।

वर्ज को खेलों में रुचि थी। विशेषतः वह फुटबाल के खेल का प्रेमी था। क्रांतिकारी किशोर मंडली को भी इस बात की जानकारी मिल चुकी थी। इसलिए उनमें से कई खिलाड़ी टीमों में शामिल हो गए थे और उचित अवसर की खोज में थे। वे बड़ी अधीरता से कर रहे थे उस दिन की प्रतीक्षा जब वर्ज किसी दिन खेल के मैदान में आएगा और फिर उससे जिन्दगी और मौत का खेल खेला जाएगा।

बाढ़ पीड़ितों की सहायतार्थ आयोजित सभा में वर्ज को ठिकाने न लगा पाने में असफलता की खीझ उन्हें परेशान कर रही थी।

३१ अगस्त, १९३३ को वर्ज फुटबाल के मैदान में आया भी था, लेकिन उस दिन भी ये किशोर अपनी तमन्ना पूरी नहीं कर पाए थे।

□ □ □

डगलस की हत्या करने वाले प्रद्योतकुमार को फांसी हुए आठ माह बीत चुके थे। १२ जनवरी, १९३३ को मेदिनीपुर के कारागार में उसने शहादत का जाम पीकर अपना जीवन मातृभूमि की आजादी के लिए समर्पित कर दिया था। उसी दिन से ये क्रांतिकारी किशोर हर क्षण उचित अवसर की खोज में बड़ी बेसब्री से गुजारते थे। अपनी अब तक की असफलता से उनके मन में भी निराशा की भावना घर करती थी। लेकिन फिर एक नयी आशा को मन में संजो कर वे अगले अवसर की ताक में जुट जाते थे।

आज मेदिनीपुर में पंचेत सरोवर के निकट उन्होंने उस नए अवसर को हाथ से नहीं जाने देने का संकल्प ग्रहण किया था।

कार्य विभाजन के बाद जलपानग्रह में जलपान ग्रहण कर वे अपने अपने ठिकानों को रवाना हो गए थे—एक आशा को मन में बसाए कि अब की बार वे अवसर नहीं चूकेंगे।

□ □ □

कई संभ्रान्त परिवारों की देवियों ने इन किशोरों की सहायता की थी। उनमें से कुछ ने अपने घरों में उनके हथियार छिपा कर रखे थे तो कुछ ने उन्हें अपने यहां आश्रय भी दिया था। अब उन किशोरों ने कल असली मैच

खेलना था। अतः उन्होंने कब अपने हथियार लेने हैं, यह समय भी निश्चित कर लिया गया था।

□ □ □

आज था दो सितम्बर। मृगेन्द्र को विश्वास था कि आज का दिन उनके लिए शुभ सिद्ध होगा। उन्हें अपने ध्येय की पूर्ति में अवश्य ही सफलता मिलेगी।

निर्मल कालेज में प्रथम वर्ष का छात्र था और रामकृष्ण भी कभी उसका सहपाठी रहा था। वृज ने इन्टर तक पढ़ने के बाद विद्यालय छोड़ दिया था। शेष किशोर भी उन्हीं के सम वयस्क थे।

दोपहर के दो बजे थे। ये सभी किशोर एक स्थान पर मिले। उन्होंने अपने-अपने शस्त्रास्त्रों की भली भांति जांच पड़ताल की। कार्य की रूपरेखा की फिर से समीक्षा की। यह भीं निश्चय हुआ कि कौन किस मार्ग से जाएगा। साथ ही यह निर्णय भी कि सफलता या असफलता दोनों ही दशाओं में सभी किशोर धटनास्थल से बचकर निकलने की चेष्टा अवश्य ही करेंगे।

टाउन क्लब का वर्ज ही अध्यक्ष था। उसकी टीम में कुछ प्रमुख अधिकारी भी खेलने वाले थे। उन्हीं में थे सहायक पुलिस अधीक्षक व ब्रिटिश रेवेन्यू इन्स्पैक्टर भी।

खेल के मैदान में दर्शकों का भी भारी जमघट था। अतः खेल शुरू होने ही वाला था। मुहम्मडन क्लब के खिलाड़ी गेंद उछाल रहे थे।

और तभी अचानक ही नजरें बचाकर मृगेन्द्र और अनाथबंधु भी खिलाड़ियों के बीच आ घुसे और बड़ी कुशलता के साथ फुटबाल उछालने लगे। किसी को यह संदेह भी नहीं हुआ कि उनका फुटबाल के उस खेल से कोई नाता-वास्ता नहीं है। मृगेन्द्र और अनाथबंधु खिलाडी होने का यह अभिनय करते हुए भी अपनी नजर दूर हरा स्वैटर पहन कर खड़े निर्मल पर ही टिकाए हुए थे।

सहज ही मृगेन्द्र ने देखा कि स्वैटर उतर गया है। उसने अपने समीप आये फुटबाल को अपने पद प्रहार से अनाथबन्धु की ओर फेंका और जोर से स्वर उभारा—रैडी ए० बी (अनाथ बन्धु)! अन्य खिलाडियों के भी ऐसे स्वरों के कोलाहल में मृगेन्द्र के इस आह्वान की ओर अन्य किसी का भी ध्यान

नहीं गया। तभी अनाथबन्धु ने अपने सिर से धक्का लगाकर गेंद को एक ओर उछाल दिया।

और फिर मृगेन्द्र और अनाथबंधु दोनों ही धीरे-धीरे फील्ड से खिसकने लगे। उन्होंने देखा कि बर्ज की गाडी पूर्वी मार्ग पर खड़ी है। उसके चारों ओर खड़े हैं सिपाही। बर्ज गाड़ी से नीचे उतर रहा था। उसके दांये-बांये दो रक्षक थे। लम्बे-तड़ंगे जवान।

बर्ज को लेकर वे दोनों रक्षक मैदान की सीमा तक आए और वहीं ठहर गए। बर्ज मैदान की मध्य दिशा की ओर बढ़ रहा था।

दक्षिण दिशा में गोल की ओर गेंद फेंकने वाले मुहम्मडन स्पोर्टिंग क्लब की टीम के बीच से निकल कर मृगेन्द्र और अनाथ बंधु एक दूसरे से अन्तर बनाए रखकर बड़े ही विश्वास की मुद्रा में धीरे-धीरे बर्ज की ओर जाने लगे। अब उन्होंने स्थिति का आकलन किया और यह निष्कर्ष निकाला कि अब यदि बर्ज के दोनों रक्षकों ने दौड़ भी लगाई तो भी कोई चिंता की बात नहीं।

बर्ज दस-बारह फीट की दूरी तक आया आगे निकलते हुए अनाथ बन्धु आगे से वह निकला। उसका ध्यान खिलाड़ियों की ओर था।

तभी मृगेन्द्र ने आटोमैटिक पिस्तौल निकाली और लगभग दस फुट की दूरी से बर्ज पर तीन गोलियां दाग दीं। ठीक उसी समय अनाथबन्धु ने भी अपनी पिस्तौल से लगातार पांच फायर किए। बर्ज कुल मिलाकर लगी आठ गोलियों से घायल हो धरती पर अचेत होकर गिर पड़ा।

अब खेल के मैदान में रणभूमि का दृश्य उपस्थित हो गया था। बर्ज को ठिकाने लगाने में मृगेन्द्र की क्रांति टोली आज सफल हो गयी थी।

घटना स्थल से २५-३० फुट की दूरी पर ही पुलिस उपअधीक्षक था। गोलियो की धांय-धांय सुनते ही वह मुड़ा। पलभर में ही उसने भांप लिया कि खेल के मैदान में यह कैसा अनोखा खेल खेला जा चुका है। उसने तुरंत ही आगे बढ़ कर मृगेन्द्र पर गोलियाँ दागी। दूसरी ओर मृगेन्द्र ने भी अपनी पिस्तौल से गोलियां दागीं। पुलिस अधिकारी और मृगेन्द्र दोनों ही घायल हो गए थे।

उसी समय बर्ज के रक्षक भी दौड़ते-भागते वहाँ आ पहुँचे थे। उनमें से एक ने धरती पर पड़े मृगेन्द्र पर गोली चलायी। मृगेन्द्र अचेत हो गया और उसे अस्पताल पहुचाया गया, जहां अगले दिन उसकी नश्वर काया मात्र वहां पड़ी रह गयी और उसने चिर-विदाई लेली। मृगेन्द्र ने मातृभूमि के

सम्मान के लिए अपने प्राणों का बलिदान का भारतीय स्वातन्त्रय आंदोलन के इतिहास में एक और पृष्ठ जोड़ दिया था।

उसी समय राजस्व निरीक्षक द्वारा चलायी गयी गोली से अनाथबन्धु चिर-निद्रा में सो गया था।

चुनौती और प्रति-चुनौती भरे इस मैच में क्रांतिकारी किशोरों की टीम पहला गोल दागने में सफल हो गयी थी। लेकिन शासक दल ने एक के पीछे दो गोल बना दिए थे और अभी और गोल भी उनकी ओर से होने वाले थे। लेकिन पहली बारी तो क्रांतिकारी ही जीतने में सफल हुए थे। भारत ही विजयी हुआ था। विजय का सेहरा उस दिन क्रांतिकारियों के ही सिर पर बंधा था।

अपेक्षा के अनुरूप ही धर-पकड़ का सिलसिला पुनः तेज हो गया।

मृगेन्द्र नहीं रहा था। अनाथ बन्धु अपना नाम सार्थक कर गया था। परन्तु ये भारत माता के लाडले लाल यह बता गए थे कि इन छोटे-छोटे किशोरों की दृढ़ता हिमगिरि के उतुंग शिखर से कम नहीं थी। उनके विचारों की गहराई हिन्द महासागर से टक्कर लेती थी।

□ □ □

पुलिस ने अन्वेषण का काम चार माह तक चलाया। उसके बाद एक विशेष न्यायालय का गठन हुआ और ३ जनवरी, १९३४ को शुरू हुआ अभियोग की सुनवाई का सिलसिला।

मृगेन्द्र मंडली के प्रमुख सदस्य निर्मल जीवन घोष को प्रथम क्रमांक के अभिनय का सम्मान प्राप्त हुआ था। व्रजकिशोर चक्रवर्ती, रामकृष्ण आदि समेत कुल तेरह किशोरों को इस कांड में अभियुक्त बनाया गया था।

पांच सप्ताह की सुनवाई और कारंवाई के बाद निर्मल और रामकृष्ण को मृत्यु-दण्ड सुनाया गया और चार अन्य को आजीवन कारावास।

१३ अगस्त, १९३४ को हाईकोर्ट में मामले पर पुनः विचार हुआ और ३० अगस्त, १९३४ को हुआ अंतिम निर्णय। पूर्व निर्णय कायम रहा।

और फिर एक बार २५ अक्तूबर १९३४ को व्रज और रामकृष्ण वध; स्तंभ पर हंसते-हंसते झूल गए। स्वातन्त्र्य लक्ष्मी के श्रीचरणो में दो और कलियां समर्पित हो गईं।

महर्षि दयानन्द के विचारों की प्रासंगिकता

—डा० भवानीलाल भारतीय

भारत के इतिहास में विगत शताब्दी में उत्पन्न और विकसित पुनर्जागरण के विभिन्न आन्दोलन अनेक दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण हैं। यह वह समय था, जब मध्यकालीन संकीर्णता एवं मूढ़तापूर्ण धारणाओं की केंचुल से मुक्त होकर भारतीय समाज विज्ञान एवं बुद्धिवाद की नवस्फूर्त प्रेरणाओं को ग्रहण करने में यत्नशील था। इसी युग में आर्य-समाज और ब्राह्मसमाज जैसे नवोदय की चेतना के वाहक आन्दोलन ने जन्म लिया, जिन्होंने देशवासियों में धार्मिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय जागृति को उत्पन्न किया। इसी समय आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द ने एक सर्वतोमुखी कार्यक्रम प्रस्तुत कर शताब्दियों से व्याप्त वैचारिक जड़ता, सामाजिक शैथिल्य तथा धार्मिक रूढ़िवादिता को समाप्त करने के लिए जोरदार आवाज उठाई।

दयानन्द सरस्वती मूलतः एक धार्मिक पुरुष थे। उन्होंने भारतीय सामाजिक विधान में स्वीकृत आश्रम प्रणाली के अनुसार संन्यास आश्रम की दीक्षा अपनी युवावस्था में ही ले ली थी। प्रायः यह धारणा प्रचलित हो गई है कि संन्यासाश्रम में दीक्षित होने के पश्चात् व्यक्ति के लिए किसी प्रकार के सांसारिक अथवा लौकिक कर्तव्यों का पालन शेष नहीं रहता। परन्तु दयानन्द के विचारानुसार संन्यासी को स्वकल्याण के लिए प्रयत्नशील रहने के साथ-साथ समाज, राष्ट्र एवं मानवता के व्यापक हित के लिए सतत कर्तव्य-निष्ठ होना चाहिए। इसी लक्ष्य को अपने सामने रख कर उन्होंने मानव जीवन के सर्वतोमुखी कल्याण की अनेक योजनाएं बनाईं।

स्वामी दयानन्द ने भारत के धार्मिक क्षेत्र में फैले पाखण्डों, आडम्बरों तथा अंधविश्वासों को अत्यन्त चिन्ता की दृष्टि से देखा था। उन्होंने अनुभव

किया कि वास्तविक धर्म तो नैतिक नियमों के पालन तथा विश्व हित की दृष्टि को समक्ष रख कर किये जाने वाले कर्मों और अनुष्ठानों के समूह का नाम है न कि बाह्य आचारों एवं व्यर्थ के कर्मकाण्डों का अंधानुकरण। भारत के मध्यकालीन जीवन में विभिन्न सम्प्रदायों, पूजा-उपासना की पद्धतियों आदि के प्रचलित हो जाने के कारण जो सामाजिक एकता छिन्न-भिन्न हो गई, उसे दूर करने के लिए प्राचीन वैदिक अध्यात्म, उपनिषद् प्रतिपादित चिन्तन तथा अन्य आर्ष शास्त्रों में प्रस्तुत उदात्त विचारधारा के क्रियान्वयन पर जोर देकर दयानन्द ने यह सिद्ध कर दिया कि धर्म का वही स्वरूप हमारे लिए ग्राह्य और आचरणीय है जो वेदमन्त्रों की सार्वभौम शिक्षाओं से अनुस्यूत हुआ है।

इतिहास में दयानन्द सरस्वती एक महान् समाज सुधारक तथा सामाजिक समस्याओं के निदानकर्ता के रूप में स्वीकार किये गये हैं। उन्नीसवीं शताब्दी में व्याप्त बहुविध सामाजिक बुराइयों के उन्मूलन हेतु स्वामी जी ने जो प्रयत्न किये थे, उनकी प्रासंगिकता आज भी ज्यों की त्यों है। यह तो ठीक है कि आज बालविवाह कम होते हैं, विधवाओं के पुनर्विवाह पर किसी प्रकार का बंधन नहीं है, नारी शिक्षा तथा नारी जागरण की सभी दिशायें पूर्णतः उन्मुक्त हैं, अस्पृश्यता का कोढ़ भी पर्याप्त सीमा तक समाप्त किया जा चुका है, तथापि समाज के जीवन को विषाक्त तथा उत्पीड़न युक्त बनाने वाली कुप्रथाओं में न्यूनता नहीं आई है। दहेज का दानव आज हिन्दू समाज को निगल जाने के लिए तैयार है। फ़िजूलखर्ची, फैशनपरस्ती, पश्चिम का अंधानुकरण, अंधविश्वासों में अभूतपूर्व वृद्धि, दलित एवं शोषित वर्ग पर नानाविध अत्याचार जैसी सामाजिक बुराइयों ने आज के समाज को अत्यन्त जर्जर तथा विषाक्त बना दिया है। यदि स्वामी दयानन्द की सामाजिक चेतना को पुनः जागृत नहीं किया गया तो यह निश्चित है कि भारत का हिन्दू समाज अधिकाधिक अधोगामी होता जायगा।

स्वामी दयानन्द के विचार आज के युग में सर्वाधिक सार्थकता रखते हैं; इसका सबसे बड़ा प्रमाण तो यही है कि स्वामी जी ने मनुष्य की बौद्धिकता तथा उसके विवेक को जागृत करने की आवाज उठाई थी वे चाहते थे कि विचारशील एवं प्रबुद्ध मानव के सभी कार्य पूर्ण विवेक तथा हिताहित ज्ञान पर आधारित होने चाहिए। कोई विचार या धारणा हमें अपने पूर्वजों से प्राप्त हुई है, इसी लिये उसको ग्रहण कर लेना श्रेयस्कर होगा, दयानन्द इसे स्वीकार नहीं करते। प्राचीन होने से ही कोई बात साधु नहीं होती और न नवीन होने

से ही वह त्याज्य अथवा हेय हो जाती है। यही कारण है कि स्वामी दयानन्द जहां प्राचीन शास्त्रों में प्रतिपादित जीवन मूल्यों को स्वीकार करने पर जोर देते थे, वे यह भी कहते थे कि पश्चिम के विज्ञान, तकनीक तथा भौतिक उन्नति को स्वीकार किये बिना हमारी प्रगति का मार्ग प्रशस्त नहीं होगा।

दयानन्द के विचार श्रेय और प्रेय, इहलोक एवं परलोक, विज्ञान एवं धर्म, कर्म तथा उपासना में समुचित सामंजस्य स्थापित करने पर जोर देते है। उन्होंने भारतवासियों में प्रखर राष्ट्रभाव को जागृत किया और यह स्पष्ट कर दिया कि विदेशी राज्य चाहे वह कल्याणकारी तथा प्रजाहित की भावना को लक्ष्य में रखकर संचालित किया जाता हो, स्वराज्य की तुलना में कदापि स्पृहणीय नहीं होता। सभी बिन्दुओं पर विचार करने के पश्चात् स्वामी दयानन्द के विचारों की युग संदर्भ में सार्थकता सुनिश्चित हो जाती है।

चित्र-परिचय

१. मुखपृष्ठ का चित्र भगवान् रामचन्द्रजी का है। १० अप्रेल को रामनवमी है। (सम्पादकीय टिप्पणी पृष्ठ सात पर पढ़ें।)

२. अन्तिम पृष्ठ पर जनरल हरिसिंह नलवा का चित्र है। इस सम्बन्ध में विशेष लेख इसी अंक में दिया जा रहा है।

३. पृष्ठ १६ के सामने वाला चित्र स्वर्गीय ठाकुर यशपाल सिंह का है, जिन्होंने राजनैतिक क्षेत्र में भारतीयता का पक्ष उजागर किया।

४. पृष्ठ १७ के सामनेवाला चित्र श्री बिहारी लाल जी शास्त्री का है, जो वृद्धावस्था में भी वैदिक धर्म के प्रचार में लगे रहते हैं।

युग-युग का शत वन्दन

—राधेश्याम 'आर्य' विद्यावाचस्पति

दयानन्द के सच्चे सैनिक, तुम थे हे सेनानी,
नूतन शक्ति भरी उर-उर में, तुमने हे बलिदानी,
धर्म-राष्ट्र की दिव्य वेदि पर, कर डाला सर्वस्व समर्पित,
वैदिक धर्म ध्वजा लहराई, संजोए मानवता का हित।
सकल राष्ट्र में तुमने ही, आशा की किरण बिखेरी,
गर्जन सुनकर भव्य तुम्हारा, बाज उठी रणभेरी,
जाग उठा हिन्दुत्व देश में, तेरी ही ललकारों से,
गूंज उठीं फिर दसों दिशाएं, निर्भय जय-जयकारों से।
राष्ट्र-विरोधी सभी शक्तियां, फिर तो हुईं प्रकम्पित,
सद्यत्नों से दिव्य तुम्हारे, राष्ट्र अस्मिता अनुकम्पित,
बना हुआ 'जन-ज्ञान' तुम्हारा, है सद्धर्म प्रचारक,
कण-कण को कर रहा सुजागृत, मानवता उद्धारक।
प्रतीक तुम्हारी कर्मठता का, दयानन्द संस्थान,
भारत-भू पर नहीं कहीं है, जिसका अब उपमान,
धरती पर है बना हुआ यह, आर्यों का अभिमान,
किया प्रकाशित इसने है ऋषि का 'वेद भाष्य' महान्।
शमित किया तुमने निर्भय हो, इस धरती का क्रन्दन,
सत्य-धर्म के अहो प्रणेता ! हे युग के अभिनन्दन,
नव जागृति के, नवल चेतना के तुम थे स्पन्दन,
वेदभिक्षु: जी, आज तुम्हें है युग-युग का शत वन्दन॥

मुसाफिरखाना, सुलतानपुर

—राजेन्द्रप्रसाद

भारत की मिट्टी

कितना प्यार किया तुमको पर
तुम संशय के बने पुजारी;
भारत की मिट्टी में रहकर
लगती तुम्हें नहीं यह प्यारी।

मानवता का एक धरातल
एक सत्य है पूर्ण धरा पर;
छोड़ हृदय की उलझी बातें;
सोचो सजे सुहाना यह घर।

सीधी-सच्ची-सी ये बातें
तोड़ रूढ़ियों की जंजीरें;
जो तन-मन को जला रही हैं
मिटा हृदय की गलत लकीरें।

पोंछ आंसुओं की सतरों को
देख चीर कर रक्त हमारा
देश हमारा हम सब इसके
फिर क्यों कुंठित जीवन-धारा।

धरती का चीत्कार यही है
जीवन की ललकार यही है;
मिट्टी के पुतले मिट्टी के
कण-कण में तो प्यार यही है।

भवनाथपुर टाउनशिप
पलामू-८२२१२९

वे एक चलती-फिरती संस्था थे

—विश्वम्भरप्रसाद शर्मा
(महामन्त्री, भारत गोसेवक समाज)

महात्मा वेदभिक्षु: जी के निधन से राष्ट्र की अपूरणीय क्षति हुई है। पिछले १०-१५ वर्षों में उन्होंने वैदिक धर्म के प्रचार और हिन्दू समाज के बहुमुखी उत्थान के लिए जो कार्य किया, वह आर्यसमाज के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा रहेगा। चारों वेदों का शुद्ध भाष्य प्रकाशित करके उन्होंने हजारों की संख्या में न केवल आर्य परिवारों में बल्कि पौराणिक हिन्दू परिवारों में भी पहुंचाया। उनके द्वारा संस्थापित दयानंद संस्थान वैदिक साहित्य के प्रकाशन का ऐसा प्रतिष्ठान है जिसकी समता कोई आर्य प्रकाशन संस्था नहीं कर सकती। उन्होंने अकेले बिना किसी संगठन के संरक्षण और सहयोग के वैदिक धर्म के प्रचार और प्रसार का महान् कार्य किया।

गुरुकुल से स्नातक बनने के बाद आप आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रचार कार्य में योगदान करते रहे और आगे चलकर आपनेआर्य, आर्यमित्र और आर्योदय आदि पत्रों का बड़ी कुशलता के साथ सम्पादन किया। आप एक निर्भीक पत्रकार थे और बड़े से बड़े व्यक्ति की भी गलत कार्यपद्धति के लिए आलोचना करने में संकोच नहीं करते थे। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के पदाधिकारियों के साथ भी आपका कार्यपद्धति को लेकर मतभेद रहा। आप ओजस्वी वक्ता और कुशल लेखक थे। आगे चलकर आपने दयानन्द संस्थान की स्थापना करके वैदिक साहित्य के प्रकाशन का युगान्तरकारी कार्य किया। आपने अपने निर्भीक और स्वतन्त्र विचारों के अनुसार 'जन-ज्ञान' मासिक पत्र का प्रकाशन किया। हिन्दी का यह एक श्रेष्ठ पत्र है जिसकी लोकप्रियता उत्तरोत्तर बढ़ रही है। दयानन्द संस्थान ने लाखों की संख्या में धार्मिक पुस्तकें व ट्रैक्ट छापकर हिन्दू समाज में जन-जाग्रति पैदा की।

महात्मा वेदभिक्षु: जी एक चलती-फिरती संस्था थे। वानप्रस्थ में दीक्षित होने से पूर्व आपका नाम भारतेन्द्रनाथ था। आप ओजस्वी वक्ता और व्याख्याता थे। गोरक्षा, हरिजनोद्धार और हिन्दू समाज को शक्तिशाली बनाने के लिए आपने काफी आंदोलन किया। सौभाग्य से आपको पण्डिता राकेशरानी के रूप में एक आदर्श विदुषी और साहसी धर्मपत्नी मिलीं जिन्होंने एक आदर्श जीवन

सहचरी के रूप में आपके सेवा कार्यों में सक्रिय योगदान किया। महात्मा वेदभिक्षु: जी अस्वस्थ होते हुए भी इधर कुछ वर्षों से हिन्दू समाज को प्रगतिशील और शक्तिशाली बनाने के कार्य में संलग्न थे।

जहां कहीं हिन्दुओं पर किसी संकट के आने की बात सुनते या साम्प्रदायिक दंगों में हिन्दुओं के सताये जाने की खबर आती तो तुरन्त वहां पहुंचतें। आपने स्व० प्रो० रामसिंह जी की प्रेरणा से अ० भा० हिन्दू रक्षा समिति की स्थापना की और इस संस्था के माध्यम से अनेक स्थानों पर जाकर सभाओं में भाषण दिए और हिन्दुओं को विधर्मियों के हिन्दूविरोधी षड्यन्त्रों से सचेत किया। आपकी धर्मपत्नी भी आपके साथ इस प्रचार कार्य में रहती थीं। यद्यपि सरकार ने आपके ऊपर तथा पंडिता राकेशरानी के ऊपर हिन्दुत्व की हिमायत करने के लिए साम्प्रदायिक विद्वेष फैलाने के नाम पर कई मुकद्दमे चला रखे हैं, मगर आपने इनकी कभी परवाह न की और आप निर्भीकता से हिन्दुओं के हितों की रक्षा के कार्य में लगे रहे।

उन्होंने वैदिक कार्य के प्रसार और हिन्दुत्व की रक्षा के लिए अपना जीवन समर्पित कर रखा था। स्वास्थ्य ठीक न रहने पर भी आप बराबर भ्रमण करते रहे, व्याख्यान देते रहे, हिन्दुओं में प्राण फूंकने वाला साहित्य सृजन करते रहे। इस घनघोर परिश्रम के कारण आपका स्वास्थ्य गिरता गया—वे जिगर के रोग से ग्रस्त हो गए। आपका रोग जब काबू से बाहर हो गया तो आपको अस्पताल में भरती किया गया। वहां भी रोग बढ़ता गया। जब कभी उन्हें होश आता तो हिन्दू समाज के भविष्य की चिन्ता करते रहते। मृत्यु से १५ दिन संघर्ष करने के बाद वह महापुरुष महाप्रयाण कर गया। एक शक्तिशाली तेजस्वी व्यक्तित्व लुप्त हो गया।

उस दिवंगत महान् आत्मा के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि यही है कि देश के नवयुयक और सेवाभावी महानुभाव उनके अधूरे कार्य को आगे बढ़ायें। आज हिन्दू समाज पर संकट के बादल छाये हुए हैं, हिन्दुत्व खतरे में है, सारा देश संकट में है। हमें हिन्दुत्व की भावना को जागृत करना होगा। जब तक हिन्दू समाज संगठित होकर अपने हितों की रक्षा के लिए संघर्ष तथा बलिदान करने के लिए तैयार नहीं होगा तब तक न गोहत्या का कलंक दूर होगा और न हिन्दू संस्कृति की रक्षा होगी। हिन्दुत्व अगर जीवित है तो राष्ट्र जीवित है।

मैं स्व० महात्मा वेदभिक्षु: जी के प्रति आदरयुक्त श्रद्धांजलि अर्पित करता हुआ उनके परिवार के प्रति हार्दिक समवेदना व्यक्त करता हूं।

३ सदर थाना रोड, दिल्ली-६

'अयन्त इध्म आत्मा' के ज्वलन्त प्रतीक

—गजानन्द आर्य

यज्ञ की परिभाषा और गुणगान करना बहुत आसान है। किसी यज्ञरूप संकल्प की अग्नि में किसी व्यक्ति-विशेष का आहुति बन कर समर्पित हो जाना भी बहुत दुर्लभ बात नहीं। किन्तु किसी यज्ञ की ज्वाला में अपने पूरे परिवार को साथ लेकर समर्पित हो जाना—यह एक विरला ही उदाहरण होता है। निश्चय ही महात्मा वेदभिक्षु: आर्यसमाज के सौभाग्य के रूप में अवतरित हुए थे।

जब भी कभी मैं दयानन्द संस्थान, दिल्ली में जाता हूं, किसी यज्ञशाला की-सी गरिमा का अनुभव वहां करता हूं। उस अविस्मरणीय यज्ञशाला के यजमान दम्पति और इदन्न मम की भावना से ओत-प्रोत उनकी विदुषी पुत्रियों के कार्य संचालन की दक्षता को देखकर मेरे हृदय में एक स्वाभाविक श्रद्धा जन्म लेती रही है। पं० भारतेन्द्रनाथ जी से मेरा प्रथम परिचय करीब १५ वर्ष पहले कलकत्ता शहर में तब हुआ था, जब वे आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से प्रकाशित आर्योदय पत्रिका के सम्पादक थे। प्रथम परिचय केवल शिष्टाचार के निर्वाह के रूप में ही था। किन्तु तत्पश्चात् मैं महात्मा जी की ओजस्वी और क्रांतिकारी विचारधारा का नियमित ग्रहण उनके साहित्य के माध्यम से करने लगा। कभी उत्साहित हो मैंने उनके पास अपनी कोई रचना भेजी तो वह बहुत ही अपनत्व व सम्मान के साथ उन्होंने स्वीकार व प्रकाशित की। यह आदान-प्रदान मुझे उनके पास लाता गया। आज जब उनको याद करने बैठा हूं तो जीवन की चन्द घटनाएं स्मृतियों के रूप में उभर कर मानस पटल पर आ रही हैं।

गत वर्ष पिता जी के निधन के पश्चात् किए गए शान्ति यज्ञ में हमारे दिल्ली निवास-स्थान पर सैकड़ों लोगों के बीच मुझे पूज्य महात्माजी तथा पूज्या माताजी दृष्टिगत हुए, जो यज्ञ की पुरी कार्रवाई तक वहां विराजमान रहे। यज्ञ की समाप्ति पर मेरे पास आए, अपनी भावभीनी संवेदना प्रकट की तथा साथ ही 'जन-ज्ञान' में प्रकाशनार्थ स्वर्गीय पिता जी का एक चित्र और परिचय भेजने का अनुरोध करके चले गए। घोर दुःख के क्षणों में ऐसे आत्मीय जन ही तो जीवन का सम्बल बनते हैं।

सितम्बर ८३ की एक बात याद आ रही है। मैं और मेरा छोटा भाई सत्या-

नन्द दीपावलि पर होने वाले शताब्दी समारोह की प्रारम्भिक तैयारियों को देखने अजमेर जाने के लिए दिल्ली के रेलवे स्टेशन पर खड़े थे। आदरणीय महात्मा जी और माता जी अनायास ही वहीं दिख गये। कुशल प्रश्नों का आदान-प्रदान हुआ। उन्हें जब हमारा गन्तव्य ज्ञात हुआ तो उन्होंने कागज के एक टुकड़े पर अपनी पुत्री (जो अजमेर वासिनी है) के नाम हमारे आतिथ्य का आदेश लिखकर हमें दिया। जीवन की ये छोटी-छोटी बातें ही तो आत्मीयता को बढ़ाती हैं और कालान्तर में स्मृति के एलबम में चिर सुखदायी स्मृतियों के रूप में स्थापित हो जाती हैं। ▭

१६ बालीगंज, सर्कुलर रोड
कलकत्ता

---

२८ मुकद्दमे
और
वे भी एक अकेली महिला
हिन्दू नेता पर!

अपराध है हिन्दू समाज को जगाना
अन्य सम्प्रदायों के प्रहारों से बचाना
और अपनी संस्कृति व अस्मिता का बोध कराना

क्या आप सहते ही रहेंगे ?
क्या आप सोते ही रहेंगे ?

बातों से काम नहीं चलेगा। देश, समाज और धर्म की रक्षार्थ
कुछ करना ही होगा।
अपना नैतिक भावनात्मक तथा आर्थिक सहयोग
अधिक से अधिक भेजिए।

अखिल भारतीय हिन्दू रक्षा समिति द्वारा प्रसारित

श्री वेदभिक्षु : एक दिव्य विभूति

—डॉ० एल० पी० शास्त्री

दिवंगत आदरणीय श्री भारतेन्द्रनाथ (वेदभिक्षु जी) के स्मरण में जो कुछ भी लिखा या कहा जाये वह अल्प ही होगा। उनका व्यक्तित्व चिरस्मरणीय रहेगा। उनके विषय में बहुत कुछ लिख लेने के सफल प्रयास के बावजूद बहुत कुछ अलिखित छूट जाने की सम्भावना है। उनके सम्पर्क में आने के बाद से वे सारी बातें, विचारों के आदान-प्रदान, मिलन एवं जुदाई वेला सभी तो मेरी आंखों के सम्मुख प्रतिबिम्बित होती रहती हैं। कोई ऐसी बात मैं भूल नहीं पाता जो उनके साहचर्य काल में घटित हुई। वह प्रसन्न मुद्रा, वह सौहार्दपूर्ण सम्बोधन एवं मेरे प्रति उनका अपरिमित प्रेमभाव मुझे जहां उनके प्रेमरस विभोर व्यक्तित्व की याद दिलाते रहते हैं वहां उनकी यादें मुझे भावविह्वल भी करती रहती हैं। मैं कतई यह विश्वास नहीं कर पाता कि वे आज हमारे बीच नहीं रहे। अभी भी ऐसा प्रतीत होता है कि आज शाम या कल सुबह वे टेलीफोन पर अवश्य बातें करेंगे तथा अपने और दूसरों के स्वास्थ्य के बारे में पूछेंगे।

वैसे तो उन्होंने पार्थिव शरीर का त्याग किया है किन्तु उनके कृत कर्म, आर्यसम्पदा को उपलब्ध कराने का उनका दृढ़ निश्चय, हिन्दू धर्म के प्रति उनकी सतत निष्ठा एवं साधना ये सभी अविस्मरणीय हैं। उनके भाषण मैंने सुने और मेरे दिल और दिमाग में अग्नि का प्रादुर्भाव हुआ, उनके लिखे लेख पढ़े और हिन्दुत्व के प्रति एक नवीन चेतना जागृत हुई, दयानन्द संस्थान की पुस्तकें एवं पत्रिकायें पढ़ीं और मुझे अहसास हुआ कि श्री वेदभिक्षु जी का लगाया वृक्ष किस तरह ज्ञान और अग्नि का प्रसार कर रहा है। उनका वेद मन्दिर भी देखा और वहां उनकी कल्पनाओं को साकार करती गतिविधियां भी देखीं। उस ग्रामीण परिवेश में उनकी और उनके वेद-मन्दिर की गीत-गाथा भी सुनी। देश की महान् विभूतियों के साथ उनका सम्पर्क भी देखा। किन-किन बातों को लिखूं! उनसे मेरा परिचय काल सिर्फ दो वर्ष का रहा, फिर भी चिर-परिचित होने का आभास होता था। मेरे हृदय-पटल पर उनकी छवि सदा बनी रहेगी।

ऐसे देदीप्यमान सितारे गगनांगन में कभी-कभी उभरते हैं। आज वे हमसे उल्का की तरह अलग हो गए हैं। उन्हें और उनके साहसपूर्ण कार्यों को हम भुला नहीं पाते। आज आवश्यकता है कि हम तन-मन-धन से उनके लगाये पौधों का सिंचन करें और उनकी कल्पनाओं को एक आकार दें, जिससे न सिर्फ हिन्दू-समाज का अपितु सम्पूर्ण मानव का कल्याण हो।

आई० डी० अस्पताल, किंग्जवे कैम्प, दिल्ली-९

लेखनी के धनी श्री भारतेन्द्रजी

—वेदव्रत शर्मा

२१ दिसम्बर की प्रातः सवा छः बजे बड़े भाई सत्यजी हांफते-हांफते आए। उन्होंने बताया कि श्री भारतेन्द्रजी का देहान्त हो गया है। उनके पार्थिव शरीर को दयानन्द संस्थान में ले आए हैं। समाचार सुनते ही मैं सन्न-सा रह गया। पिछले दिनों जब मैं उन्हें अस्पताल में देखने गया था। उन्हें देखकर ऐसा आभास नहीं हुआ था कि वे बहुत जल्दी हमसे विदा हो रहे हैं। मैं तुरन्त संस्थान की ओर भागा। दूर से ही रोने की दिल दहला देने वाली आवाजें सुनाई पड़ रही थीं। संस्थान के कार्यालय में कोहराम मचा हुआ था। सभी शोकमग्न और सभी के चेहरों पर मायूसी। सभी निगाहें नश्वर शरीर पर गड़ी हुई। उनका शरीर कपड़े में लिपटा हुआ संस्थान के कमरे के बीच पड़ा हुआ था। भाभी (श्रीमती राकेशरानी) पागलों की तरह पथरायी आंखों से गुमसुम-सी उनके माथे को बार-बार सहलाए जा रही थीं।

लगभग ३० वर्ष पूर्व स्वर्गीय तायाजी (श्री पं० यशःपाल जी सिद्धान्तालंकार) ने मेरा उनसे परिचय कराया था। आप अत्यन्त सरल, सहज तथा विनम्र स्वभाव के व्यक्ति थे। बाल-सुलभ चेष्टाएं उनके जीवन का अंग थीं। बच्चों को फुसलाकर तथा लालच देकर काम करवाने में आप प्रवीण थे।

मुझे उनकी कार्य शैली को निकट से देखने का अवसर मिला है। मेरी कई बातों में उनसे भिन्न राय थी, पर इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह एक सच्चे आर्य, ऋषि-भक्त, कुशल वक्ता, निर्भीक पत्रकार, मूर्धन्य साहित्यकार, वेदों के प्रचारक तथा लेखनी के धनी थे। गद्य और पद्य दोनों पर ही उनका समान अधिकार था। मैं उनकी पैनी दृष्टि, शब्द-योजना और संक्षिप्तता पर मुग्ध था। थोड़े-से शब्दों में वे अपनी बात बड़े सुन्दर ढंग तथा सहजता से स्पष्ट कर देते थे।

आपने आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब तथा आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश द्वारा प्रकाशित 'आर्य', 'आर्यमित्र' तथा 'आर्योदय' साप्ताहिक पत्रिकाओं का सफल सम्पादन किया। साप्ताहिक 'आर्यमित्र' को दैनिक 'आर्यमित्र' बनाने का श्रेय भी आपको ही प्राप्त है। आपने जिस पत्रिका को भी हाथ लगाया, उसे चमकाकर रख दिया, उसकी काया पलट दी, कलेवर बदल डाला। साथ ही साथ

उसके ग्राहकों में भी बढ़ोतरी होने लग जाती। आपने आर्य पत्रिकाओं के आकर्षक साज-सज्जा के साथ विशेषांक निकालने का भी सूत्रपात किया। आपने लगभग दो दशकों तक इन संस्थाओं की सेवा की। अपने स्वच्छन्दतावादी स्वभाव के कारण आपकी आत्मा इन संस्थाओं की चारदीवारी में छटपटाने लगी। आए दिन अधिकारियों के आपसी झगड़ों, नोक-झोंक और अनधिकार चेष्टाओं से आप घुटन अनुभव करने लगे। अब इन संस्थाओं में रहकर अधिक समय नष्ट करना आपके वश में न था। उन्हें अपनी लेखनी पर पूर्ण विश्वास था। इसी विश्वास के बल पर इन संस्थाओं से छुटकारा पाकर १६ वर्ष पूर्व आपने "जन-ज्ञान" मासिक पत्रिका का शुभारम्भ किया और दयानन्द संस्थान की स्थापना की। कुछ समय बाद आपने "जन-ज्ञान" के अंग्रेजी, मराठी तथा साप्ताहिक संस्करण (हिन्दी) भी निकाले। परन्तु अर्थाभाव और सीमित साधनों को देखते हुए इन्हें बीच में ही विराम देना पड़ा।

आपका विचार था कि आपने इन संस्थाओं में रहकर अपने जीवन का अमूल्य समय नष्ट किया है। मेरा उनसे नम्र निवेदन था कि आपने इन संस्थाओं में रहकर बहुत कुछ प्राप्त किया। निरन्तर लेखन एवं मुद्रण से आपकी शैली में पैनापन आया है और इससे आपने पाठकों में एक विशिष्ट स्थान बना लिया है। यही कारण है कि आप जिस संस्था या पत्रिका से सम्बद्ध होते हैं, पाठक उसी पत्रिका की ओर आकृष्ट होने लगते हैं।

श्री भारतेन्द्रजी के पास विलक्षण प्रतिभा थी। आर्य साहित्य के प्रचार एवं प्रसार की नवीन योजनाएं थीं। जितना आर्य तथा वैदिक वाङ्मय का प्रचार आपने किया, शायद ही किसी संस्था ने भी किया हो। १० वर्ष की अल्पावधि में ४० हजार वेदों की प्रतियों को घर-घर में पहुंचाना आपका ही काम था। बिना लगन तथा उत्साह के ऐसा सम्भव न था। यह एक श्रमसाध्य कार्य था। अपनी योजनाओं को क्रियान्वित करने के लिए आपने श्रद्धालु आर्य जनता से प्रचारवाहिनी की मांग की ताकि आर्य साहित्य को प्रचारवाहिनी में भरकर चौराहों पर जा-जाकर बिक्री कर सकें।

आप दयानन्द संस्थान को गीता प्रेस का रूप देना चाहते थे। आपकी प्रबल इच्छा थी कि वैदिक साहित्य की भी गीता प्रेस के प्रकाशनों की तरह नगर-नगर एवं गांव-गांव में बिक्री हो। आप आर्ष साहित्य को बहुत ही सस्ते दामों पर और आकर्षक कलेवर में आर्य जनता को उपलब्ध कराना चाहते थे।

आपने जब-जब भी आर्य जनता का आह्वान किया, आर्यजनता ने आपको कभी निराश नहीं किया। आर्य जनता ने आपकी अपीलों पर हजारों रुपए एक-

त्रित करके आपकी सेवा में भेंट किए। अलीपुर के पास स्थित वेद मन्दिर आपकी योजनाओं को सफलीभूत करने की ओर एक कदम है। आपने जो धन एकत्र किया, उसे अपने एवं अपने परिवार के निजी कार्यों पर व्यय न करके आर्ष साहित्य के प्रचार और आर्य विचारधारा के प्रसार पर ही लगाया।

आप कट्टर सिद्धान्तवादी आर्यसमाजी थे। सिद्धान्तों पर आपने कभी किसी से समझौता नहीं किया। अपनी पुत्रियों के लिए वर ढूंढ़ने में जाति, प्रान्त की कभी चिन्ता नहीं की। आपने गुण, कर्म और स्वभाव को ही प्राथमिकता एवं वरीयता दी। उनके विवाहों के अवसर पर दहेज देना, आडम्बर रचना आपने सीखा ही न था। ईश्वर की कृपा से आपको सभी दामाद आर्य विचारों के ही मिले। ठीक ५० वर्ष की अवस्था में आपने वानप्रस्थ लेकर वेद मन्दिर में अपना डेरा जमा लिया था। वेद का प्रचारक वेदप्रचार की योजनाओं में रात-दिन तल्लीन रहने लगा था। परन्तु कौन जानता था कि वेदप्रचार की इन महान् योजनाओं का प्रणेता एकाएक हम सबसे विमुख होकर अपनी योजनाओं को अधूरा छोड़कर महाप्रयाण कर जाएगा। अन्तिम समय तक उनकी लेखनी आर्य विचारों के प्रसार में ही संलग्न रही। आर्ष साहित्य का प्रकाशन और आर्य संस्कृति का प्रसार ही उनके जीवन के दो महान् लक्ष्य थे।

ईश्वर से प्रार्थना है कि वह उनके परिवार को शक्ति एवं सामर्थ्य प्रदान करे ताकि वे उन अधूरी योजनाओं को पूर्ण करने में सक्षम हों। भाभी, उनकी पुत्रियां तथा उनके योग्य दामाद उनके पदचिह्नों पर चलते हुए जनता के सहयोग से इन अधूरे कार्यों को पूर्ण करने में अपने कर्त्तव्य का पालन करें तथा ऋषि के ऋण से उऋण हों। ▭

पिस्तौल

चौदह गोली का बना, भारत में पिस्तौल,
अपने कर में लीजिए, ओ३म् नाम को बोल,
ओ३म् नाम को बोल, फूंक दो शुद्धि मन्त्र
दो वेदों का ज्ञान, बचाओ प्रजातंत्र
होवे हिन्दू राज्य, खत्म हो गुण्डा टोली
करें सामना दुष्ट, चलावो चौदह गोली

— स्वामी बेधड़क वैद्य

—इन्द्रसेन शर्मा

वे उत्साह का स्रोत थे

हे भगवान् ! मेरे मुख में किसका नाम आया कि मेरी वाणी ने मेरी जिह्वा को चूम लिया। महात्मा वेदभिक्षु: हमारे बीच में नहीं रहे किन्तु उनका नाम लेते ही उनके कार्यों का स्मरण कर मन में उत्साह उत्पन्न होता है। अभी हिन्दू समाज को उनकी बहुत आवश्यकता थी। उनकी वाणी ओजस्वी थी और लेखनी में विशेष आकर्षण था। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब छोड़ने के पश्चात् उन्होंने वेदभाष्य आकर्षक और सस्ते दामों पर घर-घर पहुंचाने की घोषणा की तो आर्यजनों ने उन पर धन की वर्षा की। उन्होंने अपना वचन पूरा किया। तब आर्यों की सर्वोच्च सभा ने भी उत्साह बटोरा और वेद प्रकाशित करने का कार्य अपने हाथ में लिया। वेदभाष्य का प्रचार करने के लिए वे दिल्ली में वेद मन्दिर की स्थापना में जुट गये। दुःख है कि वे वेद मन्दिर को पूर्ण नहीं कर सके।

स्वतन्त्र भारत में मुस्लिम आतंक बढ़ता देखा तो अपनी लेखनी हिन्दुओं की रक्षा के लिए उठाई। हिन्दू रक्षा समिति की स्थापना की और जन-ज्ञान में उत्कृष्ट लेखों की झड़ी लगा दी। परिणामस्वरूप जन-ज्ञान की सम्पादिका श्रीमती राकेशरानी पर सरकार ने पच्चीस के लगभग अभियोग बना दिए। हिन्दू रक्षा की भावना का प्रचार करने के लिए जहां से आह्वान आया, स्वास्थ्य ठीक न होते हुए भी वहां भागे गये। हिन्दू महासभा के समारोहों में ग्वालियर, भीलवाड़ा और भोपाल पहुंचे। उनके ओजस्वी भाषणों से हिन्दू जनता ने उत्साह प्राप्त किया। जनूनी मुसलमानों ने धमकी भरे पत्र भेजे कि इस्लाम सम्बन्धी लेख लिखने बंद कर दो, किन्तु उनकी लेखनी रुकी नहीं। जब वे सार्वजनिक सभाओं में जोर से घोषणा करते थे कि ओ३म् का ध्वज मस्जिदों पर लहरायेगा तो जनता करतल ध्वनि से उनकी घोषणा का स्वागत करती थी। इसीलिए मैं उनका प्रशंसक बना। अब उनके कार्यों को आगे बढ़ाने का उत्तरदायित्व उनकी विदुषी धर्मपत्नी श्रीमती राकेशरानी पर आ पड़ा है। हमें आशा है कि वे सफलतापूर्वक इसे निभायेंगी और समाज उनका साथ देता रहेगा। ▭

प्रधान, हिन्दू रक्षा दल, दिल्ली

वह जनून जिस पर हर दिल फिदा हो उठता था

—श्यामसन्दर सेठ

महात्मा वेदभिक्षु :(वानप्रस्थ से पूर्व भारतेन्द्रनाथ)मेरे अभिन्न हृदय मित्र थे। वे मुलझे हुए लेखक, ध्येयनिष्ठ पत्रकार, सहृदय कवि, आर्यसमाज के कर्मठ नेता, सुविख्यात प्रकाशक होते हुए भी व्यवहार कुशल, हंसमुख और एक अच्छे इंसान भी तो थे। उनकी लेखनी अज्ञान, शोषण, अभाव, साम्प्रदायिकता के विरुद्ध आग उगलती थी तो रचनात्मक आन्दोलनों को भी जन्म देती थी। युग की छाती पर खड़े होकर उस बहादुर इंसान ने हर बुराई से टक्कर ली। अंग्रेजी शिक्षा-पद्धति की उपेक्षा करके गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त की। स्वाधीनता संग्राम में सक्रिय भूमिका निभाई, आर्य प्रतिनिधि सभा के उपदेशक बनकर अपने तार्किक व मन-मस्तिष्क को झकझोर देने वाले प्रवचनों से कई नौजवानों को आर्यसमाज का दीवाना बना दिया।

उनसे मेरा सम्पर्क सन् १९५० में आर्य, प्रेस अम्बाला छावनी में हुआ, उनकी आत्मीयता ने मुझेऐसा बांधा कि लगा बड़ा ही पुराना परिचय हो। प्रकाशन व प्रेस कार्य का अनुभवी होने के कारण सलाह-मशविरा चलता ही रहता था। दयानन्द संस्थान की स्थापना के बाद वे प्रमुख पुस्तकों की छपाई में प्राय: मेरी राय लेते रहते थे। वेदों को मात्र ३५ रु० में देने की घोषणा सुनकर हर व्यक्ति अवाक् हो उठा—मगर इस महान मानव के शब्दकोश में शायद असम्भव नाम का कोई शब्द ही नहीं था। निर्णय लेने के बाद संघर्ष में दिनरात एक कर देने का संकल्प और साधन जुटाने की तनिक भी चिन्ता नहीं। बस मुस्करा भर कर इतना ही कह देते थे 'जनहित का कार्य है प्रभु अपने आप साधन जुटा देंगे' इतना अटल विश्वास। और उसी विश्वास से ही बड़ी से बड़ी संस्था भी जो काम न कर सकती थी—इस कर्मवीर ने कर दिखाया था। चारों वेदों का भाष्य ४० हजार घरों में १० वर्ष से कम समय में पहुंचाना उनके जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है। दिल्ली में आयोजित आर्यमहासम्मेलन में महर्षि दयानन्द व आर्य-महापुरुषों का कैलेण्डर मुझ से १ रुपया प्रति कैलेण्डर खरीदकर आठ आने में

बेचना, १।। रुपया कागज की लागत वाले ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश को एक रुपये में बेचने का अदम्य साहसी और घाटा उठाकर धर्म प्रचार में रत रहने वाला 'घाटे का सौदागर' मैंने जीवन में कभी दूसरा नहीं देखा।

मेरा सम्बन्ध शहीद-ए-आजम भगतसिंह के परिवार व कुछ अन्य क्रान्तिकारियों से रहा है। उनके प्रेरक संस्मरण सुनने व उन्हें लेखनीबद्ध करके जनज्ञान में देने की उनकी मांग मैं पूरी न कर पाया— इसका खेद आजीवन रहेगा। 'वेदमन्दिर' की स्थापना व अनेक दुर्लभ ग्रन्थों की छपाई में प्रायः विचार-विमर्श होता था, जिस 'वैदिक सम्पत्ति' को सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा न छपा सकी, इस बात के धनी ने छापकर वेद भाष्य के सैट के साथ मुफ्त भेंटस्वरूप पाठकों को दी। सन् १९८० में हिन्दू-मुस्लिम दंगों व दक्षिण में मीनाक्षीपुरम में धर्म-परिवर्तन ने तो इनमें अनोखा जनून भर दिया। हिन्दू रक्षा समिति गठित करके हिन्दुओं में संगठन व दायित्व बोध का मन्त्र फूंकने लगे। हिन्दुत्व विरोधी शक्तियों द्वारा किए जा रहे आघातों पर गहरा आक्रोश व्यक्त करते हुए हिन्दुत्व की रक्षा के लिए सतत जागरूक रहने हेतु वाणी व लेखनी से दिन-रात इसी काम में लग गए।

राजनीतिक कार्यकर्ता होने पूर्व हिन्दू महासभा तथा अन्य हिन्दू संगठनों को सहयोग देने के साथ-साथ भी वैचारिक पृष्ठभूमि पर उन्हें 'राजनीति के हिन्दूकरण' के मन्तव्य पर सदैव स्पष्ट व हिमगिरि की तरह अडिग पाया। तत्कालीन नेतृत्व की तरह उनमें तनिक भी समझौतावादी दृष्टिकोण नहीं था। धर्मनिरपेक्षता ही नहीं सर्वधर्म समभाव को मान्यता को भी वे ढकोसला ही मानते थे। वे कहा करते थे, सेठ जी हिन्दुत्व ही वह शक्ति है जो देश की एकता, अखण्डता एवं प्रभुसत्ता की रक्षा कर सकती है। उनपर व उनकी धर्मपत्नी पं० राकेशरानी पर लगभग दो दर्जन मुकद्दमे चल रहे हैं। तरह-तरह की धमकियां मिलती थीं पर वे कभी विचलित नही हुए। पन्त अस्पताल में मात्र उनके दर्शन ही कर पाया और फिर २१ दिसम्बर को उनके पार्थिव शरीर को कन्धा देने का ही अवसर मिल पाया। हिन्दू हितों की इतनी कर्मठता से वकालत करने वाला एक रहनुमा उठ गया।

बड़े गौर से सुन रहा था जमाना।
तुम्हीं सो गए दास्तान कहते-कहते ॥

वेद मन्दिर के कार्य को, जनज्ञान को लोकप्रिय बनाने, संगठित हिन्दू रक्षा समिति की शाखाओं को, आर्यसाहित्य के प्रचार-प्रसार इन ढेर सारे कामों में कुछ भी सेवा कार्य कर पाया तो मैं समझूंगा मैं उन्हें सही आदराञ्जलि दे पाया हूं। मैत्री के कर्त्तव्य को निभा पाया हूं।

एन-८८, कीर्तिनगर, नई दिल्ली-१५

भिण्डरांवाले से

—अभिविनय भारथी, विद्यावाचस्पति

आदि से जिसका बना, गुरु सेव्य, शिष्य जहान है।
हिन्द में पंजाब है, पंजाब हिन्दुस्तान है।।

सुनते हैं हिन्दू ध्यान से, गुरुदेव नानक के वचन,
अध्यात्म की सुख-सम्पदा, जिसमें न कोई है स्खलन,
समभाव से, सद्भाव से, निष्काम से इन्द्रिय दमन,
गुरुद्वार, ग्राम-समाज में, श्रद्धा सहित करते नमन,

जब तलक पंजाब में, रहता भला इन्सान है।
हिन्द में पंजाब है, पंजाब हिन्दुस्तान है ।। १ ।।

हिन्दू दर्शन-शास्त्र के सब भेद समझाए गए,
हिन्दूरक्षा हित अरे ! गुरु तेग ने थे सिर दिए,
खालसा के नाम क्यों करते हो काम नए-नए,
'गोविन्द' की शुभ आत्मा, तब शान्त होगी किसलिए,

भिण्डरांवाले अरे ! तू तो बड़ा नादान है।
हिन्द में पंजाब है, पंजाब हिन्दुस्तान है ।। २ ।।

गुरु-शिष्य हिन्दू एक हैं, गुरु-ग्रन्थ वेद समान है,
गुरुद्वार है सबके लिए, इसका न तुझको ध्यान है,
इसमें न कुछ भी भेद है, बस समझ का व्यवधान है,
मत 'शबद' को गन्दा करो, हम भारती सन्तान हैं,

उसमें अकाली दल नहीं, उसमें न खालिस्तान है।
हिन्द में पंजाब है, पंजाब हिन्दुस्तान है ।। ३ ।।

केश धारें या न धारें, एक ही परिवार है,
रोटियों और बेटियों का, एक ही संसार है,
हिन्दुओं की जातियों से, सब बने सरदार हैं,
धर्म, संस्कृति, देश, भाषा, क्यों बनी दीवार हैं,

भिण्डरांवाले बता तू, सन्त या शैतान है।
हिन्द में पंजाब है, पंजाब हिन्दुस्तान है ।। ४ ।।

चौक महता से उड़े थे, गुम हुए होशो-हवास,
स्वर्णमन्दिर में घुसे, करने लगे नानक-निवास,
हिन्दुओं के खून से, जब हो गया 'नानक' उदास,
शरण ली है 'अकाल' में, दे काल तख्त तुझे निकास,

भिण्डरांवाले बता अब, क्या तेरे अरमान हैं।
हिन्द में पंजाब है पंजाब, हिन्दुस्तान है ।। ५ ।।

गुरु दश हुए पंजाब में, वे देश के सिरताज हैं,
गुरु दण्डी विरजानन्द का, करतारपुर में राज है,
यह देश श्रद्धानन्द का, यह लाजपत का ताज है,
बहुत हैं ऐसे नगीने, क्या तुझे अन्दाज है ?

'हंसराज' महान् का, संस्थान आलीशान है।
देश में पंजाब है, पंजाब हिन्दुस्तान है ।। ६ ।।

कौन समझाए अरे ! इस 'भिण्डरां' मतिमन्द को,
हिन्दुओं ने पांच प्यारे, थे दिए 'गोविन्द' को,
वीर बन्दा ने दिखाया, हिन्द के भुजवन्द को,
खून का बदला लिया था, जीत कर सरहिन्द को,

"मर मिटो तुम धर्म पर", गोविन्द का फरमान है।
हिन्द में पंजाब है, पंजाब हिन्दुस्तान है ।। ७ ।।

गांधी ने कहा था—

देश के विभाजन से पहले मेरे शरीर के दो टुकड़े होंगे

मैं अहिंसा का पुजारी होने के नाते प्रस्तावित विभाजन का बलपूर्वक विरोध नहीं कर सकता, यदि भारत के मुसलमान वास्तव में चाहें। परन्तु मैं भारत के विभाजन के कार्य में स्वेच्छा से भाग नहीं ले सकता। मैं उसका विरोध करने में प्रत्येक अहिंसात्मक उपाय का इस्तेमाल करूंगा। विभाजन एक मिथ्यावाद है। मेरी आत्मा इसके खिलाफबगावत करने लगती है कि हिन्दुत्व और इस्लाम दो विरोधी संस्कृतियां और सिद्धांत हैं। मैं इस विचार के खिलाफ हूं कि लाखों भारतीयों ने, जो कल तक हिन्दू थे, आज सिर्फ इस्लाम ग्रहण कर लेने से अपनी राष्ट्रीयता को भी बदल दिया है।

(हरिजन, १३ अप्रैल १९४०)

एम्बिट कार्पोरेशन

एटलांटा बिल्डिग, बम्बई

के सौजन्य से

इन्दिरा सरकार शक्ति प्रदर्शन से झुकती है

—युगलकिशोर चतुर्वेदी

प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी समय-समय पर यह कहती रहती हैं कि केन्द्रीय सरकार को सुदृढ़ और शक्तिशाली बनाना चाहिए, क्योंकि सुदृढ़ केन्द्रीय सरकार ही देश की स्वतन्त्रता, प्रभुसत्ता तथा उसकी अखण्डता को अक्षुण्ण रख सकती है, परन्तु वास्तविकता इसके बिल्कुल विपरीत है।

इस समय ही नहीं, पिछले कई वर्षों से केन्द्र काफी सुदृढ़ तथा शक्तिशाली ही बना रहा है, परन्तु फिर भी उसकी रीति-नीति और कार्य पद्धति ऐसी लचर और बुजदिली की रही है कि उसके कारण एक ओर जहां देश में घोर अशांति, अव्यवस्था तथा अराजकता की अवस्था बनी हुई है, वहां दूसरी ओर यह भी भय है कि बड़े त्याग, तप और कुर्बानी से प्राप्त हमारी राष्ट्रीय एकता, स्वतन्त्रता और अखण्डता भी कहीं खतरे में न पड़ जाये।

सरकार का सुदृढ़ होने का लक्षण यह होता है कि वह समय आने पर किसी भी व्यक्ति, समुदाय या राजनीतिक दल विशेष की धमकी या चुनौती से न डरकर उनका साहस के साथ मुकाबला करती और उसमें सफल होती है। अपनी समूची जनता के साथ समान व्यवहार करती हुई भी कमजोर और बेसहारा व्यक्ति या समुदाय की विशेष तौर पर सहायता करती है।

इस सामान्य सिद्धान्त के विपरीत वर्तमान इन्दिरा सरकार की सदैव से यह नीति रही है कि यदि कोई समुदाय या वर्ग विशेष शान्तिपूर्वक तथा संवैधानिक रीति से अपने अभाव-अभियोग, आवश्यकता अथवा कष्ट-कलाप को दूर कराने के लिये उससे अनुनय-विनय अथवा अभ्यर्थना और प्रार्थना करता है तो उसको तो अमानुषिक अत्याचार या दानवी दमन से दबा दिया जाता है, और यदि कोई दूसरा दबंग व्यक्ति, समुदाय या वर्ग अपनी अनुचित और असंगत मांगें मनवाने के लिये सशस्त्र संघर्ष अथवा हिंसात्मक प्रदर्शन ही नहीं करता, अपितु अपना आतंक और रौब-दाब जमाने के लिए सैकड़ों निर्दोष प्राणियों को बमों और गोलियों से मौत के घाट उतारता, लूट-पाट करता, और डकैती डालता है, तो उसके सामने वह भीगी बिल्ली बनकर घुटने टेक देती है।

हमारे इस कथन की पुष्टि असम तथा अकालियों के आंदोलन के प्रति बरते जाने वाले केन्द्रीय सरकार के रुख से की जा सकती है। एक ओर मूल असमवासी गत कुछ वर्षों से अपने राज्य में चोरी-छिपे वा किन्हीं की प्रेरणा से घुसकर आ चुके या अब आ रहे बंगलादेश के विदेशी नागरिकों को यहां से हटाने के लिये पूर्ण शांति तथा अहिंसात्मक तरीके से मांग पेश करते आ रहे हैं। केन्द्रीय सरकार के बुलावे पर दिल्ली आते रहे अथवा दिल्ली से गृह मन्त्री अथवा अन्य किसी भी

अधिकारी के असम जाने पर उनकी सेवा में उपस्थित होते रहे हैं, परन्तु उनकी मांग को तुरन्त ठुकराया ही नहीं जाता रहा, अपितु उनके द्वारा आपत्तियां उठाने या विरोध करने पर भी वहां अवैधानिक रूप से चुनाव करा दिए गए तथा अभी तक भी उनकी मांगों की उपेक्षा ही की जाती रही है।

इसके विपरीत पंजाब के अकालियों द्वारा अपने लिये पृथक् स्वतन्त्र राज्य खालिस्तान की मांग किये जाने, अन्य समीपस्थ राज्यों के कुछ भू-भाग को पंजाब में मिलाने तथा नदी-नहरों का अधिकांश पानी अपने लिये प्राप्त करने आदि की मांग करने के अतिरिक्त संविधान के २५वें अनुच्छेद को समाप्त कराने के लिए हिंसात्मक आंदोलन और प्रदर्शन ही नहीं करते रहे, अपितु वे अनेक निरीह तथा निर्दोष व्यक्तियों की निर्मम हत्या तथा करोड़ों की संपत्ति की लूटमार करते रहे हैं। साथ ही वे न तो केन्द्रीय सरकार से बात करने दिल्ली जाते और न चंडीगढ़ या अमृतसर में ही उनसे शांति तथा सद्भावनापूर्वक बात करते, फिर भी इन्दिरा सरकार उनके सामने घुटने टेक कर कुछ अधिकारियों की अदला-बदली करने अथवा समय-समय पर धमकी देने के अतिरिक्त उनके विरुद्ध आज तक कोई कड़ा कदम उठाने का साहस ही नहीं कर पाई।

हिन्दू-मुस्लिम धार्मिक भावनाओं के प्रति भेदभावपूर्ण नीति

लगभग यही भेदभाव पूर्ण नीति यहां के दो बड़े समुदायों हिन्दू और मुसलमान की धार्मिक भावनाओं के प्रति बर्ती जाती रही है। एक ओर जबकि हिन्दू समुदाय स्वतन्त्रता के बाद से ही नहीं, उससे पहले भी यह मांग करता रहा है कि उसके विशेषतः तीन प्रमुख धार्मिक स्थान—मथुरा की श्रीकृष्ण जन्म-भूमि, अयोध्या की श्रीराम जन्मस्थली तथा काशी विश्वनाथ महादेव का मन्दिर जिन पर मुसलमानों के शासनकाल में उन्होंने अपना अधिकार जमा लिया था वापिस हिन्दुओं को दिए जाएं, परन्तु ऐसा न करके उलटा उनको मुसलमानों के ही अधिकार में बनाए रखने के लिए उन पर अभी तक पुलिस का पहरा बनाए रखा है, जबकि मुसलान समुदाय ने हाल ही में अपना जोरदार दबाव डालकर तथा चुनावों में अपना वोट कांग्रेस (इं.) के पक्ष में डालने का लोभ देकर सफदरजंग की मस्जिद जो सुदीर्घ काल से पुरातत्त्व विभाग द्वारा प्राचीन स्मारकों की सुरक्षा कानून के तहत अपने अधिकार में ले रखी थी, वापिस मुसलमानों को दे दी गई तथा उस पर उन्होंने २ मार्च शुक्रवार से सामूहिक नमाज पढ़ना भी आरम्भ कर दिया है। यह शक्ति के प्रदर्शन से ही सम्भव हुआ है।

ये और ऐसे अन्य अनेक उदाहरणों से यही निष्कर्ष निकलता है कि वर्तमान इन्दिरा कांग्रेस सरकार नम्रता से न झुक कर शक्ति प्रदर्शन से ही झुकती है।

ऐतिहासिक स्थानों के गाइडों की गप्पें

—प्रह्लादराय पचेरिया

भारत में ऐतिहासिक महत्त्व के महल और किले सैकड़ों की संख्या में हैं। उनमें से अधिकतर स्थानों पर सरकार मान्य प्रदर्शक (गाइड) हैं परन्तु वे सभी स्थान प्रदर्शक सरकार द्वारा मान्य और प्रचारित गप्पें ही हांकते हैं। दिल्ली में केन्द्र सरकार के पर्यटन विभाग की तरफ से स्थल प्रदर्शकों के प्रशिक्षण के लिये समय-समय पर कक्षायें चलाई जाती हैं। इसमें प्राय: अंग्रेजी भाषा जानने वाले डिग्रीधारी मध्यम आयु के व्यक्तियों को लिया जाता है। उद्देश्य यह होता है कि भारत के ऐतिहासिक महत्त्व के स्थान देखने के लिए जो देश-परदेश के प्रवासियों के झुंड के झुंड रेल, मोटर, जहाज और विमान से आते हैं उनके साथ एक-एक सरकार मान्य प्रदर्शक कर दिया जाये और वे प्रदर्शक उन सब प्रवासियों को प्रत्येक स्थान का इतिहास संक्षेप में समझा दें।

प्रवासियों के झुंड के साथ जानेवाले स्थल प्रदर्शकों के अतिरिक्त प्रत्येक ऐतिहासिक स्थान पर स्थायी हो जाने वाले लोगों को भी स्थल प्रदर्शक को सरकारी मान्यता प्राप्त पत्र मिला होता है। उस पर यह भी लिखा होता है कि उनकी सेवा के लिये उनको कितना धन दिया जाए। इनके अतिरिक्त स्थल प्रदर्शकों का एक तीसरा वर्ग भी होता है जिनको सरकारी मान्यता प्राप्त नहीं होती है। परन्तु मान्यता के बिना भी वे लोग स्वयं प्रेरणा से यह काम करते हैं। इनमें प्राय: पुरातत्त्व विभाग के चपरासी, चौकीदार, झाड़वाले या कब्र की देख-रेख करने वाले मुसलमान या इन लोगों के सगे सम्बन्धी या फालतू लोग भी होते हैं। मान्यतापत्र न होने के कारण इन लोगों को यह काम खुले रूप में करने की सुविधा नहीं होती। ये लोग प्राय: प्रेक्षकों को एक तरफ ले जाकर उस-उस ऐतिहासिक स्थान को दिखाने की जिम्मेदारी ले लेते हैं और सरकार मान्य दर से भी कम धन लेने के लिए तैयार हो जाते हैं। ये सभी स्थल प्रदर्शक या गाइड उस-उस ऐतिहासिक स्थान के ज्ञान के सम्बन्ध में एक ही माला के मणके या एक ही छाप के गोबर गणेश होने के कारण प्रवासी प्रेक्षकों को पूर्ण रूप से भ्रमित करते हैं। उन सबका खाका-ढांचा एक ही तरह का होता है। फिर चाहे

वह सरकार मान्य हो या न हो, उसमें कोई अन्तर नहीं होता।

भारत में मुसलमानों का राज्य व उनके पश्चात् अंग्रेजों का राज्य होने के कारण ऐतिहासिक स्थानों के सम्बन्ध में प्रेक्षकों के साथ धोखेबाजी होती रही तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। परन्तु स्वतन्त्रता के बाद नये-नये संशोधन होने के बाद भी सरकार मान्य स्थल प्रदर्शक जनता से पैसे लेकर जाने की जल्दी में रहनेवाले भोले-भाले अज्ञ प्रवासियों के साथ विधिवत् व सरकार मान्य धोखेबाजी करते रहते हैं। यह बहुत ही शोचनीय और शर्म की बात है। परिश्रम से पैदा किया हुआ धन खर्च कर, कभी कभार ही मिलनेवाली फुर्सत और प्रवास के कष्ट सहकर प्रेक्षक दिल्ली, आगरा, लखनऊ, औरंगाबाद इत्यादि स्थानों पर जाकर उस-उस स्थान के सम्बन्ध में गलत कपोल-कल्पित भ्रममूलक इतिहास सुनकर वापस लौटते हैं यह बहुत ही कष्टदायक है। पैसे खर्च करने पर भी सदा होने वाली इस धोखेबाजी के बारे में जनता को केन्द्रीय सरकार के पर्यटक और पुरातत्त्व विभाग को हजारों और लाखों की संख्या में विरोधपत्र भेजने चाहिये। भारतीय जनता से धोखाधड़ी की जाती है वह तो की ही जाती है, इसके अतिरिक्त भारत में ऐतिहासिक इमारतें हिन्दू मालिकों की होने पर भी वे इमारतें मुसलमानों ने बनवाई, उनकी शैली मुस्लिम है इत्यादि स्पष्ट रूप से गलत निष्कर्ष लोगों के दिमाग में भरे जाते हैं यह बड़ी भयानक अवस्था है।

यह धोखाधड़ी सरकारी स्तर पर चलती है इसके तीन कारण हैं। एक तो मुगलों और अंग्रेजों का उत्तराधिकार ही हम भोग रहे हैं ऐसी वर्तमान शासन की भावना होने के कारण पुरातत्त्व विभाग के अंग्रेजों के समय बने नियम, सारे ऐतिहासिक महत्त्व के भवनों के मुगलों द्वारा बनाये जाने की गप्प और शाहजहां के बन्द किये हुए ताजमहल की अनेक मंजिलों को वैसे ही गुप्त रखकर प्रेक्षकों को उनकी जानकारी न होने देने की गुलामी की प्रथा स्वतन्त्र भारत की सरकार ने वैसी की वैसी कायम रखी है।

इस धोखाधड़ी का दूसरा कारण ऐसा है कि अपना सुशिक्षित वर्ग भी जागृत नहीं है। वह उदासीन और भयभीत है। "जाने भी दो, जैसा हो रहा है होने दो। कहां विरोध पत्र भेजते फिरें? कहां सरकार से वाद-विवाद करते फिरें? ऐसा विचार करता हुआ यह शिक्षित वर्ग चुप रहता है। इस रोज-रोज की सरकारी ऐतिहासिक धोखाधड़ी के विरुद्ध जब तक सभा सम्मेलन, आंदोलन, प्रस्ताव, विरोध, जुलूस इत्यादि का आयोजन जनता द्वारा नहीं किया जाता तब तक वर्तमान परिस्थिति में सरकार कुछ भी फेरफार करने वाली नहीं है। जनता के रौद्र रूप धारण किए बिना सरकार को किसी परिवर्तन की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। आए दिन प्रत्यक्ष अनुभव होते ही रहते हैं।

तीसरा कारण यह है कि पुरातत्त्व विभाग में जो लोग उच्चाधिकारी हैं व इतिहास पढ़ाने वाले अध्यापक, प्राध्यापक, आचार्य एवं प्राचार्य इत्यादि हैं उनका स्वार्थ इस धोखाधड़ी को चालू रखने से ही अक्षुण्ण हुआ है। कारण फतेहपुर सीकरी अकबर ने नहीं बसाई या ताजमहल शाहजहां ने नहीं बनवाया, इन नए संशोधनों को यदि मान्यता प्राप्त हो गई तो अनेक विद्वानों द्वारा लिखित तत्संबंधी पुस्तकें गलत साबित होकर उनकी बिक्री बंद हो जायेगी तो उनकी हंसी होगी और आर्थिक हानि भी होगी। पुरातत्त्व विभाग ने जगह-जगह सूचना फलक लगाए हैं वे सब गलत सिद्ध होकर हंसी होगी। वैसे ही विश्वविद्यालयों में आज तक सिखाया हुआ सारा इतिहास गलत सिद्ध होने से इतिहास और पुरातत्त्व के शिक्षण में आमूलचूल परिवर्त्तन करना पड़ेगा इसका भय भी इनको सताता है। इस कारण सारे इतिहासज्ञ असत्य इतिहास को ही कसकर गले लगाकर रखते हुए नये संशोधनों की तरफ से जान-बूझकर आंखें बन्द रखने में ही अपना कल्याण मानते हैं।

इन सब बातों में ऐतिहासिक स्थल प्रदर्शक (गाइड) भी समझ-बूझकर धोखाधड़ी करते हैं। उसके कारण से सारे जगत् भर में से आनेवाले प्रवासी प्रेक्षक को अनजाने ही कैसी कैसी कैसीगलत सूचनाओं के कड़वे घूंट पीने पड़ते हैं और उसके कैसे कटु परिणाम सुशिक्षित लोगों के लेखों में दिखाई पड़ते हैं इसके कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

सन् १९७४ में मनाये गए छत्रपति शिवाजी महाराज के त्रिशत सांवत्सरिक राज्याभिषेक उत्सव के निमित्त महाराष्ट्रीय छाया चित्रकार श्री महाडिक ने शिवकालीन गढ़ के छायाचित्रों की एक प्रदर्शनी लगाई थी और एक-एक किले का छायाचित्र देकर उसके सम्बन्ध में बम्बई में सबसे अधिक बिक्री वाले मराठी दैनिक "लोकसत्ता" में एक लेखमाला भी लिखी थी। उसमें सिंहगढ़ के बारे में एक लेख था। लेख में कहा गया था कि सिंहगढ़ पर महाराज राजाराम की समाधि मुगल बादशाह शाहजहां द्वारा रूढ़ स्थापत्य शैली की है। ऐतिहासिक भवनों की स्थापत्य शैली के बारे में आजतक प्रचलित धोखेबाजी के कारण छाया चित्रकार महाडिक, लोकसत्ता के संपादक और लोकसत्ता के सारे देश में फैले मराठी पाठक, इन सबको कितना मतिभ्रम हुआ है—कितना धोखा हुआ है। जिन मुगलों को परास्त कर स्वराज्य की स्थापना करने में मराठों ने अपनी सारी आयु खर्च की उन शिव भक्त मराठों ने छत्रपति राजाराम की समाधि मुगल पद्धति से बनाई ऐसा कहना कहां तक न्यायसंगत है? क्या शाहजहां स्थापत्य विद्या का कोई ऐसा कलाकार था कि उसके द्वारा प्रचलित श्मशानी स्थापत्य कला हां-हां करते २०-४० वर्ष में ही इतनी लोकप्रिय हो गई कि मुगलों के शत्रु मराठे भी

उसको पसन्द करने लगे ? शाहजहां द्वारा निर्मित कही जाने वाली ताजमहल आदि इमारतें ही हिन्दू घाट (शैली) की हैं ऐसा कहने वाले E. B. Hovell आदि आंग्ल स्थापत्यकार कहां और मराठा छत्रपति की समाधि ही इस्लामी पद्धति से बांधी गई हैं ऐसा कहने वाले महाडिक आदि लोग कहां ?

ताजमहल, दिल्ली का लाल किला आदि कोई भी इमारत शाहजहां द्वारा निर्मित न होकर वे सब इमारतें इस्लाम के पहले के हिन्दू सम्राटों द्वारा बनी होने के कारण वे सभी हिंदू पद्धति और हिन्दू शैली की हैं यह श्री ओक ने ऐतिहासिक कागज-पत्रों के आधार पर अपनी विविध पुस्तकों के माध्यम से सिद्ध किया है तो उसी शैली की छत्रपति राजाराम महाराज की समाधि भी असल हिंदू रीति-रिवाज के अनुसार जैसी होनी चाहिए बिल्कुल वैसी ही हिंदू शैली की है। इस पर ध्यान देना चाहिए था। पर नया संशोधन पढ़ता कौन है ? कौन पढ़ने का परिश्रम करे ?

इतिहासकार बाबा साहेब पुरंदरे ने भी अपनी पुस्तक शिवचरित्र (मराठी) में वैसी ही भूल की है। काशी के गागाभट्ट के समान मुगली सम्पर्क से कोसों दूर संस्कृत परम्परा में आकंठ निमग्न दशग्रंथी विद्वान् ने जिसे संस्कृत ग्रन्थों के आधार पर सम्पन्न किया था उस हिंदू पदपादशाही के संस्थापक महाराज छत्रपति शिवाजी के राज्याभिषेक समारम्भ के समय भारतीय संस्कृति के साथ मुगल संस्कृति के नमूने भी वहां चमक रहे थे। भालों की नोक पर लगे सब चिह्न मुगली थे। सिंहासन के ऊपर आठ स्तम्भों के स्वर्ण मंडप का दिखावा पूर्ण रूप से इस्लामी था। सब तरह से राज्य सभा के साथ सिंहासन का ठाठ भी अप्रतिम था (शिवचरित्र पृष्ट ७११) ऐसा लिखकर भी भयंकर भूल की है।

अब सोचने की बात है कि यदि हिंदूपद पादशाही के छत्रपति के राज्यारोहण का ठाठ मुगल रीति का था तो वहां गढ़ पर जमा हिंदुओं को अप्रतिम लगा होगा क्या ? यदि राज्यारोहण का ठाठ मुगली था तो वैदिक रीति से यज्ञोपवीत और रानी से विवाह होने के बदले शिवाजी महाराज की सुन्नत और निकाह हुआ होता। इस पर हमारे विद्वान् लोगों की इतिहास के सम्बन्ध में कितनी दिशा भूल हो रही है यह प्रत्यक्ष है।

लखनऊ के तथाकथित इमामबाड़े में लगे भालों पर मछली का चिह्न है कदाचित् इसलिए ही पुरंदरे को ऐसा विचार आया होगा कि यह मुगली रीति है तो यह स्थल प्रदर्शकों (गाइडों) की धोखेबाजी के कारण ही। लखनऊ का इमामबाड़ा मुस्लिम अधिकार के पूर्व का मत्स्य भवन नाम का हिंदू राजमहल था यह श्री पी० एन० ओक ने तत्सम्बन्धी एक स्वतंत्र पुस्तक में सिद्ध किया है। वैसे

ही सिंहासन के ऊपर आठ स्तम्भ वाले मंडप का ठाठ पूर्णत: इस्लामी है यह कहना भी गलत है। कारण आठ दिशाओं के आठ नाम केवल हिंदुओं के हैं। मुसलमानों को आठ दिशाओं का ज्ञान ही नहीं। उन आठ दिशाओं के आठ ही लोकपाल हिंदुओं की आठ दिशाओं का निर्देशक अष्ठ प्रधान मंडल है, हिंदू ऐसा होते हुए भी अष्ट-स्तम्भी मंडल मुसलमानी कैसे ? जिन शिवाजी महाराज ने अरबी-फारसी शब्दों का भी उच्चाटन करने के लिए राज्य व्यवहार शब्द कोष खास तैयार करवाया था, (पुरंदरे चरित्र पृष्ठ ७१६) उनके राज्यारोहण की पवित्र विधि इस्लामी रीति से कैसे हुई ?

सदियों से इस्लामी, अंग्रेजी और अंधानुयायी हिंदुओं के प्रचार के कारण महाडिक, पुरंदरे और लोकसत्ता के सम्पादक आदि प्रबुद्ध लेखकों को भी कितना और कैसा भ्रम हुआ है इसके कुछ उदाहरण ऊपर दिए गए हैं। इसमें भ्रम उत्पन्न करने में इन स्थल प्रदर्शकों की धोखेबाजी एक बहुत बड़े अंश में उत्तरदायी है। इस सम्बन्ध में श्री ओक को इन स्थल प्रदर्शकों का जो अनुभव प्राप्त हुआ वह उन्हीं के शब्दों में प्रस्तुत है—

आगरा का ताजमहल शाहजहां द्वारा बनायी मुस्लिम कब्र न होकर एक राजमहल राजमंदिर है—मेरा यह सिद्धांत प्रकाशित होने पर कुछ वर्षों के बाद आगरा के उपाध्याय नाम के स्थान प्रदर्शक मुझसे मिलने दिल्ली आए। वे बोले—ओक साहब ! आपने ताजमहल के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है वह बिलकुल सच है। हम गाइड लोग शुद्ध गप्प मारते हैं। हममें से किसी को भी इतिहास का कोई ज्ञान नहीं है व परम्परागत तोतारटंत करते हुए किसी तरह प्रेक्षकों से पैसा ऐंठकर हम अपनी जेब भरते हैं। कुछ स्थान प्रदर्शक मुसलमान एकाध किसी कागज के टुकड़े पर अरबी-फारसी भाषा में कुछ अंटसंट बात या खबर लिखकर उस कागज को घड़े में डालकर जमीन में दबा देते हैं। कुछ महीनों में वह कागज पीला पड़ जाता है तो वह कागज पुराना ऐतिहासिक दस्तावेज है ऐसा प्रेक्षकों के सामने दिखावा करते हैं और प्रेक्षकों को सुनाकर उनकी जेब का बोझ हलका करते हैं।

इन स्थान प्रदर्शकों की पैसा निकलवाने की एक और तरकीब उपाध्याय ने बतायी। स्थान प्रदर्शक बड़ी धूर्तता से बाहर खड़ा रहकर आने वाले प्रेक्षकों की मोटरगाड़ी, कपड़े इत्यादि पर निगाह रखता है और कोई एकाध श्रीमंत समृद्ध कुटुंब जो ताजमहल को धीरज से, आराम से देखने की इच्छा वाला दिखाई पड़ा तो तुरन्त उसके पास जाकर—"खास गुप्त ऐतिहासिक बात बताऊंगा" कहकर गले पड़ता है और प्रेक्षक के स्वीकार कर लेने पर उसे दूसरे प्रेक्षकों से दूर किसी कोने में ले जाता है और फिर छिपी नजरों से इधर-उधर देखकर—आस-

पास कोई नहीं है इसका विश्वास कर—फिर बड़ी गम्भीरता का दिखावा कर कहता है—बादशाह इस कोने में खांसता था और बेगम उस कोने में छींकती थी। ऐसा जो कुछ मन में आता है व्यर्थ की बकवास कर समय निकालता है। प्रेक्षक भी हमें दूसरों से अधिक जानकारी प्राप्त हुई ऐसा मानकर सन्तुष्ट होकर घर चला जाता है।

एक स्थान प्रदर्शक ताजमहल सम्बन्धी मेरी पुस्तक पढ़कर मन में पश्चात्ताप कर अपने धंधे की धोखा-धड़ी और फरेबबाजी मेरे घर आकर मुझे कहे इसका मुझे बड़ा ही आश्चर्य हुआ।

इसके बाद उस उपाध्याय ने ताजमहल सम्बन्धी मेरे सिद्धांतों के समर्थन में अपने आप ही एक प्रमाण दिया। वे बोले—ओक साहब! ताजमहल यह हिंदू राजमहल-राजमन्दिर है इसका मुझे पूर्ण विश्वास हो गया है। ताजमहल के प्रांगण में एक प्राचीन गोशाला है और वह अब भी गोशाला या गोठा के रूप उपयोग में ली जाती है।

इतना सुनने के बाद जब अगली बार मैं आगरा गया तो उस गोशाला को खास देखा। संगमरमर के ताजमहल के सामने जो बाग है उसकी अग्नि दिशा में यह गोशाला स्थित है। ढोर बाग को उजाड़ें नहीं इस दूरदर्शिता से गोशाला का प्रवेश द्वार बाग की तरफ न रख कर बाहर की तरफ रखा गया है। ताजमहल हिंदू राजमहल-राजमन्दिर होने का प्रमाण एक स्थल-प्रदर्शक ही खुले दिल से दे रहा है। यह देख कर मैंने उससे पूछा—क्यों उपाध्याय जी! ताजमहल हिंदू राजमहल-राजमन्दिर है—मुस्लिम कब्र नहीं है इसका आपको अब पूर्ण विश्वास हो गया है इसलिए अब तो आप प्रेक्षकों को स्वतन्त्र रूप से खुले रूप में ताजमहल हिंदू राजभवन है—ऐसा कहेंगे न? उन्होंने उत्तर दिया—"नहीं कहूंगा।" मुझे आश्चर्य हुआ। पूछा—क्यों नहीं कहेंगे? इस पर जो उत्तर उन्होंने दिया वह बहुत ही सूचक है। इस से यह समझ में आता है कि जिस सत्य के प्रकाश में आने पर अनेकों के हित-सम्बन्ध में बाधा आती हो उस सत्य को दबा कर रखने का बहुजन समाज का प्रयत्न रहता है। उपाध्याय ने कहा—ताजमहल देखने के लिए आने वाले सभी व्यक्ति सत्य जानने के उत्सुक नहीं होते।

प्रत्येक व्यक्ति की जाति, धर्म, देश, शिक्षा और राजनैतिक मत के अनुरूप ही उसके मन की भावना होती है एवं उसी के अनुसार उसका इतिहास देखने का दृष्टिकोण बना होता है ऐसी परिस्थिति में तांगे या मोटर से उतरने वाला व्यक्ति हिंदू है या मुसलमान, कांग्रेसी है या समाजवादी, साम्यवादी है यह जानने का कोई साधन नहीं होता। इस कारण यदि हम उसको यह बताने लगें कि ताजमहल यह राजमहल या राजमन्दिर है तो शायद वह कर्णकटु सत्य सुनकर

आने वाला अप्रसन्न होकर सरकार में शिकायत भी करदे कि यह सरकार मान्य गाइड सरकार प्रणीत सूचना न देकर कुछ दूसरी नई कथा कहता है, और ऐसा हुआ तो शायद सरकार हमारा परवाना ही छीन ले, हमें कई तरह से परेशान भी करे और हमारे पेट पर लात भी मार दे।

उदाहरण के लिए श्रीमंत विदेशी प्रवासी के साथ में कौन-सा प्रदर्शक दिया जाये यह सरकार के हाथ में होने के कारण हम ऐसे भरपूर पैसा कमाने के अवसरों से वंचित हो जायें।

उपाध्याय जी का कहना बिल्कुल ठीक था। इस से पता चलता है कि अपने देश में मत स्वातन्त्र्य, भाषण स्वातन्त्र्य, वाणी स्वातन्त्र्य, संशोधन और लोकशाही होने की बात कोरी गप्प है और इनके होने की डींग किसी को नहीं हांकनी चाहिये। कारण क्या ? कारण: ताजमहल मुसलमानों का बनाया हुआ नहीं है यह सत्य वर्तमान सत्तारूढ़ दल को या किसी भी विपक्षी दल को मुसलमानी प्रेम के कारण न पचने वाला, न रुचने वाला और न सहन होने वाला होने के कारण इस सत्य का विश्वविद्यालयों, स्थान प्रदर्शकों और पर्यटन विभाग द्वारा कितनी पद्धतिपूर्वक कितनी निर्ममतापूर्वक गला घोंटा जाता है यह ऊपर की हकीकत से प्रत्यक्ष दिखाई देता है। मुसलमानों के सम्बन्ध में कोई भी सच्ची बात कहने में लोग घबराते हैं—फिर कहने वाले चाहे कितने ही ऊंचे अधिकार सम्पन्न व्यक्ति क्यों न हों—इतनी मुगलशाही की धाक अभी तक भारत में मौजूद है। इतनी मुस्लिम गुलामी हमारे रोम-रोम में जमकर बैठ गई है कि हमारे विद्वान् लेखकों को भी शिवाजी महाराज के राज्याभिषेक और छत्रपति राजाराम महाराज की समाधि में सब जगह मुगली भूत ही दिखाई देता है। दासता की इतनी-इतनी तहें हमारी बुद्धि पर, गुलामी की इतनी धुंध हमारी आंखों पर चढ़ी हुई है।

धर्म (मत) के अनुसार ऐतिहासिक दृष्टिकोण भी बहुत कुछ बदलता है। उदाहरण के लिए ताजमहल शाहजहां का बनाया हुआ नहीं है यह सुनने के लिए भी मुसलमान तैयार नहीं होता। प्रत्यक्ष बादशाहनामा में वैसा कबूल किया हुआ फ़ारसी भाषा की उतारी हुई नकल दिखाने पर भी भारतीय मुसलमान उस फारसी मजमून का उल्टा-सीधा यद्वा-तद्वा अर्थ करने लगता है ऐसा मेरा प्रत्यक्ष अनुभव है। इसलिए मुसलमानों से संघर्ष का जहां सम्बन्ध न हो वहां तक ही इतिहास निष्पक्ष रूप से परिशीलन करने की अपेक्षा मुसलमानों से की जा सकती है। कम्युनिस्ट मत के व्यक्ति भी निष्पक्ष रूप से इतिहास का अध्ययन करने में मुसलमानों की तरह ही अक्षम होते हैं। कारण ? उसके लिए शिवाजी क्या और शाहजहां और औरंगजेब क्या ? उन्हें दोनों ही पूंजीपति और मजदूरों के शत्रु

दिखाई देते हैं। कम्युनिस्ट व्यक्ति को राष्ट्रभक्ति और देशभक्ति का अर्थ ही नहीं समझ में आता। समाजवादी लोगों को मुसलमानों को बुरा लगे ऐसा ऐतिहासिक सत्य प्रकाशित करना अच्छा नहीं लगता। वैसे ही ताजमहल किसी ने भी क्यों न बांधा हो इससे हमें क्या ? ऐसी उनकी उदासीन भूमिका होती है। इस पर ऐतिहासिक सत्य संशोधन और आकलन करने के लिए जातीय, पक्षीय भेदभाव, उकताहट, आनाकानी, अरुचि इत्यादि से मन अलिप्त व शुद्ध रखना कितना आवश्यक है—समझ में आ सकता है।

भारत में कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक जितने भी ऐतिहासिक स्थान, भवन, महल, किले और पुल इत्यादि हैं उनको यद्यपि आजकल अमुक की दरगाह, कब्र, मस्जिद और तमुक ने बनाई इत्यादि भले ही कहा जाता हो तो भी वास्तव में वे सब हिन्दुओं द्वारा बनाये गए हैं मेरा यह सिद्धान्त हिंदुओं को भी पचाना कठिन मालूम होता है। मुसलमान उसका जोरदार विरोध करें तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। इसलिए सारे भारत में जहां-जहां मुसलमान स्थान-प्रदर्शक हैं वहां-वहां वे लोग मेरे इस नवीन सिद्धांत को प्रेक्षकों को अच्छी तरह समझायेंगे इसका तो विश्वास ही नहीं किया जा सकता। अब रह गये हिंदू। उनमें भी जितने मुस्लिमपरस्त होंगे या कम्युनिस्ट, सोशलिस्ट या कांग्रेसी होंगे वे भी ऐतिहासिक भारतीय भवनों के निर्माण विषयक नया सत्य प्रेक्षकों को शुद्ध, सरल या खुले दिल से समझायेंगे इसकी संभावना कम ही है। बाकी रहे थोड़े-से स्वतंत्र विचार के उपाध्याय जैसे स्थान-प्रदर्शक। उनके सामने सरकारी अप्रसन्नता और आर्थिक हानि का भय मुंह बाये खड़ा है।

ऐसी परिस्थिति में कोई रास्ता सत्य प्रकाश करने के लिए कैसे खोजा जाए इसकी चर्चा मैंने उपाध्याय से की तो वे बोले कि प्रेक्षकों से बातचीत करते हुए यदि हमें ऐसा समझ में आया कि प्रेक्षक ताजमहल इत्यादि सब प्राचीन अपहरण की हुई इमारतों के हिंदू होने का प्रमाण जानने की इच्छा करता है तो हम उसको आपका उतना सिद्धांत समझा कर कहते हैं। ऐसा प्रेक्षक नया सत्य जानकर प्रवास सफल हो गया इस खुशी में उपाध्याय के समान स्थान-दर्शकों को निश्चित दर से अधिक द्रव्य इनाम कह कर अपने आप दे देते हैं यह अपना अनुभव उपाध्याय ने हमें स्वतः बताया था। इसलिए सत्य को प्रकट करने से ही प्राप्ति अधिक हो सकती है यह सब स्थान प्रदर्शकों को ध्यान में रख कर संशोधन से सिद्ध नये सत्य का प्रचार और प्रसार ही करना उचित है। परम्परागत असत्य का ही पृष्ठ-पोषण करना अनुचित है।

इस्लामी हुकूमत में ऊपर से लादी गई भ्रामक कल्पनाओं से सारे संसार के लोग सकते में आ गये हैं और जीवन का प्रत्येक क्षेत्र कितना दूषित हो गया है।

यह बम्बई में कुछ वर्षों पहले हुए एक समारोह से विशेष रूप से ध्यान में आ जायेगा। सुरसिंगार संसद् नाम की संस्था ने सिने-गायिका लता मंगेशकर का सत्कार कर उसे 'मियां तानसेन' नामक पारितोषिक दिया। तानसेन के साथ 'मियां' यह मुहम्मदी उपनाम लगाना बिल्कुल गलत है। तानसेन अपने अन्तिम श्वास तक हिंदू था। राजदरबार में उसके गायन पर झूमते इस्लामी दरबारी इस्लामी ढंग से "वाह, मियां वाह" ऐसे कहा करते थे। इस्लामी भाषा में 'मियां' शब्द महाशय अथवा साहब का पर्यायवाची है। परन्तु वर्तमान काल में भी तानसेन के नाम के साथ उसे लगाना तानसेन का इस्लामीकरण करना है। मतलब यह कि किसी को क्या उपनाम दिया जाता है इससे उस व्यक्ति का इतिहास बनता है। गलत उपनाम लगाने से गलत इतिहास बनता है इसलिए सुरसिंगार संसद् जैसी संस्था को योग्य है कि तानसेन के नाम के पीछे लगा यह मियां उपनाम निकाल दे।

दिल्ली के लाल किले में भी कितने ही स्थान प्रदर्शकों से मेरा (श्री ओक का) सम्पर्क हुआ। मैं कितनी ही बार किले के प्रवेश द्वार पर खड़ा रहता हूं अंदर भी चक्कर लगा आता हूं, सैंकड़ों ही प्रेक्षकों को आते-जाते देखता हूं। विविध प्रकार के स्थान प्रदर्शक उनको भ्रमित करते रहते हैं और सत्य का इस तरह खून होता देखकर मुझे बिच्छू काटने जैसी वेदना होती है। अपने चारों ओर कभी-कभी विशिष्ट भारतीय जन या परदेशी प्रवासी को इकट्ठा कर किसी इतिहासकार का-सा दिखावा कर ये स्थान प्रदर्शक ऐसा कहते रहते हैं कि यह किला शाहजहां ने बनवाया और उसमें की मोती मस्जिद औरंगजेब ने बनवाई इत्यादि-इत्यादि।

उन स्थान प्रदर्शकों का आवेश और उनकी उन रटी-रटाई असत्य बातों को सुन कर हंसें या रोयें यह मेरी समझ में नहीं आता। पर बेचारे ये स्थल प्रदर्शक भी क्या करें? जहां अपनी सरकार यह कहती है कि शाहजहां ने लाल किला बनाया वहां ये बेचारे पेटार्थी स्थान प्रदर्शक और क्या कहेंगे? कारण किले के भीतर ही भारत सरकार के पुरातत्त्व विभाग ने अंग्रेजी में ऐसी सूचना लिखवा रखी है "ईसवी सन् १६२८ से १६५८ तक राज्यकर्ता शाहजहां ने यह किला ईसवी सन् १६३९ से १६४८ में बनवाया।"

इस सरकारी वचन और आज तक के सब इतिहासकारों की ऐसी मान्यता और समझ एकदम गलत होने के कुछ ठोस प्रमाण मेरे पास हैं। उनमें से एक प्रमाण यह है कि शाहजहां जिस वर्ष (१६२८) में दिल्ली की गद्दी पर बैठा उसी वर्ष वह फारस के राजदूत से दिल्ली के लाल किले में भेंट करता है ऐसा तत्कालीन एक दरबारी का बनाया हुआ एक रंगीन चित्र उपलब्ध है। यह चित्र बॉडलियन लाइब्रेरी ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी, लंदन में लगा हुआ है। उसका फोटो मेरे पास है। फोटो के नीचे दिए गए विवरण में ईसवी सन् १६२८ में दिल्ली के

लाल किले में ही यह भेंट हुई थी ऐसी साक्षी है। शाहजहां के गद्दी पर बैठते ही फारस के राजदूत का उसको भेंट देना राजकीय परम्परा के अनुकूल और उचित ही था।

मैं लाल किले में जब-जब भी जाता हूं तब-तब यह फोटो प्रायः मेरे पास रहता है। ई.स. १६४८ में लाल किला बना था। पुरातत्त्व खाते के इस शिलालेख को पढ़ते हुए वहां खड़े प्रेक्षकों को मेरे पास का वह फोटो दिखाकर यह सिद्ध करता हूं कि शाहजहां जिस वर्ष (१६२८) में गद्दी पर बैठा उसी वर्ष उसने दिल्ली के लाल किले में दरबार भरकर फारस के राजदूत से भेंट ली। उस फोटो को देखकर प्रेक्षक चकित हो जाते हैं। उन्हें अपनी आंखों पर विश्वास नहीं होता। बड़ी-बड़ी पदवियां धारण करने वाले बड़े-बड़े अधिकारी और ऊंचे-ऊंचे वेतन लेने वाले इतिहासज्ञ और पुरातत्त्व वेत्ताओं का इतिहास का ज्ञान कद्दू जितना है इसका प्रत्यक्ष प्रमाण देखकर आश्चर्य से प्रेक्षकों का मुंह खुला का खुला रह जाता है। तो भी आगे उसका कोई प्रचार नहीं करता। प्रत्येक गुट या दल ने हो-हल्ला करने का कार्यक्रम यदि चालू किया तो भारत सरकार और पुरातत्त्व विभाग की इस धोखेबाजी का शीघ्र ही अन्त किया जा सकता है। परन्तु कोई भी वैसा कुछ करता नहीं है। सभी सिर नीचा कर चुपचाप चले जाते हैं। पुरातत्त्व खाते द्वारा लगाए हुए शिलालेख की पोल जनता के सामने खोलने के लिए लाल किले के द्वार पर बारी-बारी से खड़े रहकर सन् १६२८ के शाहजहां के दरबार का चित्र जनता को दिखाने की जिम्मेदारी किसी गुट या दल को अपने सिर पर लेनी चाहिए। जब-जब मैं किले में जाता हूं, दो-चार लोगों को यह चित्र दिखाता हूं तो भी प्रातःकाल से सायंकाल तक किला देखने आने वालों का वह जन समुद्र और उस जन समुद्र को मेरे समान एकाध व्यक्ति का किसी दिन एक-दो व्यक्ति को अपना सिद्धांत समझाने का प्रयत्न—टिटहरी का अपनी नन्हीं चोंच से समुद्र का पानी उलीचने के प्रयत्न के समान है। तो भी भले ही एक-दो व्यक्तियों का ही क्यों न हो मैंने सत्य कहने का जो थोड़ा-सा भी प्रयत्न किया है वह ईश्वर के दरबार में मेरे खाते में जमा किया जाएगा ऐसे दुःखी मन को समझाते हुए मैं वापस लौट आता हूं।

एक बार मैं इसी तरह लाल किले के प्रवेश द्वार के पास अपनी कुढ़न और घुटन के साथ खड़ा था तो एक ढलती उम्र के स्थल प्रदर्शक ने मेरे पास आकर पूछा—"साहब, मैं आपको किला दिखाऊं क्या?" मैंने भी अनजान बनते हुए कहा कि हां भाई, किला देखना तो है पर सच्ची बात कौन बतायेगा, इसी विचार से मन में घुटन अनुभव करता हुआ यहां खड़ा हुआ हूं। इस पर स्थल प्रदर्शक मन में प्रसन्न होता हुआ दूसरे स्थल प्रदर्शकों की तरह बोला—साहब! आप बिल्कुल

चिता न करें। आपको पूर्ण रूप से सन्तोष होने तक आदि से अन्त तक पूरी बात बताऊंगा। कुछ भी बाकी नहीं रखूंगा। और यह देखिये! यह रहा मेरा सरकारी परवाना। पूरा किला आप को अच्छी तरह से दिखाने के लिए आप मुझे अढ़ाई रुपये देना। ऐसा कहकर उसने अपना परवाना और बिल्ला मुझे दिखाया। उसके परवाने और बिल्ले से मुझे कुछ भी लेना-देना नहीं था, तो भी उसके बिल्ले और परवाने की व्यर्थता मुझे उस व्यक्ति के समक्ष सिद्ध करनी थी इसलिए उसका बिल्ला और परवाना देखकर मुझ पर उसका बड़ा प्रभाव पड़ा है ऐसा मैंने दर्शाया।

फल बेचने वाला जिस तरह अपने फलों के उत्तम, मधुर और स्वादिष्ट होने की बड़ाई करता है उस तरह की बड़ाई ये स्थल प्रदर्शक भी करते हैं और अन्त में जैसे फल खट्टे और बेस्वाद निकलते हैं वैसे ही स्थल प्रदर्शकों द्वारा कहा गया इतिहास भी मूल रूप में एकदम गलत ही होता है इसका प्रत्यक्ष प्रमाण उन स्थल प्रदर्शकों में से कम से कम एक को तो दिखाऊं, ऐसा विचार कर उस स्थल प्रदर्शक को मैंने साथ में ले लिया।

किले में प्रवेश करने के साथ ही उसकी निश्चित, निराधार, रटी हुई और एक दम झूठी चर्पट मंजरी शुरू हो गई। नये दर्शक की तरह उसका कथन मैं चुपचाप सुनता चला आ रहा था। एकाएक स्थान को देखते हुए-हम खास महल में आये। वहां एक संगमरमर की जाली के ऊपर के भाग में एक अच्छा खासा बड़ा ६ × ३ फुट लम्बाई-चौड़ाई का एक राजचिह्न लगा हुआ है। उस खास महल में आते ही उस राज चिह्न की ओर संकेत करते हुए सहज ही मैंने उससे पूछा कि यह क्या है? वह बोला – यह ना? यह तो इस्लामी चन्द्रकोर और उस पर यह तराजू मुगलों के निष्पक्ष न्याय का प्रतीक इत्यादि इत्यादि।

इतना सुनते ही मैंने अपने अनजानपने का ढोंग छोड़कर उसको वहीं पर अच्छा-सा पाठ पढ़ाने का निश्चय कर उससे कहा—"देख। तुझे जो कुछ इस राजचिह्न के बारे में कहना था वह कहना पूरा हो गया क्या? या अभी और कुछ कहना बाकी है?

वह बोला—हां, पूरा हो गया। इस पर मैंने कहा—अब मुझे इस राजचिह्न के बारे में क्या लगता है, कहूं? तो वह ना क्यूं कहने लगा। बोला—कहो ना आप को जो कुछ कहना हो।

तब मैंने उस राजचिह्न को अंगुली से दिखाते हुए कहा। "देख, तू जिसको इस्लामी चांद कहता है उसको जरा बारीकी से देख। मूठ से मूठ लगाकर रखी ये दो तलवारें हैं या नहीं? बोल!" उसने अच्छी तरह ध्यान से उस राजचिह्न को देखा और आज तक के अपने अज्ञान पर उसे आश्चर्य हुआ। हां! ये तो सच-

मुच तलवार हैं उसने स्वीकार किया। उसके बाद तलवार की मूठ पर स्थापित किया हुआ कलश, उस पर बनाई हुई कमल की कली और उसमें से निकला तराज़ू का बीच का दंड, फूलों की दो डालियां (टोकरियां) हों ऐसे तराज़ू के दो पलड़े, आसपास बनाये गये सूर्यवंशी क्षत्रियों के छोटे-छोटे सूर्य, तलवार की नोक के पास दिखाये गये शंख और ऊपर की कमान में बिठाया बड़ा मध्याह्न का सूर्य और उसकी दोनों दिशाओं में ॐ के अक्षर इत्यादि इत्यादि जैसे-जैसे मैं बारीकी से कहने लगा वैसे-वैसे सुनते हुए वह लज्जा से पानी-पानी हो गया। पत्थर की मूर्ति की तरह जमीन में गड़ जैसा गया। अनजान में उसके हाथ सरकारी बिल्ले पर चले गये और बिल्ला निकाल कर उसने झट से अपनी जेब में डाल लिया। सरकार मान्य स्थल प्रदर्शक का बिल्ला जिसे वह आज तक अभिमानपूर्वक अपने शरीर पर सजा कर फिरता था उस पर ही अब उसे लज्जा लगने लगी थी। उसने मेरे सामने हाथ जोड़ दिये और बोला—"साहब! गत २२ वर्षों से मैं यहां स्थल प्रदर्शक का काम कर रहा हूं परन्तु आपसे इन कुछ मिनटों में जो कुछ सीखा है उसका मुझे मेरी सारी आयु में कभी ध्यान नहीं आया था। तत्पश्चात् मैंने दिल्ली का लाल किला शाहजहां के भी ६०० वर्ष पहले राजा अनंगपाल ने बनवाया था इसे ठोस प्रमाण देकर बताया—यह भी कि तलवार और तराज़ू भी उसके राजचिह्न थे। उस स्थल प्रदर्शक ने अपने को धन्य अनुभव किया। किला आधा ही देखा गया था तो भी मैंने उसे अढ़ाई रुपये देने चाहे परन्तु उसने सिर नीचा कर रुपये लेना अस्वीकार कर दिया।

इतना सब हो चुकने पर मैंने उससे पूछा—क्यों भाई! अब से तो तू सारे प्रेक्षकों को यह कहेगा ना कि यह किला शाहजहां के ६०० वर्ष पहले से अस्तित्व में हैं। इसलिए किला शाहजहां ने बनाया था यह कहना भयंकर भूल है।

इस पर उसने कहा—अवज्ञा की क्षमा करें। परन्तु सत्य की दृढ़ प्रतीति हो जाने पर भी मुझे प्रेक्षकों को धोखा देकर, भ्रम में ही रख कर अपना व्यापार चालू रखना होगा। मेरी प्रश्नपूर्ण मुद्रा देख कर उसने अपनी अड़चन इस तरह बताई कि "मैं तो अकेला हूं। मेरे सिवा यहां और भी ३०-४० प्रदर्शक होंगे। उनमें भी जो मुसलमान होंगे वे तो यह कहना बन्द नहीं करेंगे कि शाहजहां ने किला बनवाया था। दूसरे जो लोग मुसलमान नहीं हैं उनमें भी जिनको ताजमहल या लाल किले के सम्बन्ध में आपके सिद्धान्त का कुछ अस्पष्ट या धुंधला-सा भी ज्ञान है, वे भी सारे प्रमाण जानने के लिए सब एक समय एक साथ यहां एकत्र होते ही नहीं, दिन भर प्रेक्षकों के झुंडों के साथ किले के विविध भागों में उन्हें झांसा देते हुए पैसे बटोर कर अपना पेट भरते रहते हैं। आपके सिद्धांत के जाने बिना भी उनको कोई अड़चन नहीं होती, कोई आर्थिक हानि नहीं होती। उल्टे

आपका सिद्धान्त सुन और जानकर उनमें आपस में मतभेद भी हो सकता है तो बिना कारण कौन सिरदर्द मोल लेना चाहेगा। आप का सिद्धान्त सुनने या आपकी ताजमहल या लाल किले के सम्बन्ध में पुस्तक पढ़ने के लिये उनके पास समय ही कहां है ? उस पुस्तक के लिये पैसा भी कौन खर्च करेगा और कौन समय बर्बाद करेगा ? इसलिये हम सभी स्थल प्रदर्शक निर्लज्जतापूर्वक शाहजहां ही इस किले और ताजमहल का निर्माता है ऐसा हठपूर्वक कहते रहते हैं, क्योंकि एक सरकार मान्य झूठ भी एक व्यक्ति के संशोधित सत्य की अपेक्षा कहने में सरल और सुविधाजनक होता है।

एक दूसरे प्रसंग में जब मैं लाल किले में गया हुआ था तब एक अंग्रेजी जानने वाले स्थल प्रदर्शक विदेशियों के एक झुंड को साथ लिये जो रटी-रटाई कहानी कह रहा था उसे सुनने के लिये मैं उसके पीछे हो लिय । वह जगह-जगह बीच में ठहर-ठहर कर प्रेक्षकों को शाहजहां और मुगल साम्राज्य के संबंध में सरकार मान्य वही पुरानी कथा कह रहा था। उस दिन या तो वह अधिक थक गया था या उसकी नित्यप्रति की आदत रही होगी; खास महल में आते ही उसने सब प्रेक्षकों को सम्बोधित कर कहा कि मैंने आप सब लोगों को इस किले और मुगलों के सम्बन्ध में आवश्यक जानकारी दे दी है। अब आप लोग अपनी-अपनी रुचि के अनुसार इस महल का बचा हुआ भाग घूम-फिर कर देखकर यहां आ जाओ, मैं यहीं पर खड़ा हूं।

उसकी सूचना के अनुसार प्रवासी प्रेक्षकों के इधर-उधर चले जाने पर मैंने उससे पूछा कि क्यों भाई, तुम्हारा क्या नाम है ? नाम पूछने से सामने वाला व्यक्ति हिन्दू है या मुसलमान इस बात का पता चल जाता है। उसने कहा— प्रेमनारायण। तो मैंने उससे कहा कि जो कुछ तुमने कहा वह सब मैंने सुना। परन्तु मेरे मत के अनुसार यह ठीक नहीं है। यह किला शाहजहां के ६०० वर्ष पहले भी अस्तित्व में था और मुसलमानी आक्रमण के पश्चात् इस किले की शोभा और वैभव बढ़ाना तो दूर की बात है इसमें के बहुत-से भवन धीरे-धीरे टूट कर नष्ट हो गये।

यह सुनकर उसने पूछा—आपका परिचय ? मैंने कहा पुरुषोत्तम नागेश ओक। उसने तुरन्त हाथ जोड़कर कहा— अरे वाह ! दुर्लभ लाभ हुआ। मैंने आपका नाम सुना है। ताजमहल के सम्बन्ध में आपकी पुस्तक भी पढ़ी है। फिर मैंने उससे पूछा—तुम इन सब प्रवासियों को पुरानी और असत्य बात न कहकर सच्ची बात क्यों नहीं कहते ?

उसने कहा—साहब ! इसमें भारी अड़चन है। इन विदेशी प्रवासियों के पास भारत सरकार द्वारा पुस्तकें व पर्यटन विभाग द्वारा प्रकाशित सूचना पत्रक होते

हैं। उनमें यह किला शाहजहां ने बनवाया, ताजहमल भी शाहजहां ने बनवाया—ऐसी झूठी-झूठी बातें लिखी होती हैं। येप्र वासी पुस्तक और सूचना पत्रकों को हाथ में खुला रखकर और उसमें लिखित विविध विवरणों पर अंगुली रखकर पूछते हैं कि यह कहां है ? वह कहां है ? हम भी जल्दी में उनको चुपचाप वे स्थान और वस्तुएं दिखाते रहते है। झूठ होते हुए भी वह कहने में सुविधाजनक, सरल और बिना किसी झंझट का मार्ग है। कारण कि यदि मैं उनको आपका सिद्धांत बताने लगूं तो बिना कारण वितंडावाद खड़ा होगा। वे सैकड़ों प्रश्न पूछेंगे कि यह तुम किस आधार पर कहते हो ? इसका क्या प्रमाण है ? इस सिद्धांत का प्रवर्तक कौन हैं ? और यदि यह सिद्धांत सत्य है तो सरकारी पुस्तकों और सूचना पत्रकों में उसका उल्लेख क्यों नहीं किया गया इत्यादि इत्यादि। और इस तरह का विवाद उत्पन्न हो गया तो एक प्रवासी समूह को दिन भर में एक या दो स्थान ही दिखाये जा सकते हैं। इससे मेरी आय भी कम हो जाएगी। इसके अतिरिक्त कुछ प्रवासी सरकार से पूछ भी सकते हैं कि सरकारी पुस्तकों और स्थल प्रदर्शकों के विवरण में विरोध या असंगति क्यों है। इतनी खटपट और झंझट कौन करे ? इसलिए हम भी जैसा चलता है उसी तरह चलने देते हैं। ऊपर दिए गए प्रसगों और विवरणों से भारत में ऐतिहासिक भवनों के सम्बन्ध में नये-नये तथ्यों के प्रकाश में आने पर भी बड़े आराम से आंखें मूंदकर मुस्लिम तुष्टीकरण के पक्षपाती लोगों द्वारा किस तरह कपोलकल्पित रट-रटाया असत्य अज्ञ प्रवासियों के गले उतारा जाता है यह स्पष्ट सिद्ध होता है। मांडवगढ़ के सारे भवनों को भी मुसलमानों द्वारा बनाये गए हैं ऐसा कह दिया जाता है जबकि वास्तव में वे सभी भवन हिन्दू परमार आदि क्षत्रियों के वंशजों द्वारा बनाये गए हैं। मुसलमानों ने तो उनको नष्ट-भ्रष्ट कर दरगाहों कब्रों, और मस्जिदों के रूप में उनका दुरुपयोग ही किया है।

वर्तमान अजमेर पूर्वकाल का अजय मेरु है। वहां तारागढ़ किला, उसके पास मोइनुद्दीन चिश्ती फकीर की तथाकथित कब्र, अढ़ाई दिन का झोंपड़ा कही जाने वाली कब्र, शाहजहां के नाम पर चढ़ा हुआ अनासागर तालाब, अकबर के नाम चढ़े शहर के मध्य भाग के प्राचीन हिन्दू मन्दिर और महल—ये सब इस्लाम के आगमन के पूर्व के हिन्दू निर्माण होते हुए भी बड़े आराम से मुसलमानों ने बनाये ऐसे कहा जाता है और यह सत्य जनता से बड़ी सफाई के साथ छिपाया जाता है। असत्य का यह दुष्ट चक्रव्यूह तोड़ने के लिए सुविज्ञ भारतीयों ने एक साथ मिलकर यदि अभिमन्यु के समान पूर्ण शक्ति लगाकर प्रयत्न नहीं किया तो सरकारी और निजी द्विगुणित साधनों-स्रोतों द्वारा यह ऐतिहासिक झूठ सब लोगों के मन, बुद्धि और विचार शक्ति को इसी तरह दूपित करता रहेगा। इस दुष्ट चक्र को तोड़ने का एक ही उपाय है। इस सम्बन्ध के साहित्य का अधिक से अधिक प्रकाशन हो और अधिक से अधिक लोग इस संशोधित नवीन साहित्य को पढ़ें। ▭

सम्पादक, मुद्रक व प्रकाशक
पण्डिता राकेशरानी द्वारा जन-ज्ञान मुद्रणालय, दिल्ली-३६ में छपा।

23 आयुर्वेदिक जड़ी बूटियों से बनाया हुआ
दाँतों के लिए

प्रतिदिन प्रयोग करने से जीवनभर दांतों की प्रत्येक बीमारी से छुटकारा। दांत दर्द, मसूड़े फूलना, गरम ठंडा पानी लगना, मुख-दुर्गन्ध और पायरिया जैसी बीमारियों का एक मात्र इलाज।

सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स

महाशियां दी हट्टी (प्रा.) लि

9/44 इण्ड. एरिया, कीर्ति नगर, नई दिल्ली-15 फोन : 539609,534C

हर केमिस्ट व प्रोविज़न स्टोर्स से खरीदें।

जन-ज्ञान (मासिक) D—C—201/Regd. No. 107119/65

वेद मन्दिर पो० आ० अलीपुर दिल्ली-३६

हरी सिंह नलवा